

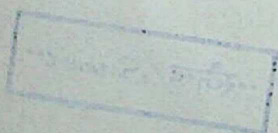
विमल विमर्श



कृष्णा गुप्ता







विमल विमर्श



कृष्णा गुप्ता

प्रकाशक

तरुण प्रकाशन

26 बी/बी गान्धी नगर

VIMAL VIMARSH

by

KRISHNA GUPTA

ISBN 978-81-928459-0-6

प्रकाशक	:	तरुण प्रकाशन
प्रकाशन वर्ष	:	2013
सर्वाधिकार	:	कृष्णा गुप्ता
मूल्य	:	₹ 150 (Rs. One hundred fifty only)
मिलने का पता	:	26 बी/बी गान्धी नगर
मुद्रक	:	क्लासिक प्रिंटर्ज, बाड़ी ब्राह्मणा, जम्मू (M) 94191-49293

मैं अपने पति श्री केवल रत्न गुप्ता जी की अनुगृहित हूं जिनकी छत्रछाया में जीवनयापन करके कुछ गहन विषयों में आत्म चिंतन कर सकी। विषय गहन से गहन हैं पर मेरा अवगाहन नहीं है, जो कुछ मिला, शब्दों में रूप देने का प्रयास किया, उसके लिए परम प्रभु का कोटि-कोटि धन्यवाद ।

समर्पण

ज़िन्दगी यदि फूलों की सेज होती तो हम भी खाते-पीते, जागते-सोते और मर जाते। जिन्दगी गंगा-यमुनी, सुख-दुःखों में से गुजरती रही तो कई पुष्प अंजलि में भगवान ने थमा दिए। जिन्हें काव्य के रूप में भी प्रवाहित किया और गद्य में भी समर्पित किया। आज स्वयं ही इन छोटी-छोटी कृतियों को देख कर थोड़ा-सा सन्तोष होता है। फिर भी जानती हूँ जो पाना चाहती हूँ उसे अभी नहीं पा सकी। अतः यही वरदान प्रभु से मांगती हूं कि मानव जन्म ही फिर देना और ज्योतियों में परम ज्योति की तरफ ही निरन्तर मेरे कदम ले जाना। मातृशक्ति ने जो शुभ-विचार दिए उनके लिए, उनकी पावन स्मृति को मेरा शत-शत नंमन। उसी स्वर्ग में स्थित पूज्य माँ को यह भेंट समर्पित।

–कृष्णा



प्रियम्वदा वेद भारती

द्वेवचसी

मनुष्य एक विचारशील प्राणी है। विचार उत्कृष्ट हो यह बहुत ही आवश्यक है। निकृष्ट विचार व्यक्ति को निकृष्ट से निकृष्ट बना सकते हैं और वहीं उत्कृष्ट विचार व्यक्ति को उत्कृष्ट से उत्कृष्टतम बना सकते हैं। उत्कृष्ट विचार मित्र की भान्ति व्यक्ति की रक्षा करते हैं और निकृष्ट विचार शत्रु की भान्ति व्यक्ति को निरन्तर परास्त करते रहते हैं। इसलिए विचार ही हमारे वास्तविक शत्रु या मित्र हैं। इसी तथ्य को दृष्टि में रख कर श्री मद् भगवद्गीता में कहा गया :-

उद्धरेदात्मतात्मानं नात्मानमवसाद्धयेत्
आत्मेव हयात्मनो बन्धुरात्मेव रिपुरात्मन्: गीता (६/५)

मनुष्य अपने उद्धार या पतन का जिम्मेदार स्वयं है। अतः आत्मा के उद्धार हेतु मनुष्य सदा प्रयत्नशील रहे, कभी भी ऐसा चिन्तन न करे जिससे वह स्वयं अवसाद ग्रस्त हो जाए। संसार में विचरण करने वाले बाह्य मित्र या शत्रु मात्र सहयोग प्रदान करते हैं। किन्तु विचारों की उत्पत्ति तो वस्तुतः अन्तर-जगत में ही होती है और उन अच्छे बुरे विचारों का मूल कारण है जीवात्मा के अपने अच्छे बुरे संस्कार। अच्छे बुरे मिश्रित संस्कारों का परिणाम है मनुष्य जीवन और जब बुरे विचार निर्वीजता को प्राप्त होने लगें, अहिंसा, मैत्री, करुणा, मुदिता, समभाव, सहृदयता, साम्मस्थ आदि गुणों का रूप होने लगे तो समझिये चित्त निर्मल हो चुका है। चित्त की निर्मलता से मोक्ष की दुर्गम यात्रा भी सुगम हो जाती है। वेद का आदेश है

तन्तुं तत्वन् रजसो भानुमन्विहि
ज्योतिष्मवः पयो वक्ष धिया कृतम् (ऋग्वेद)

संसार के ताने बाने को बुनने वाले हे मनुष्य, अपने पूर्वजों द्वारा निर्दिष्ट प्रकाश युक्त मार्गों का अनुसरण करें। प्रकाश युक्त मार्ग बनाने का सामर्थ्य जिनके पास नहीं है वह



अनुसरण मात्र करें। पर जो बनाने का सामर्थ्य रखते हैं वह प्रकाशमान मार्गों का सृजन भी कर सकते हैं। निःसन्देह काव्य का सृजन एक कठिन मार्ग है किन्तु जहां सरस्वती की स्वतः अविराम निर्झरणी प्रवाहित हो रही हो वहां कठिन क्या? वह तो प्रभु का साक्षात् प्रसाद है। वेद तथा वैदिक संस्कृति के प्रति दृढ़ अनुराग रखने वाले अद्भुत प्रतिभा की धनी विदुषी माता कृष्णा ऐसी ही दिव्य विभूति हैं। जिनकी ज्ञान धारा, काव्य धारा समग्र रूप से प्रवाहमान रहती है। आपने अब तक माँ भारती की सेवा में मनन धारा इन्द्र धनुष, उच्छवास, चिन्तन सुधा तथा दिव्य क्षण जैसे सुन्दर पुष्प अर्पित किए और अब अपने नवीन पुष्प 'विमल विमर्श' के सौरभ से समाज को सुरभित करने जा रही हैं।

इस पुस्तिका में माता जी कहीं मुक्ति बन्ध, विद्या अविद्या, मन आदि की चर्चा करते-करते दार्शनिक व्याख्या में लीन हो जाती हैं तो कहीं याचक वह दाता, प्रकृति आत्म, परमात्मा, मुझे अपनी शरण में ले लो जैसे लेखों में अध्यात्मिक विवेचन करती दिखाई देती हैं तो कहीं जन आन्दोलन अन्ना हजारे, सरकार की प्रतिहिंसा जैसे लेखों में राजनीति की विवेचन में व्यग्र हो जाती हैं।

पूज्य माता जी शतायु हों और इसी प्रकार माँ भारती की सेवा करते हुए समाज का मार्ग दर्शन करती रहें यहीं प्रभु से बारम्बार याचना है।

प्रियम्वदा वेद भारती
गुरुकुल आर्य कन्या विद्या पीठ
नजीबाबाद
विजनौर (उ.प्र.)

सुश्री प्रियम्वदा वेद भारती जी पाणिनी कन्या महाविद्यालय वनारस की स्नातिका हैं। अपने नाम को धन्य करती हुई वह वेदों की विद्या की पण्डिता हैं। संस्कृत, संस्कृति और वैदिक शिक्षा का प्रचार, प्रसार करने हेतु नजीबाबाद विजनौर में उनका अपना गुरुकुल है। ऐसी विदूषी नारी रत्न को पाकर हमारा देश और हम धन्य हैं। मेरे निवेदन पर उन्होंने मेरी इस छोटी सी पुस्तक पर अपने विचार व्यक्त करके हमें गौरवान्वित किया। परम पिता परमेश्वर ऐसी नारी रत्नों को अक्षुण्ण रखें। भावी सन्तानों को उनका नेतृत्व मिलता रहे। मैं उनके इस स्नेह के लिए उनका धन्यवाद करती हूं।

कृष्णा गुप्ता



विषय सूची

विषय	पृष्ठ संख्या
1. ओ३म् हिरण्य गर्भः	14
2. हम याचक वो दाता	15
3. गति	17
4. उषा काल का स्तवन	18
5. सृष्टि जब जागी	19
6. मुक्ति किससे	21
7. धन का सत्यानाशी रूप	24
8. हरि व्यापक सर्वत्र समाना	26
9. ज्ञान का दीया	30
10. नयी भोर प्रकाश की ओर	32
11. मन और .आत्मा	35
12. प्रकृति आत्मा परमात्मा	38
13. व्यक्ति निर्माण	40
14. अभिन्न मित्र भगवान	43
15. विज्ञान का प्रकृति पर प्रकोप	46
16. संसृति भगवान का रूप	48

17.	भगवान किसके	50
18.	जानना और मानना	54
19.	मूर्ति पूजा	56
20.	अहम् निर्विकल्पों निराकार रूपों	61
21.	आत्मा शरीर धारण क्यों करती है	63
22.	इन्द्रियों के घोड़े मन का सारथी	66
23.	एक अचल से सब चलायमान	69
24.	आलम्बन	72
25.	पूर्व संस्कार	74
26.	महान अतीत वर्तमान की नींव	76
27.	गणेश क्या है	78
28.	देवासुर संग्राम	82
29.	आत्मा कहां-कहां	85
30.	आशा किरण	88
31.	साधु समाज कैसा हो	91
32.	वृद्धावस्था	93
33.	हमारा आचरण सूर्य और चाँद जैसा हो व्यवस्था परिवर्तन	95
34.	वैदिक शिक्षा	99
35.	एक विहंगम् दृष्टि	101
36.	साधु समाज	105

37. जमाने के साथ 107

38. गुरू 109

39. पागल प्रेमी 112

40. जीवन कैसे चलाएं 114

41. पारिवारिक एकता 116

42. शाबाश 118

43. चेतना 120

44. सबसे बड़ा प्रश्न चिन्ह 122

45. छिन्न भिन्न पारिवारिक जीवन 125

46. संन्यासी योद्धा 129

47. प्रभु पूर्ण है 131

48. एक ईश्वर की आराधना 133

49. आत्मा के सफर 136

50. वर्तमान स्थिति 138

51. धारा के विरुद्ध 141

52. मैं ईश्वर का, ईश्वर मेरा 143

53. ईश्वरीय सृष्टि की जीवन्तता 145

54. बाहर और भीतर 148

55. विश्वास 151

56. कर्म का निर्धारण 153

57. संग कैसा क्यों 155

58. व्यवहार और कर्त्तव्य 157

59. लालच की भावना 160

60. हमारा सरोकार 161

61. ब्रह्म निरूपण 164

62. सत्संगति 167

63. कतम बन्दारू 169

64. ईश्वर की कृतियां 172

65. उपदेशक संहिता 174

66. शिव संकल्पमस्तु 176

67. सङ्गच्छध्वं संवदध्वम् 179

68. लेखक 181

69. आज की पुकार 183

70. ईश्वर क्या नहीं करता 187

71 मुक्ति निबन्ध 189

72. कर्म से कर्म को काटा जाता है 191

73. मन का सफर 193

74. उपसंहार 195

संपादकीय

'विमल विमर्श' उन विचारों का संग्रह है जो अध्ययन से, सत्संग से निरन्तर चिन्तन से हमें प्राप्त होते हैं। अपने विचारों को किसे सुनाएं ? कोई नहीं तो स्वयं को ही सुना लें। तो यह विमर्श भी अपने साथ ही है। अपने साथ जो हम विमर्श करते हैं वह बिल्कुल मौलिक नहीं होता उस पर पढ़ी हुई पुस्तकें, विद्वत्जनों के प्रवचन तथा व्यवहार में जो कुछ हम सीखते हैं सबका मिश्रण होता है। जिससे विचार परिपक्वता आती है हम आगे का अपना जीवन कैसे चलाएं इसकी सूझ भी मिलती है। मेरी तरह बहुत से लोग हैं जो ऐसा सोचते समझते तथा मनन करते हैं। पर फिर भी हम कोई रामदेव, कोई परमहंस, कोई श्री श्री नहीं बन पाते। वास्तव में अभी हमारी यात्रा अधूरी है। अभी हम पूरी तरह पके नहीं। अभी कोई कदम उठाने से पहले सोचते हैं कहीं ठोकर न खा जाएं। देश में एक अन्ना हजारे खड़े होते हैं तो उनके विचारों से सहमत करोड़ों की जनता उनके साथ आकर खड़ी हो जाती है। सबको एक संबल मिल जाता है जिसके साथ चलकर हम सब एक ताकत बन जाते हैं। यह हमारे विधि निषेध, यह हमारी आन्तरिक कमजोरियां, यह हमारी मजबूरियां जब तक हम अपने अन्दर से मजबूत न हो जाएं, समाप्त नहीं होतीं। पर एक सबल आधार मिलते ही सब उस ताकत से ऊर्जा पाने लगते हैं।

हम आज क्या हैं उससे हमें आगे बढ़ना है अपनी ऊर्जा को बढ़ाना है। अपने चरित्र को सुदृढ़ करना है। हम निरन्तर चलते रहें तो हम में से ही कल के गांधी, अन्ना, रामदेव, दयानन्द सब पैदा होते रहेंगे। इसलिए निरन्तर साधना की हमें जरूरत है जिससे हम सदा जागरूक रहें और अपने आगे के मार्ग को संवारते रहें। जीवन का एक-एक दिन एक-एक पृष्ठ बन जाता है। कभी कोई अच्छा कार्य कर पाते हैं तो वह एक इतिहास लगने लगता है। यदि जीवन के सारे पृष्ठ सुन्दर बन जाएं तो हमारा जीवन धन्य हो जाए। उत्तम विचार का संकलन अपने लिए भी उपयोगी है और औरों के लिए भी। और कोई विचार हमारे से बचा न रहे इस ओर भी हमारे कदम आगे ही आगे बढ़ते रहें तो अवश्य हम एक सौन्दर्यमय जीवन का सृजन कर सकेंगे।

प्रकृति, आत्मा और परमात्मा के विषय सोचने समझने के लिए अपार सामग्री है, अनेक कार्य हैं जो हमारे हाथों को शुद्ध बनाए रखें, हमारी कथनी करनी में एकता

हो। इन सबके लिए विचारों का संग्रह 'विमल विमर्श' एक मार्ग दर्शन अपने लिए भी हो जाता है। अपनी पुस्तक को ही स्वयं पढ़ने पर हम अपने मार्ग पर स्वयं को सुस्थिर करते हैं। वेद ने यह कहा, गीता ने यह कहा, रामायण ने यह कहा और हमारे लिए एक सेतू बन गया। महापुरुष ने कहा सत्य पर मोहर लग गई। हमने उसे दोहराया। स्वयं का चरित्र निर्दोष करने का बल मिला। कोई इसके विपरीत बात करें तो अन्तर से फिर विमर्श होगा– क्या यह ठीक है ? नहीं है तो उसे मानने से इन्कार कर सकते हैं। बाकी हर एक जीवन की परिस्थितियां अपनी–अपनी होती हैं। उनमें ठीक निर्णय क्या है इसे सोचने का हमें पूरा अधिकार है। क्योंकि ईश्वर ने यह सृष्टि विशेष कर मानवीय सृष्टि किसी डिक्टेटर की तरह नहीं बनाई। अगर ऐसा होता तो किसी को स्वतन्त्र सोचने विचारने का हक ही न होता। सब यन्त्रवत होता। पर ऐसा नहीं है, कर्म करने की शक्ति भगवान ने दी, साथ में सोचने समझने की प्रज्ञा भी दी। कर्म में हमें स्वतन्त्र रखा और जब कर्मों के निर्णय का क्षण आया तो वह नियन्ता स्वयं खड़ा हो गया। कोई अन्याय उनके राज्य में होना नहीं है। आप हिन्दू हैं या मुसलमान हैं या कुछ और हैं। ईश्वर के राज्य में आप एक जीवात्मा हैं। हम जीवात्मा को उस पिता पर जितना अधिकार है गलत कार्य करने पर उसकी सजा देने का भी उसे और केवल मात्र उसे ही अधिकार है। न किसी को एक पैसा कम न किसी को एक पैसा अधिक।

तो फिर हम उस न्यायकारी को समझने का प्रयत्न करें, उसकी शासन प्रणाली को जानें। उसके पालनहार तरीकों को पहचानें यह हम सबका पावन कर्त्तव्य है। वह एक नियन्ता कहीं गलती नहीं करता। हम दिन प्रति उसको देख, उसके जैसा बनने करने की बात सोचें तो हम कभी न कभी उसकी प्रतिमूर्ति बन जाएंगे। तब हम अपने नहीं उसके बल पर बात करेंगे। उसकी ऊर्जा से ओजस्वी होंगे। तब हमारी वाणी उसकी वाणी होगी। हम माधवी प्रकृति की गोद से उसकी गोद में चले जाएंगे। बस इसी प्रयत्न में हमारा हर कदम चलता रहे, चलता रहे, मंजिल अवश्य आएगी। यह पुस्तक बड़ी सीधी सादी भाषा में तैयार की गई है और एक आम व्यक्ति के मन में उठने वाले प्रश्नों को सामने रखकर ही हर लेख को तैयार किया गया है। बड़े मनोयोग से हर बात को आसान ढंग से कहा गया है। अतः हर व्यक्ति जिसे जीवन के विषय में कुछ जानने की जिज्ञासा होगी वह इस पुस्तक से लाभ उठा सकेगा। मेरा प्रयास सफल हो गया तो समझूंगी भगवान की कृपा है।

कृष्णा गुप्ता

वन्दना

मैंने नर्तन करते देखा उस महानतम जगदीश्वर को
जन जन में विलसते देखा परम शक्ति उस परमेश्वर को
पाषाणों से अमृत झरता नीर धार संगीत सृजतता
इन पार्थिव नयनों से देखा नर्तन निरत कबीश्वर को
मैंने नर्तन करते देखा उस महानतम जगदीश्वर को
किस माध्यम से अपनी इच्छा वह जगती को दर्शाता है
अपनी कृपा के कई मुहाने कहां-कहां से ले आता है
अमृत पर अंकुश लगा कर देखा विजयी ऋतेश्वर को
मैंने नर्तन करते देखा उस महानतम जगदीश्वर को
और हुआ विश्वास सुदृढ़ जब जागृत हो गए जड़ चेतन सब
कौन पराजित कर पाता है जन गन शिव गण बन जाते सब
सुनो युद्ध की रण भेरी को शंख नाद करते ईश्वर को
मैंने नर्तन करते देखा उस महानतम जगदीश्वर को
आज धन्य धरती माता है वीर जिसे सिंचित कर बैठे
अमर हो गई उनकी शहादत अमूल्य प्राण है जो बैठे-बैठे
युग पलटा कैसे खाता है साक्षी बना सर्वेश्वर को
मैंने नर्तन करते देखा उस महानतम जगदीश्वर को



ओ३म हिरण्य गर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत। सदा धार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।

ब्रह्म का अण्ड यह पूरा ब्रह्माण्ड। कहीं नहीं मिलता ओर छोर, कोई नहीं नाप सकता इसकी परिधि, कोई नहीं जान सकता इसका पूर्ण विवरण। उसी अण्ड कोश में है समाया हुआ द्यौ, अन्तरिक्ष, पृथ्वी, पाताल, सब कुछ इन्हीं सब कुछ में है जीव सृष्टि का अनन्त विस्तार पैदा हुआ हर जीव आश्चर्य से देखता है कहां आ गया मैं, क्या हूँ मैं, कैसे हूँ, क्यों हूँ ? उत्तर मिलता नहीं, यहीं से खोज शुरू होती है। आत्मा की खोज में निरत है हर प्राणी अपने-अपने ढंग से।

मन्त्र कहता है एक ज्योतिर्मय अद्भुत हिरण्य गर्भ है जिस में युग युगादि से, जाने कब से पूरा ब्रह्माण्ड फैला हुआ है। जिसमें हम सब हैं। यह भगवान का गर्भ है, कोख है। प्राणी इसमें पैदा होते हैं, मरते हैं, फिर पैदा होते हैं, फिर मरते हैं यह क्रम निरन्तर चलता रहता है। जीवात्मा बार-बार नये परिधान ओढ़कर इसी में चक्र लगाता रहता है। परन्तु इस सम्पूर्ण विश्व का स्वामी वह एक ही है वही सब में समाया है, वही सबको धारण कर रहा है, पाल रहा है। अपने न्याय चक्र में कर्मानुसार सुख-दुख दे रहा है। उसी में ओतप्रोत प्राणी सोचता है-किसकी उपासना करूँ ? उपासना करना तो स्वभाव है, यदि और कुछ नहीं तो मनुष्य अपने आस-पास फैली प्रकृति की ही ओर आकर्षित होकर उसी को अपना ध्येय बना लेता है पर मन्त्र के इसी प्रश्न में उसका उत्तर छिपा है 'कस्यै देवाय हविषा विधेम' (कस्मै) किसकी (कस्मै) उसी सुख स्वरूप की, उसी देव की हबि होकर उपासना करूँ ? क्यों करूँ ? इसलिए कि वही हमें बनाता है, पालन पोषण करता है, हमारे लिए सब कुछ देता है, हमें ज्ञान देकर कृतार्थ करता है। सारी लीला उसी की है। वहीं हमारा सहारा है, आसरा है उसी की कृपा के हम पात्र बने, उसी को ध्यायें। वह हमारे भीतर बाहर ओतप्रोत है। उसकी आराधना करके हम दैहिक दैविक अध्यात्मिक सभी तापों से मुक्ति पा सकते हैं। उससे प्रेम करना ही हमारा परम कर्त्तव्य है यही हमारा सौभाग्य है।



हम याचक वो दाता

हम साधारण लोग ईश्वर से कैसे सम्बन्ध रखते हैं। कोई कहे कि मैंने कभी ईश्वर से कुछ नहीं मांगा तो बहुत बड़ी बात है, क्योंकि आमतौर पर हम हर समय ईश्वर से कुछ न कुछ मांग रहे होते हैं। मुझे बेटा मिल जाए। बेटा अच्छा स्वास्थ्य रहे। बेटा सुयोग्य हो, हे ईश्वर इसे आयु देना, स्वास्थ्य देना, विद्या देना, वृद्धि देना, धन देना, पत्नी देना, सुख देना, काम पर लगाना। लड़की हो तो गुणवती हो, पढ़ाई में अच्छी हो। सुन्दर हो, अच्छा घर बार मिले, पति अच्छा हो, गृहस्थी अच्छी हो। पति क्रोधी न हो। ससुराल वाले ठीक हों। बहू आई हो तो आज्ञाकारी हो, मीठा बोलने वाली हो। खाना बना रहे हैं तो फुलका अच्छा बने। सब्जी स्वाद हो, खाने वाले गुस्से में न आएं। बाहर गए हैं तो देर हो जाने पर कोई दुर्घटना न हो आदि-आदि अनेकानेक फरमाईशें हम परमात्मा से हर पल करते रहते हैं। मानो परमात्मा न हुआ कोई मुण्डु हो गया। फिर भी वह जगदीश्वर कभी गुस्सा नहीं करता, हर समय हर एक का छोटा या बड़ा कार्य सिद्ध करने में लगा रहता है। फिर हम उसके कितने शुक्रगुज़ार होते हैं ? यह भी सोचने की बात है। धन्यवाद तो उसका ही है जो हमारे लिए सब कुछ पैदा करता है। हमारी सारी प्रार्थनाएं सुनता है ? हमें जीवन देता है, हमें मार्ग दिखाता है और जो उसके रास्ते पर चलते हैं, उन्हें अपनी कृपा दृष्टि पर ले आता है। याचना हम उसी से कर सकते हैं ऐसा सामर्थ्य और किसी में है भी तो नहीं। जब हम इस संसार में आए हैं तो हमें उसकी दया दृष्टि के बिना जीना भी कैसे होगा। राजा से रंक तक सब उसके आगे भिखारी हैं। बड़े-बड़े बादशाह भी उसी की कृपा की राह जोहते हैं।

बादशाह अकबर की बात सुनाते हैं कि एक बार वह कहीं गया हुआ था। उसे कुछ धन की आवश्यकता आ पड़ी तो एक ग्रामीण से उसने सहायता के लिए पूछा। ग्रामीण ने उसे जितना धन चाहिए था दे दिया। बादशाह ने कहा जब उसे कोई जरूरत पड़े तो बादशाह अकबर के पास आना। ग्रामीण ने हां भर दी। कुछ समय बीतने पर इस ग्रामीण को कोई संकट आ गया। उसने सोचा बादशाह अकबर ने उसे सहायता का वचन दिया था। उसी के पास जाता हूँ। वह गया। बादशाह नमाज़ पढ़ रहा था और अंजुली बांधे बैठा था। ग्रामीण देखता रहा, प्रतीक्षा करता रहा। जब

बादशाह नमाज पढ़ चुका तो उसने आँखे खोली और आवभगत के बाद पूछा कहिए, कैसे आना हुआ। ग्रामीण बोला– आया तो था कुछ जरूरत से हाँ परन्तु मैंने देखा कि आप पहले ही किसी से मांग रहे हैं। अब सोचता हूँ कि जिससे आप माँगते हैं मैं भी उसी से मांग लूंगा और यह कह कर वह ग्रामीण चला गया इस तरह सारा संसार याचक है धनवान बस एक वही है। उसी से सब की आवश्यकताएं पूरी होती हैं। वही सबका परमदाता है।



गति

गति ही जीवन है गति प्रकाश है, गति ऊर्जा है, गति शक्ति है वेद कहता है चरैवेति चरैवेति। संसार में जितने देवता हैं सबसे शक्तिशाली, तेजस्वी, परोपकारी, जीवनदायी, सर्वश्रेष्ठ देवता भगवान भास्कर है। कहते हैं कि इस ब्रह्माण्ड में ऐसे कई सौर मण्डल हैं। इस सौर मण्डल की तरह। दूसरे सौर मण्डलों में भी ग्रह नक्षत्र उपग्रह हैं। अपने-अपने सूर्य के गिर्द सब चक्र लगाते हैं निरन्तर अवाध, अथक गति हैं और नियम में बन्धी-बन्धी। यह सारे सौर मण्डल अपने-अपने ग्रह नक्षत्रों के परिवार सहित स्वयं भी गतिमान होंगे ऐसा सोचा जा सकता है। गति आवश्यक है बिना गति के सूर्य में भी यह ऊर्जा यह प्रकाश, यह जीवनदायिनी शक्ति, यह दैविक परोपकार की क्षमता कैसे हो सकती है, तेजस्विता कैसे आ सकती है! सूर्य गति का सबसे बड़ा और उत्तम उदाहरण है सूर्य की प्रेरणा से ही प्रकृति उठती है। गति के कारण इस समय के साथ-साथ सूर्य कई रूप बदल लेता है कभी ऊषा की सुहावनी वेला, कभी तेजस्वी रूप धारण करता भास्कर, कभी दोपहर की प्रखर किरणें, कभी सन्ध्या का मधुर-मधुर समय, कभी सुखदायिनी रजनी, कभी चन्द्र की बदलती कला कभी तारों का झिलमिलाता अद्‌भुत संसार, बीज से निकलती कौंपलें, लतर-लतर बढ़ती क्यारियां, मुस्कराते फूलों की रंग विरंगी सज्जा, घास पात चरते प्यारे-प्यारे पशु शावक, रम्भाती गाय, अनेकानेक पशु पक्षी, जलचर, थलचर जीव, जुगनू से हाथी पर्यन्त जीव सृष्टि एक सूर्य के होने से सब जीवनमय, संगीतमय, कलामय, अद्‌भुत मनोहारी, विचित्र विविध रूप धारी हमारे नयनों के सामने फैली है और प्रति पल हमें गति की प्रेरणा दे रही है। वह आशुमाली भगवान भास्कर स्वयं गतिहीन कैसे हो सकता है। सूर्य की गति से सब को गति मिलती है सूर्य गति का सबसे विशाल स्रोत है। ऐसे ही कितने सौर मण्डल में घूमते होंगे अपना-अपना परिवार लेकर। जो हमारे ब्रह्माण्डों में और सूर्य में घट रहा है, वह सारे सौर मण्डलों में घट रहा होगा। हमारी अल्प दृष्टि अनुमान लगा सकती है केवल। पर गति एक महान सत्य है गति का स्वामी स्वयं वह शक्तिमान भगवान है उसकी इस विशाल रचना का पारावार पाना कठिन है। नेति नेति कह कर सब महान ज्ञाता भी मौन हो जाते हैं। फिर हमारी विसात तो जुगनू के समान है कैसे गाएं उसकी अपार महिमा को, अपार शक्ति को। हम तो उसकी महानता को केवल मस्तक झुका सकते हैं। ऊँ तत्सत्



उषा काल का स्तवन

अश्वावति गोमितीर्नउषासे वीरवती; सदमुच्छन्तु भद्राः।
घृतं दुहाना विश्वतः प्रर्पाता यूयं पाक स्वस्तिभि, सदा।

यह सुखकारिणी उषाएँ अश्वों वाली, गौओं वाली और वीरों वाली होती हुई हमारे लिए सदा प्रकाशित होती रहें। यह दुग्ध घृत आदि सब पदार्थों को दूहती हुई सब ओर समृद्ध प्रबुद्ध होती हुई हमारा अपने कल्याणों से सदा रक्षण संरक्षण करें।

हर प्रातः बेला ऊषा काल में बहुत सी समृद्धि लेकर ही आती है। अश्व समृद्धि का द्योतक है। सदा उद्दत रहता है हर ऊषा काल आलस्यहीन कर्मण्यता लेंकर आए गति, लेकर आए, हम प्रबुद्ध होकर अपने कर्तव्य कर्मों में लग जायें। पुरुषार्थ से मनुष्य समृद्ध होता है। रात्रि बीतते-बीतते ऊषा का आगमन कितनी समृद्धि से छटा को भर देता है न जाने कब कैसे कोंपले निकल आती हैं, पेड़ों पर पत्ते फूल फल बढ़ जाते हैं, गाय दूध दही घी से हमारे भण्डार भर देती है, सब कुछ खिला खिला, बढ़ा बढ़ा देखकर चित्त प्रसन्न हो जाता है। यह ऊषा वीर बेटों की माता जैसी सदा कल्याणमयी होती है। हम अपने प्रियतम भगवान से ऐसी ऊषायों का प्रति दिन स्वागत करें, अर्चना करें, पूजन करें, हवन करें और यह ऊषा की बेलाएं हमारे लिए सदा इसी प्रकार धन धान्य से परिपूरित करके हमारे भण्डार भरती रहें, जिससे हमारे परिवारों में, प्रजा में, घर-घर में आनन्द का वातावरण बना रहे और मानव जाति का कल्याण होता रहे। ऊषा की सुहावनी बेला में वायु जिस अमृत को लेकर हमारे बीच आती है उससे सुख सौभाग्य स्वस्थ सब बढ़ जाते हैं। मनु तेजस्वी होता है। ऊषा काल में प्रभु चरणों में ध्यान भी सहज ही लग जाता है। यह सबसे बड़ा सौभाग्य है।



सृष्टि जब जागी

हिमगिरी के उत्तंग शिखर पर बैठ शिला की शीतल छाँह, एक पुरुष भीगे नयनों से देख रहा था प्रलय प्रवाह ऊपर हिम था, नीचे जल था, एक सघन था, एक तरल दोनों में ही एक तत्व था चाहे जड़ था या चेतन, जय शंकर प्रसाद जी की कामायनी प्रारम्भ से ही प्रलय के बाद जीवन का चित्र खिंच रही है। प्रलय में समाप्त होते सृष्टि में उसकी तड़प को महसूस करते हुए मनु शान्त हैं। स्मृति में फिर से नयी सृष्टि के लिए विधान लिख रहे हैं। मृत्यु के बाद जीवन का नव सृजन आवश्यक है। जीवन के लिए नव विधान आवश्यक है। आदि सृष्टि के मानव अतीत से अपरिचित नहीं हैं तभी तो अमैथुनी सृष्टि के मानवों ने मानव मात्र के लिए ज्ञान विज्ञान को रच के रख दिया वेदों के रूप में। प्रथम मानव ईश्वरीय सत्ता को कितनी तीव्रता से पहचानते थे। कितनी स्वष्टता से जानते थे और कितनी श्रद्धा से मानते थे, कितनी स्पष्ट ईश्वर की आवाज़ को सुनते थे। उसी श्रुति को स्मृति में बिठाकर आने वाली सन्तति के लिए वेदों के रूप में संजोकर रख दिया। हम यह मानकर चलें कि शिव, विष्णु, ब्रह्म और अन्य देवगण अमैथुनी सृष्टि के मानव थे सम्पूर्ण तथा प्रबुद्ध, तो हम अपने परम लक्ष्य को स्पष्ट देख सकते हैं। हमारे भीतर वह सब कुछ है जो आदि सृष्टि में भगवान ने बनाया। उसी के आधार पर तो कहा गया 'यथा ब्रह्माण्डे तथा पिण्डे' वायु को नाग कहा उस वायु में लिपटा-लिपटा हर ग्रह नक्षत्र है। प्रकृति का कण-कण है। वेद कहता है तज दे मोह को, शोक को, मानव फिर प्रकृति माया के वशीभूत होकर शोक, मोह सुख-दुख, हानि, लाभ, यश, अपयश सब इसे प्रभावित करते हैं। माया के वशीभूत प्रकृति के ऐश्वर्य को लपकता है तो भूल जाता है अपने स्वरूप को। फिर कर्मों के पाश में बन्धा कर्मभोग चक्र में फंस जाता है, अपने स्वरूप से दूर चला जाता है। जाने क्या-क्या पाप कर्म कर डालता है। जो उसे भोगने पड़ते हैं। फिर दोष ग्रह नक्षत्रों के मत्थे मड़ देता है। ग्रह नक्षत्र तो सब जड़ हैं और ऐसे ही चल रहे हैं जैसे यह पृथ्वी चल रही है। उसी परम सत्ता के निर्देश में जिसके निर्देश में यह पृथ्वी चल रही है। मालिक तो सब का एक ही है। मालिक की आज्ञा के बिना वह ग्रह नक्षत्र क्या करेंगे। यदि हम उसका निर्देश नहीं मानेंगे तो वह किसी का भी हमारे कर्मों का फल देने भेज देंगे। उन बेचारों का क्या दोष। गलती का प्रारम्भ तो अपने से ही होता है, जो हम उल्टे-उल्टे कर्म करने लगते हैं। अब बख्शा लेंगे तो फिर कुछ देर बाद भुगतेंगे। भुगतना तो हमें पड़ेगा ही क्यों न अभी भुगत लें अथवा गलत काम करने से रुक जाएं।

वेदों में जो सम्बोधन ईश्वर के लिए आते हैं वही आत्मा के लिए भी आते हैं। क्योंकि हर आत्मा उसी ईश्वर रूप सागर से ही तो आती है। एक आत्मा ईश्वर का एक छोटा सा रूप है और परमात्मा पूरे ब्रह्माण्ड की आत्मा है। वेद कहता है भगवान के एक पाद में यह सकल सृष्टि है। एक पाद में सकल सृष्टि तो इस एक पाद के स्वामी का स्वरूप कितना वृहद्। उस वृहदाकार के आगे एक लघु कव्य विष्णु की क्या विसात। विसात है जब इस लघु काय में यह विष्णु आत्मा वृहद् कार्य को भर देती है। धारण कर लेती है तो वह वृहद कार्य लघु काय के भीतर बाहर ओतप्रोत हो जाता है, उसे अपना स्वरूप दे देता है। तब वह छोटी सी काया में भी विशाल अनन्त लगने लगता है। वही ब्रह्मा, विष्णु, शिव का रूप धारण कर लेता है। ऐसी शक्ति भगवान ने हर एक में भर रखी है। यह प्राणी के शरीर नाग पर शयन करता हमारा विष्णु सोया रहता है। प्रकृति लक्ष्मी बन पांव दबाती रहती है। दबते-दबते मनु भी नन्हा बना पड़ा रहता है। जरा सी चुभन होती है तो चिल्लाता है, रोता है, बिलखता है। यह किसी ग्रह नक्षत्र के कारण नहीं, अपने ही कृत कार्य से है। हमारा स्वरूप शिव है, शिव कल्याणकारी है। पर हम अज्ञानता वश उसे भांग पिला-पिला कर सुलाए रहते हैं, उलझाए रहते हैं। हमें मानव बनाकर ईश्वर ने रचना करने की ताकत दी कि उसके बनाए हर पदार्थ से हम नव सृजन करें। नवसृजन होता है तभी तो यह संसार प्रतिपल बदलता रहता है। पर मानव सृजन में भी स्वयं को ही जब इस संसार का स्वामी बनाने की होड़ में नाशक शस्त्र अस्त्रों को वृहद् रूप में संचित कर लेता है, तो उस महाबलशाली की शक्ति विरोध में उपस्थित हो जाती है। उनकी शक्ति के आगे कौन टिक सकता है। हारेगा तो लघु ही। भूलता भी लघु ही है, वृहद् नहीं 'वह तो चींटी के पग घुँघरू बाजे वह भी साई सुनता है।' फिर उस वृहद् से क्या जंग। जंग ही लड़ना है ता-ए-लघु अपनी कमजोरियां से लड़। स्वयं को जीतने का प्रयत्न कर। जिससे वह जगत नियन्ता तेरा मित्र, तेरा रक्षक, तेरा सहारा बनने को तेरे अंग संग ही तुम्हें मिल जाए। उसका सहारा मिल गया तो किसी और का सहारा नहीं चाहिए। उसका सहारा छोड़ दिया तो जिन्दगी के हर मोड़ पर सुनामी ही सुनामी मिलेंगे। दुःखों से बचने के लिए अकेला ही पर्याप्त है। कोई शनि, कोई मंगल कष्ट नहीं दे सकेगा। न ही कोई भय सताएगा। क्यों इस भ्रम में जीता है कि उस महाशक्ति से भी बढ़कर किसी की ताकत है

यो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठति
स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्टाय ब्रह्मणे नमः।।



मुक्ति किससे

अन्धन्तमः प्रविशन्ति ये ऽ विद्यामुपासते

ततो भूय इव ते तमो यऽउ विद्यायामरताः

वेद का मन्त्र कहता है कि जो अविद्या के तमस में घिरे हुए हैं बिना ज्ञान के प्रकाश के कर्म के सच्चे महत्त्व को न जानते हुए भौतिक सम्पदाओं हित कर्मों में निरत है वह तो बन्धन से घिरे हुए हैं परन्तु जो विद्या के प्रकाश से आवृत्त है और कर्म के महत्व को नकारते हैं वह उनसे भी अधिक बन्धन में है। विद्या और अविद्या दोनों ही आत्मा के कारण हैं। हम कुछ नहीं जानते हम उलटा जानते हैं या हम सब कुछ शास्त्रों को पढ़कर जान चुके हैं फिर भी हम बन्धन में है। हमें मुक्ति चाहिए किससे ? कुछ जानते नहीं महामूर्ख हैं। मूर्ख तो गुलाम होगा ही, पर सब कोई मुक्त होना चाहता है तो अज्ञान अन्धकार का पर्वत पार करना पड़ेगा। ज्ञान की तरफ कदम बढ़ाया कई प्रकार की विधायों को आत्मसात किया डाक्टर बनें, इंजिनियर बने, अर्थ-शास्त्रों का अध्ययन किया, राजनीति में निपुण हुए, कलाएँ सीखीं, खगोल विद्या का पूरा ज्ञान प्राप्त किया, भूगोल को जाना, मुक्ति मिली क्या ? हम और उलझ गए। जितनी जाला मकड़ी में बुना उतनी उलझ गई। तो क्या करें, पढ़ना लिखना छोड़ दें ? छोड़ दिया तो और अज्ञानता में ग्रस्त हो जाएंगे, निठल्ले हो जाएंगे, किं कर्त्तव्य मूढ़ हो जाएंगे। मुक्त तो नहीं ही होंगे। हम तो अपने इन शारीरिक कष्टों से भी मुक्ति की बात सोचते हैं और इसी कष्ट मुक्ति की धुन में कितना धन दौलत, घर मकान तामझाम इकट्ठा कर लेते हैं पर किसी को भी फिर भी ज्ञान नहीं मिला। न तो अज्ञानता में सुख है न ज्ञान में फिर मुक्ति कहां है। वेद का अगला मन्त्र है-

अन्य देवातु विंद्याघाऽ अन्य दा हुर विद्यादा इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ज्ञान का फल और है और कर्म का फल और है ऐसा हमें बुद्धिमान ज्ञानीजन खोल-खोल कर समझाते हैं। विद्या अध्यात्मवाद और अविद्या भौतिकवाद दोनों का अपना-अपना फल है। हम दोनों को समझें और ठीक ढंग से दोनों को जीव में धारण करें तो ही हम आत्म कल्याण के पथ को प्रशस्त कर सकते हैं। हम केवल एक पक्ष को लेकर जीवन को सफल नहीं बना सकते। सांसारिक विद्यायों को प्राप्त करके यदि हम अपनी आत्मा की ओर से बेसुध बने रहें तो यह भी अविद्या ही होगी।

और यदि हम अपनी आत्मोन्नति करने में लगे रहें परन्तु ईश्वर की बनाई इस सृष्टि की तरफ ध्यान न दें। दूसरों के सुख दुख को कल्याण को न समझें तो हमारी स्वार्थपरता हमें मोक्ष से वंचित रखेगी ईश्वर को समझने के लिए ईश्वर के बनाए संसार को समझाना होगा। ईश्वर की पूजा अर्चना धूप दीप से करके भी यदि उसकी बनाई सृष्टि से उदासीन रहें, किसी के दर्द की दवा न बने, कराहती मानवता से बेखबर रहें तो हमारी आत्मा हमें कचोटती रहेगी।

अगला मन्त्र है–

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदो भयं सह
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते

शरीर की रक्षा के लिए, जीवन यापन करने के लिए, भौतिक उन्नति के लिए, समाज सेवा के लिए दूसरों के सुख के लिए, देश के लिए जो–जो कार्य करने चाहिए सबको समझे करें तो कहते हैं जो दूसरों के जीवन की रक्षा करता है भगवान उसके जीवन की रक्षा करते हैं। इस तरह मनुष्य मानसिक तौर पर मृत्यु के भय को जीत लेता है। परन्तु ईश्वर प्राप्ति के बिना जीवन मुक्त होना कैसा ? हम सभी सद्ग्रन्थ पढ़ ले, वेद भी पढ़ लें तो भी हम मुक्त नहीं हो सकते, मुक्ति के लिए स्वयं को, अपनी आत्मा को पूर्णतया ईश्वरीय तत्व में विलीन नहीं कर सकें तो मुक्ति कैसी? विद्या को यहां हम सारे ज्ञान कोश को जान लेने मात्र से ही जोड़ लें तो भी विद्या का तत्व समझ में नहीं आ सकता। ईश्वर से आत्मा का योग हो जाना केवल जान लेने का विषय नहीं है। कबीर जी कहते हैं–

'जब मैं था तब तू नहीं
जब तूं हुआ मैं नाहीं।'

हम मुक्त होना चाहते हैं दुखों से, पीड़ा से, निर्धनता से, विकारों से। पर इन सबसे मुक्त होना तब तक तो हो ही नहीं सकता जब तक हमारी आत्मा का रुख न बदल जाए अर्थात् जब तक हमारा अपना आप उस कारण से, जिससे हम हैं न जुड़ जाए। जब तक प्रकृति के सम्पूर्ण दोषों से हम ऊपर न उठ जाएं मुक्ति का सवाल ही नहीं है। हमारे रक्त की एक बूँद हमारे प्राण का एक–एक श्वास भगवान् का न हो जाए हम मुक्ति को नहीं छू सकते। उसे हम अपना आप बना सकें यह आसान नहीं है युधिष्ठिर को गुरु ने सबक पढ़ाया। क्रोध मत करो। सब बच्चों ने दूसरे दिन सबक सुना दिया। युधिष्ठिर कहते हैं–याद नहीं हुआ। कई दिन ऐसा ही कहते रहे। एक दिन गुरु जी को गुस्सा आ गया कि जरा सा सबक याद नहीं हो

रहा इसे तो क्रोध में युधिष्ठिर को एक चांटा जड़ दिया। युधिष्ठिर बोले-गुरुजी याद हो गया। गुरु जी ने पूछा अब कैसे याद हुआ। युधिष्ठिर बोले - मार खाकर जब क्रोध नहीं आया तो लगा कि अब याद हो गया। यह तो बात थी क्रोध की, ईश्वर की प्राप्ति तो बहुत दूर की बात है। यद्यपि वेद कहता है।

अन्ति सन्ता न पश्याति अन्ति सन्ता जहाति
पश्य देवस्य काव्य न ममार न जीर्यति

वह हमारे इतने पास है कि हम उसे देख नहीं सकते। इतना हमारे में है कि हम उसे छोड़ नहीं सकते। उस प्रभु का महाकाव्य तो देखो कि जो न कभी जीर्ण होता है न कभी मरता है।

इतना हमारा अपना आप है पर हमारी अविद्या यही है कि अपने आप में समाए हुए उस देव को, उसकी महिमा को, उसकी लीला को हम न छू पाते हैं न देख पाते हैं। क्योंकि हमारे में कोई स्थान नहीं जो उससे खाली हो हम उसकी भीतर और बाहर फैली महिमा को देखकर आश्चर्य चकित हैं पर फिर भी उसे खोज रहे हैं और वह है कि अपनी ही बनाई इस प्रकृति की चकाचौंध में हमें भरमा कर रख रहा है। हम जब तक उसे न पहचानें, इस सारे जंजाल से मुक्त कैसे हों।

वह हमारे हृदय की गुहा में छिपा है उसे पा सकें तो हम नहीं रहेंगे वह ही रह जाएगा। बस यही तो मुक्ति है। पर जानते हुई भी हम अपने आप को शरीर समझकर इसी की सेवा सुश्रूषा में संलग्न हैं बार-बार भूलते हैं फिर याद करते हैं, पर फिर भूल जाते हैं। हम यदि ऐसे ही रहे तो मुक्ति का गीत गाते-गाते एक दिन इस शरीर को छोड़कर चल देंगे, नये बन्धन नये शरीर नये जीवन की ओर। यह नया जीवन हमारे कर्मों और विचारों का पुंज बनकर जाने कैसे शरीर में हमें पहुंचा देगा और फिर भव सागर की तराल तरंगों में डूबते उतरते जाने कितने युगों तक फिर भटकते रहेंगे इसी मुक्ति की तलाश में दर-दर ठोकरें खाते हुए।

हमारे समक्ष मुक्त जीवन जीने वाली विशेष कर भारत में ऐसी विभूतियां हो चुकी हैं और आज भी हैं जिनके सान्निध्य में मुक्ति का पाठ पढ़ने की चाह लेकर अगर हम अपने हृदय का पात्र खाली करके पहुंच जाएं तो ऐसे मुक्त पुरुषों का सान्निध्य हमें मुक्ति का मार्ग दिखा सकता है। हमारे लिए तो पात्र बनने की आवश्यकता है। शुद्ध पवित्र, उजला, स्वच्छ पात्र। बस जहां भी प्रभुवर को ऐसा पात्र मिल जाता है वह उसमें भीतर बाहर भर जाते हैं। फिर वह पात्र ही ऐसा हो जाता है कि उसके भीतर बाहर उस महादेव की सुगन्ध व्याप्त होकर उसे मुक्त बना देती है। ईशमय कर देती है यही तो है मानव का अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेने का सुस्वप्न।



धन का सत्यानाशी रूप

धन के प्रति आसक्ति मनुष्य को जीवन में नीचा गिराने का कार्य किस गति और किस बल से करती है यह राजनीति में तो देखने में आता ही है। जिसको जितना पद अधिकार प्राप्त हो जाता है वह इस धन के मोह में रसातल तक गिर जाता है। परन्तु कर्म के क्षेत्र में भी दौलत का सत्यानाशी रूप देखने को मिलता है सत्य साईं बाबा ने कितना यश कमाया, स्कूल, हस्पताल, शिक्षालय खोले। जो लोग पुटापर्ती जाते हैं वह रहने खाने की सब सुविधाएँ कहां पाते हैं और बाबा को धन्य-धन्य बोलते हैं। परन्तु बाबा के अन्तर्ध्यान होते ही धन दौलत की लूट खसौट शुरू हो गई। ट्रक भर-भर कर दौलत कहां गई। लाखों करोड़ों की सम्पत्ति चल और अचल एक सवाल सा मच गया। क्यों ?

दक्षिण के एक भव्य मन्दिर के छः तह खानों से ऊपर सम्पत्ति उपलब्ध होने की बात रोज़ समाचार पत्रों में देखने को मिलती है। क्यों जमा करते हैं यह सम्पत्ति मन्दिरों में ? इतने धन का जब कुछ उपयोग ही नहीं तो जमा करने से क्या लाभ? इतने अकाल पड़ते हैं, तूफान आते हैं वर्षा से तबाही होती है, दरिया के पानी से त्राहि त्राहि मच जाती है। पर उनकी सहायता के लिए मन्दिरों के इस धन का उपयोग क्यों नहीं होता? महन्त लोग जिन्हें त्यागी वैरागी होना चाहिए वह धन के दास बने पड़े रहते हैं। इन दौलतमंद मन्दिरों और मठों को देखकर लगता है कि यह देश गरीब नहीं है। पर लोग भूखे मर रहे हैं। जगन्नाथ पुरी में नेवैद्य बिकता है। गरीबों को मुफत नहीं दिया जाता मन्दिरों में दानी लोग सोने चांदी के ढेर लगा देते हैं, तिरुपति में ही देखिए धन को गिनना भी कठिन है। पर उपयोग क्या हो रहा है वहां भी लड्डू का प्रसाद खरीदना पड़ता है। और भी अनेकानेक मन्दिर हैं यहां आपने क्या चढ़ावा चढ़ाया यह देखकर ही प्रसाद दिया जाता है। ऐसा क्यों होता है प्रसाद-तो-प्रसाद है बिना भेदभाव के बंटना चाहिए। पर बांटने वालों के अन्दर जब भेदभाव भरा पड़ा है तो भेदभाव से ही बंटेगा। ऐसे भामाशाह यह महन्त और पुजारी नहीं हो सकते कि मन्दिरों के धन को जनता के भले में झोंक सकें जिससे एक विषमता राजनीतिज्ञों ने फैलाई है और दूसरी विषमता धर्म के ठेकेदारों ने फैलाई है। मन्दिर, मठ, गुरुद्वारे और जो भी धर्म स्थान हैं उनको चन्द लोग अपनी निजी सम्पत्ति बना लेते हैं तो सारी बुराईयों की जड़ यहीं से शुरू हो जाती है। हमें भारत में एक तरफ यदि राजनीति में प्रक्षालण की जरूरत है तो दूसरी तरफ धर्म स्थलों

को भी दरुस्त करने की आवश्यकता है। वैष्णों माता का धाम जब तक चन्द पुजारियों के हाथ में रहा वहां कोई कुछ न बना पाया। पुजारी वहां से दौलत इकट्ठी कर शहरों में आकर शराब और व्यभिचार में फंसे रहें। जब वहां ट्रस्ट बन गए तो यूनिवर्सिटी बनी, धाम पर लोगों के लिए सभी प्रकार के आराम बने पूरा शहर सा बस गया। उसी अनुपात से वहां पर आय भी बढ़ गई और धन लूटने वालों के लिए फिर भी धन की कमी न रही। इस दान धन को किस तरह सदोपयोग में लगाया जाए इसका भी कुछ संसाधन होना चाहिए। राजनैतिक व्यवस्थाओं के साथ-साथ इन धार्मिक व्यवस्था की तरफ भी देश का ध्यान जाना चाहिए। हमारे पुराने महाराजा लोग मन्दिरों के धन का उपयोग स्वयं के लिए कभी नहीं करते थे। पर मन्दिरों में शिक्षा संस्थान होते थे। तक्षशिला या नालन्दा जैसे विश्वविद्यालयों की स्थापना दान, धन पर ही होती थी। जहां हजारों की संख्या मे ंलोग विदेशों से आकर भी शिक्षा ग्रहण करते थे। पुरातन युगों से हमारे देश के शिक्षा संस्थान किसी विद्यार्थी से धन लिए बिना ही शिक्षा का प्रसार करते रहे जिससे इस देश में अशिक्षित लोग न के बराबर थे। तब अन्तःवासी शिष्यों का पालन पोषण भी आचार्यों द्वारा होता था। अवश्य धन का उपयोग धनी लोग इन शिक्षा संस्थानों पर अधिक से अधिक करते थे। आज शिक्षा एक हौआ बन गई है। निर्धनों के बच्चों के लिए शिक्षा आकाश पुष्प हो गई है। विद्यार्थियों के लिए स्कूलों कालेजों की पढ़ाई का खर्चा, टयुटोरियलों का खर्चा, अपने शिक्षकों को खुश रखने का खर्चा, होस्टलों का खर्चा, खाने पीने का खर्चा और साथ में और कितने ही खर्चें हैं जो एक साधारण मां बाप की कमर तोड़ देते हैं। रिश्वतखोरी शिक्षा संस्थानों में भी भरपूर चलती है जब तक एक विद्यार्थी शिक्षा पूरी करके अपने संस्थान से स्नातक बनकर निकलता है। माता-पिता कर्ज में डूब जाते हैं। फिर सरकारी सेवाओं में नौकरियों के लिए दर-दर की भीख मांगने जैसी स्थिति बन जाती है। जिन्हें नौकरियां मिलती हैं वह यह नहीं भूल पाते कि उनकी शिक्षा पर कितना खर्च हुआ और नौकरी के लिए कितना धन रिश्वत में दिया। उसकी पूर्ति के लिए वह लोग भी भ्रष्ट ढंग अपनाने को मजबूर हो जाते हैं। यह सिलसिला ऐसा चलता है कि कहीं अन्त नहीं दिखाई देता। जिन्हें नौकरियां नहीं मिलती वह ज़िन्दगी गुजारने के समुचित ढंग न मिलने के कारण कई और बुराईयों में फंस जाते हैं। वही धन जो जीवन में वरदान लाना चाहिए अभिशाप बन जाता है। परिणामस्वरूप देश में गरीब और गरीब हो रहा है। पैसे वाला और अमीर हो रहा है। आज इस स्थिति के कारण सारे देश में अराजकता फैल चुकी है। स्कैम-पर-स्कैम सामने आ रहे हैं। कोई डिपार्टमैंट भी शुद्ध नहीं रहा। यह धन का सत्यानाशी रूप है। जो हर बुराई को निमन्त्रण दे रहा है। इस से देश कहां जाएगा ? सोचने का विषय है।



हरि व्यापक सर्वत्र समाना

बुरे से बुरा व्यक्ति चाहे वह किसी आतंक के कार्यक्रम पर निकलता है तो अपने खुदाबन्द करीम को याद करके निकलता है कि जिस मुहिम पर जा रहा हूं उसमें मुझे सफलता मिले। जो लोग नास्तिक हैं वह किसको याद करते हैं वही जाने, पर संसार में अधिकतर लोग ईश्वरीय सत्ता को मानते हैं और अपने हर कार्य में उससे सहायता के लिए प्रार्थना करते हैं। ईश्वर की सत्ता को मानें बिना चलते ही नहीं हैं। आम व्यक्ति तो पग-पग पर ईश्वर की सहायता मांगता है उसे याद करता है अपनी सफलता के लिए ईश्वर को हथियार की तरह प्रयोग में लाता है। अपने गलत प्रयोग के कारण दण्ड पाता है तो बुरा भला उसको कहने लगता है। पर यह बात सत्य है कि ईश्वर की सत्ता को मानता है। उसे जानना तो इतना आसान नहीं क्योंकि अज्ञानता का आवरण सर्वत्र फैला हुआ है। यदि इस अज्ञानता के आवरण से प्रयत्न करके बाहर आ सकें और ईश्वरीय तत्व के सत्य स्वरूप के दर्शन का अंवसर मिले तो मानव अपनी गलत धारणाओं के लिए शर्मिन्दा जरूर होगा।

पर उस सत्य स्वरूप के दर्शन के लिए भगीरथ प्रयत्न करना होगा। स्वाध्याय, सत्संग, विद्वानों का शिष्यत्व, मन में भीषण जिज्ञासा, भगवत अर्थ, तत्व बोध के लिए अन्तर विश्लेषण और तत्व ज्ञानियों के चरणों में बैठकर अन्तर मन्थन करना होगा। बार-बार मन की गति को उर्ध्वगामी बनाने के लिए तपश्चर्या की आवश्यकता है। मन की अशुद्धता मिटाए बिना न तो ध्यान ही लगता है न समझ ही आती है। ध्यान आसानी से नहीं लगता क्योंकि मन बड़े वेग से बार-बार भटक जाता है। ब्रह्म को ठीक-ठीक समझने के लिए निरन्तर अध्ययन, अनुशीलन, स्मरण और मन्थन बड़े आवश्यक हैं। ईश स्मरण की आवश्यकता सबको रहती है। जो इस अभ्यास में स्वयं को निरन्तर लगाते हैं उन्हें इस अद्भुत ईश्वरीय तत्व का रहस्य समझ में आने लगता है। जितना जो इस मार्ग पर अग्रसर होता है उतना ही उसका भीतर का मानस स्वच्छ होता चला जाता है। जो पूर्णतया रंगे गए उनके तो कहने ही क्या। ऐसे मानवों को छूते ही दूसरों की काया भी पलटने लगती है।

सर्वत्र है वहां, सर्वशक्ति सम्पन्न है, भरपूर है, पर कौन कितना उलीचता है, ग्रहण करते हैं, स्वयं में उसे भरता है, उसके रंग में ओतप्रोत होता है इसमें अलग-अलग स्थितियां होती हैं। अध्यात्म के गूढ़ रहस्य उतने ही उस व्यक्ति पर स्पष्ट होते जाते हैं। विद्वानों ने कई प्रकार से उस अकथनीय शक्ति को कह-कह कर समझाने का प्रयत्न किया है अब यह हमारा परिश्रम है कि उसको कहां तक कितना समझ

सकें, ग्रहण कर सकें। हम माया के आवरण में ढके रहे तो वह जो हमारे अन्दर बाहर भरा पड़ा है अछूता ही रह जाता है। यदि हम अपने पग उसको ग्रहण करने के लिए बढ़ाएं तो वह सहज सुलभ सुहृद मित्र सा हो जाता है। यहाँ फिर हम उसकी कृपा दृष्टि के लिए देखते हैं। हमारे तप के साथ उस कृपा करुणा की कितनी आवश्यकता है यह तो इस पथ का पथिक ही जानता है। जिस पर कृपा होती है उसे सन्त समागम वह स्वयं उपलब्ध करता है। प्राणी धन्य हो उठता है–

मेरा मन प्रभु का मन
आ ते वत्सा मनो यमत्
परमात् चित्र सुधस्यात
अग्नेत्वा कामया गिरा।

मैं वत्स तेरे मन को अति उत्कृष्ट स्थान से वश में करता हूँ। प्राप्त करता हूँ। मैं तुम्हें वाणी द्वारा चाहता हूँ।

मैं प्रभु भगवान का वत्स हूँ। और भगवान की सारी सम्पदाओं को ग्रहण करने योग्य हूँ। मैं अपने मन को इतना दृढ़, संकल्पशील, अमित शक्तिशाली, संयमी बना लूं कि प्रभु की इच्छा का रूप बन जाऊं। फिर अपने सुदृढ़ पवित्र हृदय से प्रभु के मन को अपने वश में कर लूं बहुत बड़ी बात है। पहली बात तो यह है कि मैं अपने भीतर उस परम पिता की सर्वगुण सम्पदा को संचित कर लूं तो मेरी इच्छा कहां रह जाएगी वह तो उसी का रूप हो जाएगी। सब उसी का रूप हो गई मेरी इच्छाएं तो मैं वही करूंगा जो मेरे प्यारे प्रभु को अभीष्ट है। फिर भी मन्त्र कहता है– मैं प्रभु के मन को अपने मन के वश में कर लूं। कोई पहुँचा हुआ सन्त ऐसा कर सकता है। किसी महामूर्ख को पण्डित बनाकर, किसी चोर, डाकू, कातिल को सन्त बनाकर, किसी होती दुर्घटना को होते–होते बचा कर, सन्त संसार को बदल डालने की क्षमता रखते हैं। जैसे रत्ना डाकू बाल्मीकि ऋषि बन गए जैसे गुरु सहज नाथ जी के आशीर्वाद ने राजा को दो पुत्र प्राप्त करा दिए, जैसे अंगुलीमाल को गौतम बुद्ध ने श्रमण बना दिया। ऐसे सन्तों के आगे बड़े–बड़े सिकन्दर नत मस्तक होते हैं। सन्त बादशाहों के बादशाह होते हैं। उनमें पर्वतों को हिला देने का दम होता है। सन्त का तादातम्य भगवान से इस तरह हो जाए कि वह भगवद् भाव में जिन्दा रहे तो उसकी वाणी में शक्ति होती है। वह जो चाहता है वही होता है। उसका आशीर्वाद मिलता है। वह प्रभु का रूप हो जाता है। फिर भी मन्त्र कहता है मैं प्रभु के मन को अपने मन के वश में कर लूं। कि उसके कहने से महामारियां टल जाएं। अति वृष्टि थम जाए। प्रभु का ऐसा प्यारा प्रभु की सम्पत्ति का मालिक होता है। भगवान न किसी के शत्रु हैं न किसी के मित्र। जो उन्हें अपना बना ले वह बन जाते हैं उसके हो जाते हैं। प्रभु तो अमृत की बहती धारा हैं जो भी उलीच के इस अमृत को ग्रहण करेगा वह महाराज किसी को मना नहीं करते प्रत्युत्त और आगे आकर पिलाएंगे।

जो हम अपने कर्म उससे परे रखें तो कष्ट आने पर उसको क्या दोष देना। जो कष्ट आया वह तो हमारे ही कर्मों का फल आया। ईश्वर से भी अधिक ईश्वर भक्त की ओर दुनिया जल्दी आकृष्ट होती है क्योंकि ऐसे सन्त से लोग अपना दुखड़ा सुनाकर उससे मदद पाने को आते हैं क्योंकि वह शरीरधारी है। दृष्टिगोचर है। सन्त वैसे भी हृदय का कोमल, करुणा से भरपूर आनन्द देने वाला होता है, इसलिए सबका प्यारा हो जाता है। सन्त से शान्ति मिलती है सन्त की सौम्यता हृदय को पवित्र कर देती है। ध्यान में भगवान का उमड़ता सागर लेकर वह सबके साथ खड़ा हो जाता है। संत के हृदय की पवित्रता उसके पास आने वाले अपने भीतर परिलक्षित करते हैं। ऐसा बन जाने की इच्छा क्यों न करें और इच्छा की है तो ऐ मन वैसा बनने का प्रयत्न भी करो। प्रभु के हृदय में बैठ कर प्रभु की ओर अपनी इच्छा को एक करलो तो आनन्द ही आनन्द है।

दया करो मुझे अपनी शरण में लो
मेरा जीवन पुष्प तुम्हारे चरणों में समर्पित हो

नशेबाज नहीं जानता कि नशा उसकी जीवन नैया को नरक में धकेल रहा है, न किसी की सीख उसे सुहाती है न स्वयं पर संयम कर पाता है परन्तु यही नशा यदि प्रभु भक्ति में हो जाए, देश प्रेम में हो जाए, राष्ट्र सेवा में हो जाए, जन-जन के हित में हो जाए तो मनुष्य ऊंचे से ऊंचे सिंहासन पर जा विराजता है। नशा होना बुरा नहीं पर किस प्रकार का नशा है यह जानना जरूरी है। देखो बाबा रामदेव को योग प्राणायाम का नशा हो गया तो वो आज कहां पहुंच गए, यह सारा संसार जानता है। नशा तो इतना अधिक है कि एक क्षण के लिए भी उतरता नहीं। राम लीला मैदान के काण्ड से भी उतरा नहीं और बढ़ गया। यह ऐसी धुन है जो सोते, जागते, खाते, पीते बात करते कभी भी ओझल नहीं होती और इस धुन में बाबा के साथ सारा संसार पागल हो रहा है। इस नशे के कारण लोगों के कई नशे (जो उन्हें नरक में धकेल रहे थे) उतर गए, रोग उतर गए, ऐब उतर गए, मन के मैल उतर गए, वृद्धि से अज्ञान के पर्दे उतर गए, नफरत उतर गई, अवगुण उतर गए, कष्ट उतर गए, आलस्य तन्द्रा उतर गई। ऐसे उतर गई यह सब जैसे सांप के ऊपर से कैंचूल उतर गई। इस नशे से बाकी बचे निर्मल शुद्ध आत्मा, निर्दोष जीवन, पारदर्शी हृदय, विवेकशील मस्तिष्क और यह सब पाकर मानव देवत्व पा गया। यह नशा है जिससे स्थित प्रज्ञता पाकर मानव भूत, भविष्य, वर्तमान का द्रष्टा बन जाता है। फिर वह कोई अमंगल कार्य नहीं कर सकता। उसका रोम-रोम गाता है-

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिचत दुख भवेत

सच्चे अर्थों में मनुष्य देव हो जाता है ऐसे देवत्व के नशे को शत-शत नमन

ऐसे देवत्व की ही हमें चाहना है। यही तो सोच है, पिला दो प्रभु ओट लगाए बैटे हैं। उंडेल दो और उंडेलते ही चले जाओ, पीते-पीते गुजर जाए आयु, आगामी जीवन के लिए भी यही प्रबल इच्छा है। ऐसे परिवार में पैदा हो, यहां वेदों, शास्त्रों, उपनिषदों के निरन्तर पठन पाठन मिले ऊंचे संस्कार मिलें, भगवत भक्ति का जाप मिले। ऋषियों का संगम मिले। सोम का पान मिले। भारत की भू मिले, राष्ट्र सेवा का सुयोग मिले। महापुरुषों का संगम मिले। दैविक सम्पत्ति मिले, कोई कमजोरी न रहे। हम दृढ़ प्रतिज्ञ हों, दैव सम्पदा से जा मिलें।

हम सुविधा के सागर में गोते लगाते रहें। यही तो हमारी और राष्ट्र की समृद्धि है। यही तो जीवन का सार है। इसी से तो जीवन पवित्रतम बनेगा। और कुछ मिले-न-मिले तेरी कृपा का भण्डार मिले। हमें शक्ति देना प्रभु, हमारे संकल्प ऊंचे हों और उन संकल्पों पर चलने के लिए हमारे हौंसले भी उतने ही दृढ़ हो। बाबा नानक के शब्दों में भंग मसुड़ी का नशा उतर जाये हर बार, नाम खुमारी नानका चढ़ी रहे दिन रात।



ज्ञान का दीया

दीया जल रहा हो परन्तु हम दीये की विपरीत दिशा की ओर मुँह करके चलने लगें तो हर कदम पर अन्धेरा बढ़ता जाता है। यदि हम पूरा घूमकर दीये की तरफ मुंह करके चलने लगें तो एक छोटा-सा दीया भी हमें मार्ग दिखा सकता है।

मनुष्य या कोई भी जीव जब मर जाता है तो उसके शरीर के सब अवयव यथावत रहने पर भी सारी क्रियायें थम जाती हैं। फिर शरीर को काटो, जलाओ, पानी में बहा दो, चिल्लाओ कुछ फर्क नहीं पड़ता। सारे यन्त्र चुप चाप निष्चेष्ट रहते हैं। कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। मृत शरीर से सारे यन्त्र निकाल लो, किसी जीवित शरीर में डाल दो तो मृत शरीर के यन्त्र जीवित के संयोग से सक्रिय हो उठते हैं आंखें, यकृत, किडनी, हृदय, कुछ भी निकाल कर अकसर दूसरे शरीरों में डाल दिए जाते हैं। और बरसों ठीक-ठाक काम करते रहते हैं। क्यों ?

क्योंकि बिना जीवात्मा के सब कुछ मिट्टी का लोथा हो जाता है। आत्मा के साथ संघात होते ही चेतना आ जाती है। एक व्यक्ति मशीनें बना सकता है उनको विद्युत आदि से क्रियान्वित कर सकता है। पर उनमें जीवात्मा नहीं डाल सकता। मूर्ति सुन्दर से सुन्दर तैयार कर सकता है। मन्दिरों में मूर्तियों में प्राण प्रतिष्ठा का आयोजन भी होता है। पर मूर्ति मूर्ति ही रहती है। सजीव नहीं होती। जो लोग आत्मसत्ता पर विश्वास नहीं करते उनके पास जीवन के बहुत से प्रश्नों का कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं होता। चाहे वह कितनी भी थ्यूरियां उपस्थित करें, प्रश्न अनुत्तरित ही रहते हैं। जब हम आत्मा की बात करते हैं तो यह आत्म कहां से आई, क्यों आई, कैसे आई कई प्रश्न खड़े हो जाते हैं। जिनका समाधान हमारे पूर्वजों ने, ऋषियों मुनियों ने लाखों वर्ष पहले खोज लिया था। जिसमें हम आज यह जानने में समर्थ हैं कि पूरे ब्रह्माण्ड का एक रचनाकार है। जो इस सारी आत्माओं का स्रोत है। यह प्रकृति प्रेयसी की भान्ति जिसके आदेश से चलती है। यह सूर्य, चांद, तारे यह वायु, जल, आकाश, अग्नि जिसकी आज्ञा का पालन करते हैं। जो सारी जीव सृष्टि थलचर, जलचर, नभचर को बनाता है पालता है, आश्रय देता है और जिसमें अन्त में सब विलय होते हैं। पैदा किये जीवों के लिए सभी आवश्यकताओं को पूर्ण करने का प्रबन्ध करता है जो वनस्पतियां खनिज पैदा करता है सबको नियन्त्रण में रखता है तथा नियम से चलाता है। उसी महान् शक्ति के कारण हम सब इस सृष्टि के अंग हैं। हम मानव

हैं। मानव ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति हैं। क्योंकि मानव होने से भगवान ने न केवल हमें जीने की स्वतन्त्रता दी है बल्कि काम करने, सोचने विचारने, ऊंचा उठने, शिक्षा ग्रहण करने, उसकी प्रकृति से बटोर कर और ऊंचे-ऊंचे पदार्थ बनाने की शक्ति भी दी। हम उसके बनाए इस संसार को अपने सुख के लिए प्रयोग में लाते हैं। हंसते, खिलते, खाते, नई-नई कलायें सजाते, स्वयं को सजाते और न जाने जीव क्या-क्या करते हैं, जोकि सृष्टि के कोई दूसरे जीव करने में असमर्थ हैं।

मानव ही है जिसे ईश्वर ने यह कर्त्तव्य भी सौंपा कि वह उस परम तत्व की खोज भी करे जिसने यह सारा पसारा निर्मित किया। निर्माण करके स्वयं भी उसी में अनुस्यूत हो गया। जो खोजता है, पाता है और धन्य हो जाता है क्योंकि उसे वह अपनी शक्तियों से सम्पन्न कर देता है। वही अद्‌भुत है उसकी रचना, कितना महत्व है वह रचनाकार। मानव पर उसकी कितनी कृपा है। परन्तु मानव क्या करता है। अपने आगे पीछे बिछी प्रकृति की सौन्दर्य राशि पर मुग्ध हो सब भूल जाता है। रचनाकार तो याद नहीं रहता। वह अपने विनोद में, आराम में, भान्ति-भान्ति के स्वाद में, ऐश्वर्य में, लालच में, कामुकता में तल्लीन हो जाता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर, ईर्ष्या, द्वेष का सारा कूड़ा कर्कट अपने भीतर समेट लेता है। अपना जीवन नर्क बना लेता है। कर्म भोग चक्र शुरू हो जाता है न्याय का चक्र चलता है। बड़ी मुश्किल से याद आता है यह मैंने क्या कर दिया। पर कोसता वह स्वयं को नहीं भगवान को है। जीवन दिया है तो इतने कष्ट क्यों दिये। कष्ट उसने तो दिये नहीं वो तो स्वयं उत्पन्न किए हैं। जब तक समझ आती है देर हो चुकी होती है। जो मानव देवत्व से सम्पन्न था। दैत्य बन जाता है पर उस शक्तिशाली के आगे किसकी पेश चलती है। ऐ मानव! यहीं तुम्हें चेतने की आवश्यकता है। यदि इस सत्ता को याद रख लेगा तो प्रकृति नटी के प्रलोभनों से बचकर तू उर्ध्व गति को प्राप्त होगा, देवत्व को पायेगा। कष्ट आएंगे भी पर तेरा कुछ नहीं बिगड़ेगा। यह याद रखना था पर उसे भूल कर जो भूलना था उसे गले लगा कर फंसा है तूं। इस मंझधार में दीया ज्ञान का जल रहा है, उसकी ओर रुख कर मार्ग मिलेगा। राह सूझेगी वह रचनाकार मुस्कराते हुए तुम्हें सामने मिलेगा। तू अमर का पुत्र है, अमरत्व पाएगा। दीए की तरफ रुख कर। यह दीया तेरे लिए ही जला है। इसके इंगित पर चल, तू भव सागर से पार हो जाएगा।

ॐ अग्नि मिळे पुरोहिंत यज्ञस्य देव मृत्विजम्
होतारं रत्न धातमम्। (ऋ. १.१)



नयी भोर प्रकाश की ओर

आत्मा और परमात्मा की खोज का विषय एक ऐसा विषय है जो मानव में जब पहले इस धरा पर आंखें खोली होंगी तब से ही प्रारम्भ हो गया होगा। और अनादि से अनन्त तक यह अन्वेषण चलता ही रहेगा। पैदा होते ही बच्चा सोने लगता है एक आधार सा छूट जाता है मां की कोख का। एक चिन्ता सवार हो जाती है क्या हो गया, क्या करूँ, कहां जाऊं, क्या खाऊं, कैसे रहूं। आँख खुलते ही मैं कौन, ये क्यों, मैं कहां, न जाने कितने सवाल उठ खड़े होते हैं। जिनका समाधान पाना हर प्राणी की उत्सुकता जिज्ञासा को जगा देता है। विशेष कर बुद्धि की प्रखरता अधिक होने पर यह प्रश्न चिह्न ज्यादा स्पष्ट और अनिवार्य हो जाते हैं। नारायण स्वामी की 'आत्म दर्शन' पुस्तक का अध्ययन करते हुए यह पाया कि इस विषय में संसार में सर्वत्र विचार करने वाले महा मनीषियों को ऐसा कौतूहल रहा और हर एक ने अपना-अपना मन्तव्य दिया जिसमें बहुत विविधता है। कुछ ईश्वर को मानने वाले, कुछ नास्तिक, कुछ प्रकृतिवादी, कुछ केवल ईश्वर को ही सब कुछ करने वाला, कुछ आत्मा को अधिक महत्व देने वाले, कुछ सबका मिश्रण करके इस उलझन को सुलझाने के प्रयत्न में रत, कुछ सब कुछ नकार कर केवल विज्ञान को महत्त्व देने वाले। कुछ स्वयं ही विरोधाभासी करने वाले।

जब भी जहाँ भी किसी नये विचार को लेकर कोई खड़ा हुआ, पुराने विचारों पर अपनी आस्था को लेकर वैचारिक जंग सी होती रही और पुरानी मान्यता को मानने वालों के हाथों उनको अपने प्राणों की आहूति भी देनी पड़ी। कई दार्शनिक ऐसे भी हुए जिनकी अपनी शिष्य परम्परा में मान्यताओं में अन्तर आता गया।

भारत में चूँकि प्रारम्भ से ही वेदों के रूप में मानव जीवन के लिए हमें ऐसे ग्रन्थ प्राप्त हो गए जिनसे सारी कल्पनाओं के समाधान आज तक प्राप्त होते हैं। पर ऐसे भी बहुत बार हुआ जब वेदों के अर्थों के अनर्थ करके अपने विचारों को तरह-तरह तोड़-मरोड़ कर कई प्रकार के मिथ्या भ्रम फैलाने वाले भी पैदा हुए। समय के लम्बे अन्तराल में बहुत प्रकार के मत भारत में सबसे अधिक विकसित हुए। जिससे कई भ्रान्तियां पैदा हुईं जो आज भी साथ-साथ चल रही हैं। यहां तक कि सबको सुनकर, जान कर बड़ों-बड़ों की बुद्धि चकरा जाए। अपनी-अपनी तरह की

भ्रान्तियों में फंसे स्वार्थी लोगों के धर्मों में भी बहुत से विचारकों को दुष्टता का शिकार होकर जीवन से हाथ धोना पड़ा।

आज भारत में धर्म के क्षेत्र में विरोधाभास बहुत अधिक हैं। पर वेदों के रहते सत्य की खोज का मार्ग अवरुद्ध नहीं है। अनात्मवादिता का उत्तर यदि कोई पा सकता है तो वह भारत में पा सकता है, तर्कपूर्ण सर्वथा सत्य पर आधारित और बुद्धिमान से बुद्धिमान वैचारिक को सन्तुष्ट कर सकने की सामर्थ्य भारतीय वाङ्मय में है। नारायण स्वामी ने सहस्रों विचारकों के मत उपस्थित करके तुलनात्मक अध्ययन द्वारा जिस मत का प्रतिपादन किया वह शुद्ध वैदिक मत है कि जिसमें सभी भ्रान्तियां समाप्त हो जाएं।

यद्यपि भारतीय विचारकों ने दर्शनों में किसी भी पहलू को विचारधीन लाने में कसर नहीं छोड़ी पर भारत में ही लोगों ने अपने ज्ञान ग्रन्थों को छूना छोड़कर इतनी भटनकाएं पाल ली हैं कि अभी भी हम बहुत सी बुराईयों को छोड़ने में स्वयं को असमर्थ महसूस करते हैं। भारत ने इतने महापुरुषों को जन्म दिया है कि जिनके जीवन अपने आप में दर्शन है। भगवान राम से लेकर अपने ही जीवन का दर्पण बन करके आदर्श उपस्थित करने वाले व्यक्ति इसी भूमि ने संसार को दिए। आज तक ऐसे युग पुरुष इस धरा पर होते चले आ रहे हैं फिर भी अन्धकार की कमी नहीं है। दीए तले अन्धेरा चरितार्थ होता है।

ऐसे लोगों को कमी नहीं है जो धर्म के नाम पर दुनिया को गुमराह करते हैं, लोगों को वहमों में फंसाकर डराते धमकाते हैं, अपने-अपने देवता या मत को लेकर लोगों को लड़वाते हैं। कथा वार्ताओं को तोड़-मरोड़ कर दूसरों को भ्रम में फंसा देते हैं। फलित ज्योतिष के नाम पर लोगों से पैसा ऐंठते हैं। त्याग वैराग्य की बातें करके दौलत ठग के ले जाते हैं। भूतो-प्रेतों से डराते हैं, बलियां चढ़वाते हैं मन्दिरों में दुराचार फैलाते हैं। कोई उनके पाखण्डों की धज्जियां उड़ाए तो उसकी जान के ग्राहक बन जाते हैं। देवदासी प्रथाएं उन्हीं लोगों की चलाई हुई थीं। मन्दिर पण्डों मुस्टण्डों की पैसा कमाने और व्यभिचार फैलाने की दुकानें बन गई थीं। बहुत गन्दगी फैलाई पाखण्डियों ने कोई सदाचारी सच्चा साधु मिल गया तो उसको जान से मार डालने तक का साहस था इनमें। आज भी हम इन बुराईयों से पूरी तरह उभरे नहीं हैं। केवल एक आशा की किरण सामने है कि आज हमारे पास गुरुकुलों में ऐसे विद्वान, आचार्य, परोपकारी, जागृत संन्यासी पैदा हो रहे हैं जिनसे यह विश्वास जागता है कि हमारा वैदिक भारत, ऋषियों का भारत, पतंजलि पाणिनी का भारत, वेदों उपनिषदों दर्शनों का भारत, भगवान राम और कृष्ण का भारत फिर से जागेगा।

विवेकानन्द ने जगाया, दयानन्द ने जगाया और होते-होते आज राम देव का सिंहनाद गूँज रहा है। भारत जागेगा। हमारे देश में फिर से सच्चाई, ईमानदारी, सुशासन, सदाचारिता, सुशिक्षा, सच्चरित्रता और कर्मण्यता का नया युग नया सवेरा आ रहा है। जिससे कुविचारों का अन्धेरा छंटेगा। इस नये सवेरे में भारत देश फिर से सत्य युग के दर्शन करेगा। करवट बदलता समय हम उसके साथ हैं। हम नयी सुबह के लिए प्रतीक्षारत ही नहीं प्रयत्नशील हैं।

ॐ शान्ति



मन और आत्मा

कहते हैं शरीर बदलना चोला बदलने के बराबर है। आत्मा एक शरीर छोड़ कर दूसरे में चली जाती है। परन्तु चोला बदलने में तो कोई दर्द महसूस नहीं होता हम रोज़ कपड़े बदलते हैं दिन में 2-2- बार भी बदलते हैं। मगर जब शरीर छोड़ने की बारी आती है तो काफी कष्ट महसूस करते हैं। शरीर छोड़ने को मृत्यु का नाम दिया जाता है। कपड़े बदलने का नहीं।

क्यों कष्ट होता है शरीर छोड़ने में ? क्यों मृत्यु से मनुष्य भयभीत रहता है ? सोचने का विषय है। पश्चिम के विद्वानों ने तो बहुत कुछ आत्मा के अस्तित्व को नकारा है। हालांकि पूरी तरह नकार भी नहीं सके। इस विषय में अभी खोज करना बाकी है। ऐसा कह कर विषय को पटाक्षेप कर देते हैं। परन्तु हमारी भारतीय वैदिक पद्धति में हमें हमारी जिज्ञासा का उत्तर बड़ी प्रांजलता से प्राप्त है।

गीता में भगवान कृष्ण जब कहते हैं-

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः
न चैनं क्लेदयन्तयापो न शोषयति मारुतः

तो स्पष्ट है कि आत्मतत्व इस शरीर के भीतर निवास करते हुए भी इस शरीर से अलग है। शरीर निर्माण में पांचों तत्वों का योग है- आत्मा जब जाती है इसे छोड़ कर तो पांचों तत्वों को भी छोड़ जाती है। परन्तु इस पांच तत्व के शरीर के बिना आत्मा किस रूप में कहां रहती है, कौन जाने ? जब शरीर धारण करती है विशेष कर मानव का तन जब आत्मा को प्राप्त होता है जो जीवन का संगीत झंकार उठता है। आत्मा को देह का गृह ही नहीं मिल जाता, एक आकार ही नहीं मिल जाता बल्कि इस शरीर के अंग प्रत्यंगों के रूप में कर्म करने के उपकरण भी प्राप्त हो जाते हैं केवल उपकरण ही नहीं इस पांच हाथ के शरीर के भीतर एक पूरी मशीनरी मिलती है फिर उस मशीनरी को क्रियान्वित करने के लिए मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार भी प्राप्त होते हैं। जब मस्तिष्क मिलता है जिसमें बुद्धि नाम का ऐसा तत्व है जिससे मनुष्य पूर्णतया मनुष्य बनता है। कई लोग कहते हैं बुद्धि में ही मन का विकास है। कईयों का विचार है हृदय जो धड़कता है वही मन है। परन्तु अन्तर

खोज करने वाले मनीषियों के मत में मन एक सूक्ष्म तत्व है और पूरे शरीर में व्याप्त है। अपनी संज्ञा का बोध होना अहंकार है इस अहंकार के न होने से तो हम अपने विषय में कुछ सोच ही नहीं सकते। आत्म तत्व तो पूर्णतया हमारे भीतर पूरी तरह फैला ही हुआ है। बुद्धि का स्थान मस्तिष्क में है जब विचार का विषय आता है तो मन भी मस्तिष्क का ही एक हिस्सा लगने लगता है। कहते हैं शरीर के अन्य अवयवों की तरह मन भी जड़ है (प्रत्युत) लगता तो नहीं कि मन जड़ है लगता है मन मस्तिष्क का ही भाग है बुद्धि का परम सहायक है, इन्द्रियों का नियन्ता है आत्मा का दर्पण है। आत्मा का दर्पण न हो तो कोई भी व्यक्ति इस मन को साध कर भक्ति, भजन योग कुछ नहीं कर सकेगा। क्योंकि किसी भी कार्य को करने के लिए मन को सबसे पहले साधना पड़ता है। मार्ग पर लाना पड़ता है। यद्यपि जीवित व्यक्ति का मन ही क्रियाशील होता है। प्राण पखेरू उड़ते ही शरीर के साथ मन भी निश्चेष्ट हो जाता है।

मन कई तरह के काम करता है। यह कहें कि यह हर समय व्यस्त रहता है कभी चैन से बैठता नहीं। मन न माने," न लगे तो कितना ही कहो, कार्य कुछ भी नहीं होता। अर्थात् मन के अभाव में लगता है जीवन रहा ही नहीं। यह मन भौतिक शरीर और आत्मा के बीच की कड़ी है। इसका द्वार जब बाहिर की तरफ खुला होता है तो यह अपने संसार को बढ़ाता चला जाता है। मन की शान्ति का भी कोई अन्त नहीं। चंचल इतना है कि बान्ध के रख दो यह कहीं रुकता नहीं। हर समय संकल्प विकल्प चलते हैं। सभी प्रकार की भूख इस मन से पैदा होते हैं। वेद बार-बार कहता है तन्मे मनः शिव संकल्प मस्तु। और सन्त कहते हैं-

मन के हारे हार है मन के जीते जीत
पारब्रह्म को पाईये मन की ही प्रतीत।

मन और आत्मा की दोस्ती पक्की हो जाए तो मन ही आत्मा का रूप बन जाता है। सांसारिकता में डूबा मन मनुष्य को गर्त में भी गिरा सकता है। मन की करतूत से मनुष्य दुष्कर्म भी कर सकता है और फिर जब मार खाने की बारी आती है तो शरीर को आगे कर देता है। इसीलिए कहा गया कि मन से किया पाप ज्यादा हानिकारक है। जिसका मन एकाग्र हो गया उसके तो वारे न्यारे हैं। ऐसे में तो भगवान की समीपता अनुभव होने लगती है। सोचती तो बुद्धि है पर मन लगे तब न। कहते हैं जब मनुष्य इस शरीर को छोड़कर जाता है तो सूक्ष्म शरीर आत्मा के साथ जाता है जिससे सूक्ष्म मन और मानव के कर्म साथ-साथ बन्धे चले जाते हैं। आत्मा विद्युत की तरह सारे संस्कारों की सूक्ष्मता लेकर जहां नया जीवन धारण करती है वहीं ले

जाती हैं। यह मन यदि दोस्त हो जाए शिव संकल्प वाला हो जाए तो मानव बड़ी-बड़ी ऊंचाईयों को प्राप्त कर लेता है अन्यथा संकल्पों विकल्पों में फंसा भटकनाओं के भंवर में फंस जाता है। संसार की चमक-दमक के लोभ लालच में फंसा प्राणी अक्ल का अन्धा होकर जिन कर्मों में लिप्त हो जाता है वह उसे मानसिक सन्ताप, अपयश और कष्ट देता है पर वही मन साधने से मानव देवत्व प्राप्त करके परम पद पा सकता है। आत्म बोध पाकर अब प्रश्न यह है कि जितने भी पशु पक्षी वृक्ष हैं इनमें मनस तत्व किस तरह से है। भारत में कई मत ऐसे हैं जो यह विश्वास करते हैं कि कुत्ते इत्यादि में आत्मा नहीं है। जगदीश चन्द्र बोस जी के अनुसन्धान ने यह परिणाम दिया कि वनस्पतियों पेड़ों में आत्म तत्व है। प्रकृति के कण-कण में पत्थर, मिट्टी, जल, पर्वत कोई स्थान उस महत् शक्ति से खाली नहीं है इसीलिए जो उस प्रभु को विकट से विकट परिस्थिति अथवा स्थान में प्रकाश करता है भगवान उसकी सहायता में कुछ न कुछ करते हैं अथवा मृत्यु की गोद में सुला देते हैं। पशुओं में, पक्षियों में जलचरों में आत्मा नहीं है यह सोचना भी गलत है परन्तु मनस तत्व के विषय में यह सोचा जा सकता है कि वृक्षों में मनस तत्व नहीं क्योकि वृक्षों को काटने से उनमें फिर से अंकुर फूटते हैं, फल फूल होते हैं जब तक जड़ से ही न समाप्त कर दिए जाए। पशु पक्षियों में मनस और बुद्धि की मात्रा में कमी हो सकती है क्योंकि उनके सोचने विचारने की क्षमता मनुष्यों से कम है परन्तु मनस तत्व नहीं है ऐसा सोचना गल्त है। मनुष्य में भगवान ने मन की शक्ति बहुत वृहद मात्रा में प्रदान की है। बुद्धि के सहयोग से मनुष्य ने भौतिक और अभौतिक दोनों क्षेत्र में इस धरा को जो कुछ प्रदान किया उसी में ज्ञात होता है कि मनुष्य को उसने कितना सम्पन्न और समृद्ध बनाया इसी से कहा गया-

आहार निद्रा भय मेथुनं च सामान्यंएतत् पशुभि निरानाम

ऐको विशेषो धर्मोहितेषाम् धर्मेण हीना पशुभिः समानाः

इसी मन और बुद्धि के बल पर ही मानव सर्वश्रेष्ठ कहलाया। इसी के बल पर इस धरा पर मानव ने अपना साम्राज्य फैलाया। ऊंची से ऊंची स्थिति प्राप्त की। जहाँ भी मन में वृद्धि मन के गुण कम हो गए वहीं पर वह नीचता को प्राप्त हुआ। अतः मनः, शक्ति और बुद्धि उतना ही महत्वपूर्ण है जितनी आत्मिक शक्ति। इस सभी के प्रयत्न से ही चारों पदार्थ प्राप्त किए जा सकते हैं।



प्रकृति आत्मा परमात्मा

आत्मा अमर है, आत्मा ईश्वर का अंश है, आत्मा चेतन है। फिर आत्मा और परमात्मा में क्या अन्तर है आत्मा प्रकृति के संयोग से, संघात से अलग-अलग क्यों है। सबसे पहली बात तो यह है कि सर्व अन्तर्यामी सर्व व्यापक होने से परमात्मा चंचल नहीं है, जीवात्मा उसका अंश होने पर भी अत्यन्त चंचल। ईश्वर से अपना क्या सम्बन्ध, कैसा सम्बन्ध ? ऐसा ही जैसा सूर्य का उसकी किरणों से, चान्द का उसकी चान्दनी से, सागर का सागर की बूंद से, वायु मण्डल का वायु के एक झोंके से घटा काश का वृहत्ताकाश से। परमात्मा को कहीं आना जाना नहीं पड़ता। पर आत्मा तो जाने कहां भटकती है परमात्मा को कुछ सीखना नहीं पड़ता, पर जीवात्मा जब शिशु रूप में शरीर धारण करता है तब से मृत्युं पर्यन्त कुछ न कुछ सीखती रहती है। यहां तक कि आज का अबोध बच्चा कल का महापण्डित, महान कलाकार, वैज्ञानिक, डाक्टर, इंजीनियर कुछ भी हो सकता है। एक से दूसरा व्यक्ति मिलता नहीं। पशु पक्षियों में उनके ज्ञान की मर्यादा परिमित है। जैसे कौआ यदि हजार वर्ष भी जी ले तो सिवाय काँवे काँवे के कुछ और बोल नहीं सकता। मनुष्य को ईश्वर ने अपने सारे खजाने दे दिए और अपरिचित ज्ञान भी दिया। सब जानते हैं कि यह पूरा विश्व एक ही शक्ति का बनाया है हम सब एक ही परम पिता की सन्तान है। पर एक व्यक्ति से दूसरा नहीं मिलता। अलग-अलग शक्लें, अलग-अलग विचार, अलग अलग रुचियां और अलग-अलग व्यक्तित्व। बिजली घर से जैसे बिजली के उपकरणों का सम्बन्ध जुड़ जाता है तो बल्ब प्रकाश देता है, पंखा वायु देता है, फ्रिज ठण्डा करता है, हीटर गर्म करता है। कर्म और धर्म सब के अपने-अपने पर स्रोत सबका एक विद्युत है तो सब चल रहे, विद्युत नहीं तो सब शान्त। हर शरीर में ईश्वर की ज्योति समाई है। बेशक एक ही ज्योति पूरी तरह व्याप्त है फिर भी इतनी विविधता।

'हर शरीर में आत्मा किस भाग में बैठी है' ऐसा हम सोचते हैं, शायद हृदय ही उसका स्थान है पर शरीर के पूरे तन में किसी भी भाग में कुछ हो तो सूचना प्राप्त हो जाती है। भौतिक विज्ञान के अनुसार नाड़ी जाल जो सारे शरीर में फैला है उससे मालूम पड़ जाता है सूचना मस्तिष्क में पहुँच जाती है पर ये पीड़ा शरीर के किसी भाग में होती है वो जिसे हो रही है वह तो आत्म तत्व (जीवात्मा) है अर्थात् जीवात्मा केवल हृदय या मस्तिष्क में ही नहीं पूरे तन में व्याप्त है बिना आत्म तत्व के कोई भी अंग में अहसास कैसे हो सकता है बेशक उसका निवास (Electric Station) हृदय या

मस्तिष्क में होगी व्याप्त पूरे तन में ही होगी। इस तरह प्रकृति के संयोजन से निर्मित तन में आत्मा की सत्ता व्याप्त है जिस तरह पूरे ब्रह्माण्ड में ईश्वरीय सत्ता व्याप्त है। जड़ में भी चेतन में भी। जिससे यह शाश्वत सत्य सामने आता है कि प्रकृति और आत्मा के साथ ईश्वरीय तत्व सारे प्राणियों में तृतीय और सर्वोपरि शक्ति की सत्ता है, क्योंकि सब हम उसी ईश्वरीय कृति के अंग हैं। वेद मन्त्र कहता है–

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्य दिव्वल स्वाद्वात्यनश्नन्नन्यो अभिचाक शीति।

इस तरह इस शरीर को घर बनाकर जब परमात्मा उसमें आत्मा को स्थापित करता है तो स्वयं उसका साथ नहीं छोड़ता आत्मा का परम अभिन्न अंग बन कर उसके साथ ही रहता है। आत्मा सुख, दुख, हानि, लाभ, जीवन, मरण सब कुछ सहन करता है। जो कर्म करता है उसके फल भी भोगता है और ईश्वरीय सत्ता निर्लेप होते हुए भी साथ नहीं छोड़ती मनुष्य कोई वस्तु बनाता है तो स्वयं उसमें नहीं घुस सकता न ही उसमें प्राण स्थापित कर सकता है। ईश्वर की विशेषता है कि वह जड़ को भी बनाता है, चेतन को भी और स्वयं को भी साथ ही रखता है। इतना पास है कि दिखाई न दे, पकड़ में न आए फिर भी उसकी झंकार सदा बनी रहे।

अन्ति सन्तः न हाति–असन्ति सन्ता न पश्यति
पश्य देवस्य काव्यम् न ममार न जीर्यति

ऐसा है वह अद्‌भुत। जीव शरीर को त्याग चला जाता है पर ईश्वर का अभाव कहीं नहीं होता, क्योंकि वह जड़ में भी है। पदार्थ नहीं जानता स्वयं को, सूर्य नहीं जानता कि वह क्या कर रहा है पर सूर्य के होने से ही सब कुछ चल रहा है। अपने आप ऊर्जा, प्रकाश उत्पन्न हो रहा है वनस्पतियां पक रही हैं, बादल बन रहे हैं जीवन चल रहे हैं। सूर्य मण्डल के चारों तरफ गतिमान होते ग्रह नक्षत्र चल रहे हैं। सब नियम में बन्धे गतिमान हैं सबको चलाने वाली शक्ति सबके भीतर है वही ईश्वर है। सारी सृष्टि उस परम शक्ति के गिर्द ही घूमती है उसी का स्तवन करती है उसी में निवास करती है पर उसी को जानने में असमर्थ है। सूर्य की किरण यदि सूर्य को तलाशने जाएगी तो स्वयं को सूर्य ही पाएगी। मानव भी उसका पता पाने जाएगा तो उसी का रूप हो जाएगा। जीव जन्म मरण के बन्धन में कई तरह के चोले पाएगा प्रकृति पल–पल रूप बदलती है बदलती रहेगी। पर वह जो सबका नियन्ता है एक रूप रहता है एक रस रहेगा। देश, काल की बाधा सीमा रेखा उसके लिए नहीं उसके होने से सब है ऐसी विचित्र है यह प्रकृति। आत्मा और परमात्मा की लीला को सब आश्चर्यवत निहारते हैं।



व्यक्ति निर्माण

नियम तो यही है कि हंसो के यहां हंस पैदा होते हैं और नागों के बच्चे नाग होते हैं। मानव जाति में भी जातियां बनाई नहीं जाति स्वयंमेव बनती चली जाती है। जो व्यक्ति जैसा स्वयं होता है। वैसी ही उसकी सन्तति होती है। जो कार्य पिता करता है संन्तान उसे सहज ही सीख जाती है। उसी से वंश परम्पराएं बनती चली जाती हैं। पर मानवों में इन नियमों से इतर कई बार ऐसा भी होता है कि वंश परम्परा से हटकर कोई आत्मा जन्म लेती है जो जन्म से और कर्म से दिव्य होती है। और कई बार बड़े अच्छे माननीय कुल में कोई दुष्ट आत्मा जन्म ले लेती है। भगवान कृष्ण कंस के परिवार में उनकी सहोदरा बहन के गर्भ से जन्म लेते हैं।

जब सज्जनों के घर में कोई दुष्टात्मा जन्म लेती है तो समझ लो घर में घोर कलियुग आने वाला है और दुष्टों में कोई सज्जनात्मा जन्म ले लेवे तो स्वर्ग उतर आता है। कंस को पहले से पता चल गया था कि कृष्ण के रूप में उसका काल आ गया है। उसने लाख कोशिश की कि कृष्ण को बालपने में ही समाप्त कर दिया जाए। पर उसके बड़े से बड़ा प्रयत्न निष्फल हुआ। कृष्ण ने कंस के भेजे सब राक्षसों को मार गिराया अन्त में कंस भी कृष्ण के हाथों अपना जीवन खो बैठा। रावण के सगे भाई के रूप में विभीषण हुए जो रावण को और राज सत्ता को समाप्त करने में सहायक हुआ।

दूसरी तरफ रत्ना डाकू जो राह चलते लोगों को लूट पाट करके मार डालता था नारद के दो घड़ी के सम्पर्क में सारी दुष्टता छोड़ बाल्मीकी ऋषि बना। जिनके आश्रम में मां सीता ने अठारह वर्ष बिताए वहीं पर लव कुश का जन्म और पालन पोषण हुआ। स्वामी श्रद्धानन्द जुआरी, शराबी, कबाबी थे पत्नी के सौजन्य तथा स्वामी दयानन्द सरस्वती के सम्पर्क के आने से सब बुराईयां छोड़ कर महान सन्त हो गए। उनका बनाया गुरुकुल कांगड़ी उनकी महानता का आज भी गुणगान कर रहा है। महात्मा बुद्ध के मार्ग रोकने वाला अंगुलीमाल उनका परम भक्त बन गया। व्यक्ति निर्माण का यह एक और पहलू है।

आज के युग में सारे संसार में आततायीपन, आतंकवाद के कारण त्राहि-त्राहि

मची हुई है। रोज प्रातः समाचार पत्र ऐसे ही समाचार लेकर द्वार खटखटाता है। एक आम आदमी रास्ता चलते-चलते कब कोई RDX फटे और चिथड़े-चिथड़े हो जाए। ऐसे देश है जिनमें आंतक फैलाने के लिए मानव बम तक तैयार किए जाते हैं जो आए दिन कहीं न कहीं कहर ढाह रहे होते हैं। बेबस सी जनता मुँह ताकती रह जाती है। जो पकड़े जाते हैं उनसे जेलें भर जाती हैं। पर इस आतंकवाद का अन्त कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता। दुष्ट लोगों को मार भी डालें तो भी दुष्टता समाप्त नहीं हो सकती क्योंकि जो आतंकवाद को अपना लक्ष्य बनाकर चलता है वह मृत्यु के बाद यहां कहीं भी जन्म लेगा दुष्टता ही करेगा। कुछ तो पैदाईश दुष्ट है कुछ लोगों को परिस्थितियां दुष्ट बना देती है। कुछ धर्म के नाम पर अपने को धर्म प्रचारक समझ कर आतंकवादी बन जाते हैं। कुछ मारे जाते हैं और कुछ पकड़े जाते हैं। पकड़े हुए लोग जेलों में जिन्दगी बिताने को मजबूर होते हैं। जेलों में जो कैदी हैं उनमें कुछ तो खतरनाक अपराधी होते हैं। कुछ छोटे-छोटे अपराध करके सजा भुगत रहे होते हैं। कुछ झूठी गवाहियों पर निर्दोष भी सजा भुगत रहे होते हैं। जेलों में पड़े-पड़े प्रतिहिंसा भी जाग उठती है। तो कुल मिलाकर वातावरण हिंसक होता है। प्रति हिंसा भी अपना सिर उठा लेती है। ऐसी मानसिकता लेकर यदि कोई व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त हो जाता है तो अपनी हिंसक वृत्तियों को भी अपने साथ ही लेकर वह पुर्नजन्म में भी वैसा ही व्यक्तित्व लेकर पैदा होगा तो व्यक्ति के मर जाने पर भी बुराई को दूर नहीं किया जा सकता। केवल पौधे का स्थान ही बदलता है जहर जस का तस ही रहेगा।

ऐसे में यदि संत पुरुषों के प्रयत्न से ऐसे लोगों में अच्छी भावना अच्छी शिक्षा को लेकर जेलों में या ऐसी दूसरी जगहों में ऐसा वातावरण पैदा कर दिया जाए कि लोगों की मानसिकता को बदलने का प्रयत्न किया जाए तो कितना अच्छा हो। जगत कल्याण की इच्छा से जो लोग घरों से निकल पड़ते हैं वह ही संसार के सच्चे मित्र हैं। हम सारी की सारी दुनिया को तो सुधार नहीं सकते, अधिकांश तो कोई अच्छी बात ही सुनने को तैयार नहीं होते पर ऐसे लोग भी होते हैं जो अपने बाकी जीवन को उपयोगी बनाने को तैयार हो जाएं। सत्पुरुषों के सत्प्रयत्न कभी रुकने नहीं चाहिए। बहुत सी जनता सुधरना चाहती है पर उन्हें ठीक नेतृत्व चाहिए या यह कहिए कि ऐसे रोल माडल चाहिए जिनका कथन और जीवन इतना प्रभावशाली हो कि दूसरे के मन मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव डाल सके। आज एक अन्ना हजारे ने जनता की भलाई के लिए लोकपाल बिल के लिए अनशन रखा तो परिणाम में लाखों करोड़ों लोग बिना बुलाए, बिना प्रचार के उनके संग खड़े हो गए। ऐसे व्यक्ति समाज के

स्तम्भ हैं। दुर्गुण, दुर्व्यसन साँप की केंचूल की तरह स्वयंमेव उतर जाते हैं जब ऐसा व्यक्तित्व सामने आ जाता है। एक साधारण सा दिखने वाला व्यक्ति सूर्य सा ज्योतिर्मय हो उठता है। मानो सूर्य के निकलते ही अन्धेरा भाग गया। ऐसे लोगों से संसार एक रमणीय दर्शनीय स्थल बन जाता है। लोगों में सचारिता सद्‌गुण पनपने लगते हैं। हर जमाने में हर देश में ऐसे लोगों का होना वरदान है। ईश्वर अच्छे लोगों के जरिए ही हमें जीवन जीने का मार्ग दिखाते हैं और मानव निर्माण में ऐसे लोगों का होना ही भाग्योदय है।



अभिन्न मित्र भगवान

जन्म से मरण पर्यन्त और मृत्यु से जन्म पर्यन्त एक ही हिंडोला है जिसमें हम सवार रहते हैं। यह दौड़ कभी नहीं छूटती। अर्थात मरे या जीऐ रहते हम उसी शक्ति के गर्भ में हैं। उसको छोड़ और कोई छौर भी तो नहीं, उससे बाहर कोई स्थान ही नहीं। शादी की पत्नी छोड़ सकती है, बच्चे छोड़ सकते हैं, मां, पिता, भाई, बहिन सब छोड़-छोड़ चले जाते हैं। पर वह परमशक्ति कभी किसी हाल में भी नहीं छोड़ती। बच्चे हो, बूढ़े हो, जवान हो, गरीब हो, अमीर हो, योग्य हो, नालायक हो वह किसी को त्यागता नहीं। फिर भी हम दुनिया भर के राग द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, मोह सबको पाले रहते हैं और उस परम मित्र को भूले रहते हैं। कई बार सोचती थी राम भी क्या अद्भुत थे, वो रावण जिसने उनकी पत्नी को चुराया, वैर साधा, युद्ध किया उससे भी राम ने मन में कोई मैल नहीं रखी। राम के भीतर बैठी ईश्वरीय शक्ति ने रावण का भी कल्याण चाहा। यह भाव साधारण व्यक्ति को कहां सूझता है। साधारण व्यक्ति जिसे चाहता है प्यार करता है, जिसे नहीं चाहता उससे घृणा भी करता है। पर जिस भगवान् के कारण यह संसार के रिश्ते हैं उसे हम भूले रहते हैं सारी दुनिया के झंझटों का निर्वाह करते हैं और अपने अन्तर के स्वामी को परे बिठा रखते हैं। कैसा अज्ञान है हमारा, इस तरह हम स्वयं से ही दूर रहते हैं।

वह प्रभु बुरे से बुरे व्यक्ति में भी बैठा उसकी बुराई का साक्षी बना रहता है। भले से भले व्यक्ति के शुभ-कर्म भी देखता है साक्षी बना रहता है। बुरा बुराई का फल पाता है, तड़पता है, गालियां निकालता है पर भगवान देखते रहते हैं, मुस्कराते रहते हैं। अच्छे को अच्छे कर्मों के बदले सुख मिलता है उसे भी वह देव जोहता रहता है। ज़रा किसी ने बुलाया तो तुरंत भागा आता है न पुकारे कोई तो भी उसे नहीं त्यागता। किसी को भी अहसास नहीं होता कि वह इतने पास है। जो स्वयं को समेट कर उसकी तरफ मुखातिब हो जाए तो सारा प्यार उस पर लुटा देता है उसका सारा योग क्षेम वहन करता है। आनन्द का स्रोत उसे बना देता है मानो आनन्द की गंगा उसी से निकली हो जैसे अपने बनाए सब जीवों के लिए वह इतना चिन्तनशील है कि जाने किस जादू की छड़ी से सबके सुख का सामान पैदा कर देता है। बच्चा पैदा होता है मां के स्तन दूध के मटके बन जाते हैं। यह धरती माता

की गोद सदा योग्य पदार्थों से भरी रखता है। जल की अपार राशियां कल-कल धाराओं सहित नन्दन करती रहती है। वनस्पतियां, औषधियां, अन्न, धन, धान्य करोड़ों वर्षों से धरा देती चली आ रही है उसके भण्डार कभी खाली नहीं होता। कृपण वह है नहीं हमेशा लुटाता रहता है कोई ताला नहीं लगाता। मनुष्य सब कुछ समेट लेना चाहता है। कंजूस हो जाता है। भूल जाता है कि देने वाले के हाथ बहुत लम्बे हैं।

पर जिन्हें भगवान् का वरद हस्त प्राप्त है वह स्वयं भागवत् रूप है। भगवान कृष्ण को देखो इतने सहस्र वर्षों से भारत उन्हें भुला नहीं पाता, लगता है वह हमारे आस-पास है। सदा तरुणाई लिए, मुस्कराते हुए जन गन के मानस में अपनी मधुर छवि आंकते हुए, सभी का मन मोहते हुए वंशी की धुन से पशु पक्षियों तक को मुग्ध कर लेने वाले गीता के भगवान कितने अभिन्न लगते हैं, अपने से। आनन्द कन्द है वह। ऐसे दिव्य अवतरण भारत भू पर हुए बड़ा गौरव लगता है। ऐसे परम सखा को भूल कर हम अपनी ही पहचान भूल जाते हैं। ऐसे दिव्य प्रेम की पवित्रता, शान्ति, आत्मबोध मन का हर कोणा पावन कर देता है।

दुनिया में कितने लोग, कितने पन्थ, कितने देश, कितनी जातियां, कितने विविध भाषी किसी का कोई अन्त नहीं। क्या आश्चर्य है कि हर प्राणी चाहे वह सुविज्ञ है अथवा महामूर्ख, नारी है या पुरुष, नीच है या ऊंच सुन्दर है या असुन्दर स्वयं को ईश्वर के साथ जोड़कर देखता है। नास्तिक भी अपने भीतर कुछ है, महसूस करता है बेशक ऊपर से नकारता रहे। यूरोप में एक महानास्तिक जब मृत्यु को प्राप्त होने लगे तो उसने अपने आस-पास के लोगों से कहा, मुझे ऐसा लग रहा है जैसे कोई मेरे प्राण खींच रहा है। यह अपने से अलग कौन प्राण खींच रहा होता है ? साधारण तथा हर प्राणी जरा कुछ कष्ट हुआ कि उसे याद आई भगवान की। फिर लगता है वह दूर नहीं। हमारे कष्ट हरने, हमारे साथ ही खड़ा है। वह अकेला इन सारे जहान का मालिक सबको यथावत देखता है, सुनता है यही नहीं वह सहायता करता है, सहारा देता है। जब भी कभी हम कुछ गलत करते हैं, एक हाथ से वह दण्ड दे रहा होता है दूसरे हाथ से सहारा दे रहा होता है। दण्ड भी उसकी दया का ही एक भाग है। कैसे करता है वह अकेला सब कुछ हम सोचते रह जाते हैं। और वह यन्त्रवत सब कुछ करता ही चला जाता है। सब होता हुआ नज़र आता है पर करने वाला कहां है कोई जान नहीं पाता। कोई देख नहीं पाता फिर भी सब को महसूस होता है कोई है जो सब कर रहा है। कोई है जिसकी दया से हम जी रहे हैं। कोई है जिसकी शीतल छाया हमारे ऊपर है। कोई है जो मार्ग दिखा रहा है। कोई है जो गलत पग धरते ही रोकता है। कोई है जो हमारे अंग संग रहता है। पर हम उसे

छू नहीं पाते। देख नहीं पाते पर उसके महा रास को, कहा गान को, महाकाव्य को महसूस करते हैं। और हम अपने से छील नहीं पाते वह हमें हमारा अपना आप लगता है। वही है जो जन्म से मृत्यु और मृत्यु से पुनर्जन्म में भी हमारा साथ निभाता है, कभी अकेला नहीं छोड़ता। जरा याद तो करो उसका दुलार भरा हाथ अपने शीश पर ही लगता है, उसी की गोद में हम परम सुख को पाते हैं पर फिर भी बड़े-बड़े ऋषि मुनि योगी नेति नेति कह कर चुप हो जाते हैं।



विज्ञान का प्रकृति पर प्रकोप

विज्ञान के बदले चरण ने मानव को कितना कुछ प्रदान किया। आज सेल फोन, कम्प्यूटर, टी.वी. कितनी सारी चीजें हो गई मानव के मनोविनोद के लिए। कितना खुश है इन्सान। उसने दुनिया को कितना छोटा बना दिया। कोई इन्सान कहीं पर हो वह दूरस्थ व्यक्तियों से बात कर सकता है कुशल क्षेम पूछ सकता है यहां तक कि सात समुद्र पार बैठे व्यक्ति से बात करते हुए उसका चेहरा भी देख सकता है, गुप्त रहस्यों को जान सकता है, अपराधियों को तलाश सकता है, उनका पूरा रिकार्ड निकाल सकता है। कैसा शक्तिशाली बन गया मानव विज्ञान के बढ़ते चरणों से। यह सब मानव बुद्धि का कमाल है। मानव के इस बुद्धि कौशल को नमस्कार है।

दूसरी तरफ विज्ञान के बढ़ते कदमों ने प्रकृति के साथ कुछ खिलवाड़ कर डाले उनकी तरफ भी हमें ध्यान देना होगा। आए दिन पेपरों में यह सूचित किया जाता है कि सेल फोन को ऊपर की जेब में मत रखें इससे दिल को नुकसान पहुंच सकता है। शरीर के साथ मत लगाए रक्खे। कोई न कोई रोग आएगा। कानों से हर समय फोन लगाने से कान बहरे हो सकते हैं। हर समय कम्प्यूटर पर काम करने से आंखों पर प्रभाव पड़ सकता है जो टावर जगह-जगह सेल फोनों के लिए लगाए जाते हैं उनसे जो electric rays निकलती है वह दूर-दूर तक वातावरण को दूषित कर देती है। जिससे जहाँ टावर लगा हो वहां से दूर-दूर तक पक्षियों का आना जाना कम हो जाता है। प्रकृति के पक्षी बड़े मित्र हैं। पक्षियों के न रहने से फसलों पर प्रभाव पड़ता है। कई लोग बड़े शौक से अपने घरों की छत्तों पर यह टावर लगवा लेते हैं। वह नहीं जानते कि धीरे-धीरे इस दूषित वायु के प्रभाव से कई रोगों का आक्रमण हो सकता है। जो लोग कम्प्यूटर इत्यादि पर अधिक देर तक कार्य करते रहते हैं उनके लिए बड़ा आवश्यक है कि वह खुली हवा में प्राणायाम करना न भूलें। ताकि शरीर रोग मुक्त रह सके। हम देखते हैं आजकल नये-नये किसम के रोग आ घेरते हैं जिनके विषय में डाक्टरों को भी ज्ञान नहीं होता। इसलिए उनके उपचार के विषय में भी नये सिरे से अनुसन्धान करने पड़ते हैं। आज मानवता इतनी रोग ग्रस्त

हो रही है कि जहां देखो चिड़चिड़े, कमजोर, निकम्मे लोग बढ़ रहे हैं। वायु प्रदूषण से शहरों का जीवन कठिन हो रहा है। लोग संकुचित विचारों के और स्वार्थी होते जा रहे हैं। एक घर में रहते हुए भी एक दूसरे को सहन नहीं कर पाते। दिन प्रतिदिन झगड़ों पर झगड़े बढ़ते जा रहे हैं यह सब मानसिक तनाव के कारण है। मानसिक तनाव प्रकृति से हम जितना दूर होते जाते हैं उतना बढ़ता जाता है। एक दूसरे के सुख दुख की परवाह घटती जा रही है आज का नौजवान outward होता चला जा रहा है। यह सब इन आधुनिक उपकरणों का प्रतिफल है। अत: इनके प्रयोग के साथ-साथ योग को न भूलें और स्वयं को रोगों का शिकार होने से बचाएं। नयी पीढ़ी ज्ञान के प्रकाश से अलौकिक होनी चाहिए, पर स्वास्थ्य की अनदेखी भी नहीं होनी चाहिए वरना एक कमजोर पीढ़ी देश को भी कमजोर कर देगी। अत: इन नये प्रयोगों के साथ ही साथ हमें इनसे होने वाली हानियों को नहीं भुला देना चाहिए? और उनसे जो हानि मनुष्य की होती है उसके प्रतिकार के विषय में भी सोचना चाहिए।



संसृति भगवान का रूप

प्रकृति जड़ नहीं है यह ईश्वर की माया है। हर कृति का उपादान कारण है। कितना कुछ उत्पन्न करती है यह। चेतन से इतनी अविभूत है यह कि चेतन को ही हर समय आकर्षित करती रहती है। इतनी उर्वरा है कि जीवात्मा की चेतना इसके अनुपम अतुल्य खजानों पर आकार्षित होकर लालच में फंस जाता है। यह एक जीता जागता स्वर्ग पैदा कर देती है। चेतन भूल जाता है, इसके प्रेम पाश में फंस जाता है। उसे स्मरण नहीं रहता कि भगवान ने उसे यह सुन्दर काया देकर दिव्य खोज के लिए इस प्रकृति की गोद में डाला है। प्रकृति इतनी जड़ होती तो यह चेतन जीव अपना लक्ष्य भूल पाता क्या। इसके मोह पाश में फंस उसे एक जीता जागता संसार नजर आता है अपने आस-पास के प्राणियों से हमारा लगाव हो जाता है। हजारों कर्त्तव्य आगे बिछ जाते हैं। यह तेज जो सामने दीखता है उसको सच मानने लगते हैं। जो नहीं दीखता उसके प्रति आशंकित हो जाता है। इस प्राकृतिक सम्पदा के लालच में फंस जाता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह का शिकार हो जाता है। यह प्रकृति जिसे जड़ कहते है। एक नटी की तरह इस चेतन को नचाने लगती है और चेतन जीवन भर नाचता है फिर जरजाति होकर मर जाता है। अर्थात् एक शरीर छोड़ता है फिर दूसरा धारण करता है, तीसरा, फिर चौथा और इसी तरह युगों युगों तक इस प्रकृति नटी के नाच को नाचता-नाचता कर्मों के बन्धन में ऐसा फंस जाता है कि होश भूल जाती है। चेतन का अपना स्वरूप गौण हो जाता है। उसे अपनी दिशा, अपना स्वरूप सब भूल जाते हैं। कभी कुछ होश आती है, तो सोचता है मैं कौन हूं ? मैं क्या हूँ ? मैं क्यों हूं ? मैं कहां हूं ? कुछ समझ नहीं आती, अपने भीतर झांकना भूल गया होता है। ऐसे में ही मानव को जरूरत रहती है कोई उसे मार्ग दिखाए। उसे वह क्या है समझाए। उसे उसका असली घर बताए, उसे उसकी असलीयत समझाए। ऐसा कोई सच्चा मित्र मिल जाए जो सोई हुई आत्मा को जगाए। प्रकृति नदी के पाश से चेतन को छुड़ाए। उसी को तो गुरु कहते हैं। गुरु हर कोई नहीं बन सकता। जो ज्यूं ही गुरु बने होते

हैं वह स्वयं भी डूबे होते हैं और दूसरों को भी डूबा देते हैं। कोई-कोई जागृत आत्मा जब अपने स्वरूप में स्थित हो जाती है तो वह दूसरों को मार्ग दिखाने के योग्य भी होती है। ऐसे युग पुरुष जब भी, जहां भी इस धरा धाम पर आते हैं उनके संग में मानव की चेतना जागृत होती है यह प्रकृति नहीं फिर नहीं रहती, यह साधक की साधना के साधन बन जाती है यह उस प्रभु का साकार रूप हो जाती है। चैतन्य महाप्रभु की तरह महाभाव में प्रकृति ऐसा रूप बदलती है कि भक्त उसे देख-देख कर भगवत् भाव में विभोर हो उठता है। सागर की उर्मियों में भी उसे महाप्रभु का नर्तन दृष्टिगोचर होता है। सारी प्रकृति चैतन्य हो उठती है। ऐसे ही थे कृष्ण जिनके लिए वन, लताएं, मृग, पशु, पक्षी, हिंसक जीव तक प्रेम मग्न हो जाते थे। सारे नाच उठते थे। गाएं बेसुध हो कृष्ण के संग हो लेती थीं। सारी प्रकृति लीला स्थली बन जाती थी। नर, नारी, बाल, वृद्ध कृष्ण की प्रेममयी चितवन से खिंची-खिंची कृष्ण का अनुगमन करती थी। कृष्ण की बांसुरी की धुन पर जंगल में मंगल छा जाता था। ऐसे भी कौन कहता है कि प्रकृति जड़ होती है। चेतन की सत्ता तो उसमें भी भरपूर है, मगर निद्रा मग्न है। कभी संगीत की ऐसी महफिल में बैठो की सारी धुनें वर्षा के आगमन का राग छेड़ दें तो देखिए बरसात कैसे आती है। दीपक राग किस तरह एक दिव्य प्रकाश का सृजन करता है। तर्क से इस मधुवन झांकियों को पैदा नहीं किया जा सकता। यज्ञ करो, आकाश को वेद मन्त्रों से गुंजारित कर दो फिर देखें धरती आकाश के नीचे कैसा स्वर्ग उतर आता है। सुगन्ध से कैसा परिवेश बनता है और यज्ञ करता को कितना सुधा से भर देता है। बस एक तन्मयता की आवश्यकता है यह सारी संसृति कृष्ण का वृन्दावन बन जाती है और मानव की अपनी आत्मा कृष्ण का सौन्दर्य बन जाती है। न तो यह सौन्दर्य शालिनि प्राप्ति को त्यागने की आवश्यकता है न कुछ याचना करने की। प्रकृति और प्राण प्रिय प्रभु के बीच की कड़ी बन जाए। शेष सब स्वयंमेव घटित होता है। बस ऐसी हमारी अन्तरात्मा बने तो सही वह लीलाधारी अपना सारा ऐश्वर्य, सारी कृपा, सारा सौरभ आप पर लुटा देने को आपके द्वार पर ही मिलेगा, स्वागत के लिए जयमाला कर में लें। प्रतीक्षारत होकर तो देखें।



भगवान किसके

इतनी बड़ी यह संसृति है इसमें इतने अधिक लोग हैं। इतने मत मतान्तर हैं, जातियां हैं, भाषाएं हैं, रीति रिवाज़ है। हर मत का व्यक्ति ईश्वर को अपना मानता है। आज जन्माष्टमी है, कल ईद होगी परसों क्रिसमिस होगी। हर मत के अपने-अपने त्यौहार है कि चारों तरफ देखकर लगता है कमाल कर दिया उस रचयिता ने। उसके भानुमति के पटारे में से हर समय हर जगह कुछ न कुछ नया निकल रहा होता है, नया घट रहा होता है। अपने को उसने ऐसा छिपा रखा है कि अपनी-अपनी सोच से सब कोई उसको अपने ही ढंग से वर्णन कर रहा होता है। हर मत मतान्तर वाला साधारण जन समुदाय को अपनी-अपनी ओर खींचने में ज़ोर लगा रहे होते हैं। सब ने उस मालिक का नाम अपने ढंग से रखा है अपनी पसन्द से सबका यही कहना है कि उनके ढंग से ही ईश्वर की उपासना करने से वह मिलेगा। मानो ईश्वर पर उन्हीं का एकाधिकार ही। दो ग्रुप लड़ने लगे तो एक बोलता है 'अल्लाह हूं अकबर' दूसरा बोलता है 'हर हर महादेव'। अपनी-अपनी पुकार कर एक दूसरे पर वार करते हैं। वार करते है आपसी वैमनस्य को लेकर और पुकारते हैं एक ही मालिक को अपने-अपने बनाए नाम से। भला वह किसकी सहायता करें और किसे छोड़े। कोई ईश्वर को साकार मानता है, कोई निराकार। साकार मानने वाले उसकी प्रतिमाएं बनाते हैं, वास्तव में प्रतिमा ईश्वर की नहीं बनती उन व्यक्तियों की बनती हैं जो इस धरा धाम पर आकर ऐसे काम कर गए जिससे जन कल्याण सम्भव हुआ। जिन्होंने जीवन को ऐसे आदर्श ढंग से जीया जिससे संसार का भला हुआ और उनका जीवन चरित्र संसार के लिए उदाहरण बन गया। उन्हीं में लोगों ने भगवत दर्शन पाया भगवत् गुणों को पाया।

भारत में ऐसे युग पुरुष प्रचुर मात्रा में हुए और यह परम्परा आज भी अक्षुण्ण है। अतः उनके प्रति आस्था रखने वालों ने मंदिर बनाए जिनमें उनकी मूर्तियां स्थापित कीं। निराकार को तो जानना, पहचानना, आराधाना कठिन लगा। साक्षात् धरा पर अवतरित होने वाले यह दिव्य चरित्र लोग ही भगवान् लगे और मूर्ति पूजा की प्रथा चल निकली। हजरत मुहम्मद यदि अपनी कोई तस्वीर या मूर्ति निशानी के लिए छोड़ जाते तो मुस्लिम प्रजा की जितनी उनके प्रति आस्था है वह उनके आगे झुकने से

न रुक सकते। उनके एक बाल को लेकर यदि हजरत बल मस्जिद बन सकती है तो उनका पूरा स्वरूप पाकर लोग श्रद्धा से नत क्यों न होते ?

सच तो यह है कि महापुरुष पूज्यनीय ही होते हैं। उनके परोपकारी जीवन जनता की श्रद्धा प्राप्त करते हैं। ईसा मसीह की क्रास पर चढ़ी देह को आज किस गिरजा घर में स्थान नहीं मिला ? महात्मा बुद्ध की मूर्ति कहां-कहां नहीं बनी। उनके बुद्ध धर्म के प्रचारक जहां भी गए बुद्ध भगवान की मूर्तियां भी बनीं। जैन धर्म के अनुयायियों ने भगवान महावीर और उनसे पहले हुए किस महापुरुष के आगे मस्तक नहीं झुकाया। यह तो बात है उन महापुरुषों की जिन्होंने संसार को रास्ता दिखाया। लोगों को मुक्ति और धर्म के मार्ग की तरफ मोड़ा। हम तो देखते हैं कि कोई भैरव की कोई किसी अन्य यक्ष किन्नर की मूर्ति बनाकर बैठा है, कोई नाग देवता की मूर्ति के आगे शीशा झुका रहा है। उसके आगे देखिए सिकन्दर के प्रशंसक सिकन्दर को, हिटलर के प्रशंसक हिटलर की याद के आगे भी अपना मस्तक झुकाते हैं। यह कहने में अतिश्योक्ति नहीं होगी कि आज आतंकवाद के पुजारी अपने आतंकी गुरु की भी पूजा उसी श्रद्धा से करते होंगे जैसे वह ही उनका भगवान हो तभी तो स्वयं अपने आप को बम बनाकर वह स्वयं आत्मदाह कर लेते हैं। कौन सी आग उनके अन्दर जल रही है। इस प्रकार ईश्वर को काट-काट कर मानव ने उसके हजारों टुकड़े कर दिए हैं। पर पूछे कोई इतने खुदा हैं क्या ? उत्तर तो एक ही है कि परमात्मा एक है, एक था एक रहेगा। मगर पुजारियों में इतने मतभेद हैं कि वह उसे एक बना रहने देना नहीं चाहते। सुना है मक्का में जहां लोग हज्ज करने जाते हैं वह स्थान किसी जमाने में एक बहुत बड़ा मन्दिर था जिसमें बहुत से देवी देवताओं की मूर्तियां थीं। सब मूर्तियों को तोड़कर साफ कर दिया गया पर एक पिण्डी हजरत साहब ने नहीं तोड़ी। आज जो भी हज करने जाता है वह उस पिण्डी को चूमता है। जो चूमने में सफल हो जाता है वह अपने को धन्य मानता है। ईश्वर को मानना मानव स्वभाव में स्वतः ही आ जाता है। जीवन मिला, कैसे क्यों, किस लिए, कई प्रश्न जो मानव को मिलते हैं और दूसरे ईश्वर की बनाई सृष्टि को मानव जब देखता है तो उस रचनाकार का ध्यान आ जाता है जरूर कोई बनाने वाला है। कुछ लोग नास्तिक भले ही हो जाएं अधिकतर किसी अज्ञात शक्ति का सहारा लिए बिना जी नहीं सकते। तो ईश्वर तत्व की खोज यहीं से प्रारम्भ हो जाती है यह खोज कोई नयी नहीं है। आज से करोड़ो वर्ष पहले से यह सृष्टि बनी होगी तब से ही यह खोज भी आरम्भ हो गई होगी। भारतवर्ष एक सौभाग्यशाली देश है जिसमें आदि ऋषियों ने इस अनुसन्धान में इतना श्रम किया हुआ है कि आदिकाल से आज तक मानव को जिस

जीवन की, जीवन उद्देश्य की, जीने के ढंग की आवश्यकता हो सकती थी, या है उस सब पर बड़े विषद् ढंग से प्रकाश डालकर जितना ईश्वर आत्मा प्रकृति और उसके साथ मानव धर्म, मानव जीवन के लिए जो भी कुछ ज्ञान आवश्यक है सब आज तक हमें वेदों, शास्त्रों के रूप में उपलब्ध है। मनुष्य की बुद्धि कितनी भी भ्रमित होती रहे उसे फिर से ठिकाने पर लाने के लिए हमारा अध्यात्मिक साहित्य हमें प्राप्त है। इसमें संगीत विद्या, भूगोल विद्या हर प्रकार के कला कौशल, वनस्पति, खनिज मानव में, होने योग्य सभी गुण प्राप्त हैं। हम एक समृद्ध संस्कृति के मालिक हैं। हमारी विरासत, बड़ी अनमोल है। हम यह सब कुछ जब अध्ययन में रत होकर जानने का प्रयत्न करते हैं तब मेरे मन में एक प्रश्न कौंध जाता है कि हमारी बौद्धिक ज्ञान गरिमा इतनी समृद्ध है क्या जो लोग यह सब कुछ नहीं जानते या जिनके पास यह साहित्य नहीं है या एक परमेश्वर को छोड़ देवी देवताओं की पूजा में समय खर्च करते हैं क्या उनको ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती ?

इसका उत्तर खोजने में भी बहुत श्रम करना पड़ा, ज्ञान की गरिमा से पण्डित होना किसी-किसी भाग्यवान के भाग्य की बात है। हमारे जैसे साधारण लोग तो भगवान का थोड़ा सा नाम ले सकें उसको याद रख सके यही बहुत बड़ी बात है। फिर ईश्वरीय तत्व को हम कितना जानते हैं इससे ज्यादा महत्वपूर्ण हैं उसको स्मरण करना, नाम जपना, उसको अपना समझना। संसार को देखकर संसार को बनाने वाले के विषय में सोचना, हमारे लिए जिसने इतना कुछ दिया उसका धन्यवाद करना उसको याद रखना। बाकी सब कुछ इसके बाद ही शुरू होता है। कीर्तन करना, मन्त्र जपना, यज्ञ करना और उस रचनाकार से तादातम्य, साधना, फिर उससे प्रेमभाव रखना, सबमें उसका रूप देखना, दूसरों का भला सोचना, अनेकों गुण आ जाते हैं उसमें जो उस परम पिता को अपना बना लेता है। जो भी उसकी राह पर चल पड़े भगवान के सारे ऐश्वर्य उसके लिए हैं। कोई नाम, कोई धर्म, कोई जाति हो जो उसे पाने का प्रयत्न करेगा वह उसकी जरूर सुनेगा। जो उस पर अपना प्रेम लुटाएगा। वह भी उसके लिए उसका हो जाएगा इस प्रकार भगवान् किसका है भगवान सबका है। बूंद ने सागर से कहा तुमने मुझे क्यों रचा। सागर हंस कर कहता है-मेरा पारावार तेरा ही समूह है। अलग गई हो तो फिर से मेरी तरफ आ जाओ। बूँद मुँह मोड़ चली गई किसी गन्दे नाले में गिर पड़ी। कैसे उद्धार हो। फिर से पवित्र होने के लिए श्रम करना पड़ेगा। लौट आएगी तो बूँद सागर हो जाएगी। सागर हो गई तो गन्दे नाले को क्यों याद करेगी, सागर हो गई उसका निर्वाण हो गया। अब वह निर्बल नहीं सागर है उसके प्रवाह में बल है उसका पारावार अनन्त है। बस यही तो कहानी

है आत्मा और परमात्मा की। जीवात्मा इस संसार की गन्दगी को अपने में उतारते रहे तो सागर से उसकी पहचान भी नहीं रहती। वह जिस परिवेश में होती है अपने को वही समझते है। जैसे ही उसने स्वयं को पहचाना उसका रूप पारदर्शी हो गया, शक्ति का पुंज हो गया। निर्मल होते-होते शीशे का मल साफ हो गया कि उसमें भूत, भविष्य, वर्तमान, दूरस्थ, नजदीक सब उसमें परिलक्षित होने लगे, पारदर्शिता आ गई। परिश्रम करने से स्वयं का मार्जन करना पड़ेगा। ऐसी ही परिमार्जित आत्माएं हैं जो सन्तों, ऋषियों, मुनियों के जीवन का आधार है। उनकी पारदर्शिता में झलक रही है प्रभु की तस्वीर और आत्मा बुद्धत्व को प्राप्त करता है।

यह सम्बन्ध है आत्मा का परमात्मा से। हर प्राणी का उस भगवान से ऐसा ही रिश्ता है। यहां एक ऐसा अनुपम परिवेश है जिसमें न कोई ऊंच है न नीच कोई जाति नहीं आत्मा की। सन्त बस सन्त है। इसी दर्शन के मालिक हैं हम। यह हमारी धरोहर है। उस एक पिता को अपनी सब सन्तानें प्रिय हैं।



जानना और मानना

व्यास पीठ पर बैठे शास्त्री जी बोले जो ईश्वर को जानते हैं वह मानते नहीं। निरन्तर मनन चल रहा है कि जानने और मानने में अन्तर क्या है ? हम ईश्वर को क्या, कितना, कैसा और कैसे जानते हैं। अधिकांश लोग इस तरफ से बेफिकर रहते हैं। ईश्वर है भी या नहीं, इस तरफ से ध्यान देना नहीं चाहते। पर जिन भी लोगों ने स्वयं को ईश्वर की खोज में लगाया, गहरे में उतरे, ईश्वर को समझने का प्रयत्न किया, जितना-जितना उसको जाना तो फिर मान भी लिया। बेशक मन का पक्षी डोलता रहा, जानने और मानने के बीच। जब हम किसी जीवित गुरु या किसी देव मूर्ति के आगे बैठ कर ईश्वर में ध्यान लगाने का प्रयत्न करते हैं तो हमारे सामने गुरु जी अथवा मूर्ति होती है। ईश्वर मूर्ति नहीं मूर्ति उन देव पुरुषों की होती है जो इस धरा धाम पर जीवन की लीलाएं रचकर, आदर्श देकर, जीवन की कला समझा कर चले गए। गुरु जी भी परमात्मा नहीं होते, हमारी तरह हाड़ मांस के ही होते हैं। गुरु जी तो वही हो सकते हैं जो साधना, तपस्या से अपने भीतर ईश्वरीय शक्ति को जागृत करके उसके वास्तविक स्वरूप को समझते हों। जो जानता होगा वह मानता तो होगा ही। जो जानता ही नहीं वह क्या मानेगा ? या जब हमें गुरु जनों के समझाने से ईश्वर को मानना तो आ जाएगा पर हम जब तक स्वयं उसे समझने का प्रयत्न नहीं करेंगे जान नहीं सकते। ईश्वर को समझने के लिए सर्वप्रथम हमें अपने आचार्यों पर विश्वास करना होगा आचार्य वेदों के ज्ञाता हों तो ईश्वरीय तत्व को समझने में आसानी हो जाएगी। ईश्वर कोई व्यक्ति नहीं, कोई पदार्थ नहीं, कोई कौम नहीं, कोई धर्म नहीं। वह तो वह सत्ता है जिससे इस पूरे ब्रह्माण्ड का खेल रचा रखा है। जो सब कुछ के भीतर बाहर ओतप्रोत है। सारे ब्रह्माण्ड के क्रिया कलाप को अकेला चला रहा है। वह इतना विशाल है कि कोई स्थान उससे खाली नहीं। इतना सूक्ष्म है कि छोटी से छोटी चींटी तक में भी उनका निवास है। इस सत्य को समझते हुए भी उसको अपनी भाव भूमि में लाना आसान नहीं है। यदि ईश्वर समझ में आ जाए तो जानने और मानने में क्या अन्तर। ज्यूँ ही कोई कहता रहे मैं ईश्वर को जानता हूँ, मैंने उनके दर्शन किए हैं तो यह सफेद झूठ है। जिसका कोई आकार नहीं उसके दर्शन करने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता। क्योंकि पहले ही मैं कह चुकी हूं कि किसी भी देवता की मूर्ति भगवान नहीं होती, वह तो उस देवता की मूर्ति है,

देवता नहीं। देवता ने जैसा जीवन बिताकर जिन आदर्शों का प्रतिपादन किया लोगों ने उनके सम्मान में उनका मन्दिर बनाया, मूर्ति बनाई और श्रद्धा का प्रदर्शन किया। ईश्वर को जब तक हम अपनी अनुभूति में नहीं लाते उसके प्रति सारी जानकारी पुस्तकी ज्ञान है। ऐसा तो संसार सर्वप्रथम और सम्पूर्ण ज्ञान करें। वेदों ने भी माना और डंके की चोट पर कहा कि पढ़े हुए ज्ञान से ही ईश्वर नहीं मिल सकता या हम उसे नहीं जान सकते। हमें स्वयं को, मन, चित्त, बुद्धि को चिन्तन को उस भाव भूमि पर ले जाना पड़ेगा कि हम अपने भीतर उसे महसूस कर सकें। जब तक ऐसा नहीं होता हमारा जानना और मानना दोनों मौखिक हैं। मन के धरातल को शुद्ध पवित्र करने के लिए मन्त्र जाप करना होगा, यज्ञों में बैठकर यज्ञ द्वारा उसे भीतर लाना होगा। शुद्ध हृदय में उसको प्रतिष्ठित करना होगा, उसमें एकात्मता स्थापित करनी होगी। कहते हैं जो उसकी इस विकट तलाश में आगे निकल जाता है वह उसी में डूब जाता है, जो डूब जाता है वह वही हो जाता है वह गुंगे के गुड़ कितना मीठा, कैसा मीठा बता नहीं पाता। कह कर चुप हो जाता है। उसके लिए कुछ और प्राप्त करने योग्य रहता ही नहीं। बस इसी को जानना और मानना कहा जा सकता है। उसकी अपरम्पार महिमा को समूचा ग्रहण कर लेना कठिन ही नहीं असम्भव है। फिर भी असम्भव कह कर छोड़ देना अभीष्ट नहीं है। हां यह कहिए कि जिसने जितना जान लिया, मान भी लिया। उसे और आगे चलने की, बढ़ने की आवश्यकता है और यह यात्रा निरन्तर चलती ही रहनी चाहिए वेद का मन्त्र कहता है–

उद्वयं तम सस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्
देवम् देवत्रा सुर्यमगन्म् ज्योतिरूत्तमम्।

यह मार्ग अनन्त तक है और ज्ञाता की ज्योति नित नयी सवाई होती रहे। जो भी इस मार्ग का पथिक होता है उसे दर्शन मात्र से मानव को ईश्वरीय शक्ति का आभास होने लगता है क्योंकि ज्यों-ज्यों मानव जीवन में इस उन्नत मार्ग की तरफ चलता है उसके अंग-अंग से, हर क्रिया से सम्पूर्ण जीवन में जो घटता है वह ईश्वर की वर्तमानता का उसकी शक्ति का आभास दिलाता है और फिर जानना तथा मानना दोनों एक दूसरे में मिल जाते हैं। विश्वास की बैसाखी लेकर इस ज्योतिर्मय मार्ग पर बढ़े चले तो आस्था दिन प्रतिदिन दृढ़ से दृढ़ तर होती जाएगी। आपकी आंखों का प्रकाश आपके अन्तर को प्रकट कर देगा।



मूर्ति पूजा

मूर्ति पूजा के बारे में बहुत सोचती हूँ। मूर्ति पूजा है क्या ? इस धरा पर जब वेदों का प्रादुर्भाव हुआ। तब इतिहास अभी नहीं था। इतिहास तो बाद में आया। जब-जब कोई महान व्यक्तित्व इस धरा को धन्य करता रहा इतिहास बनता रहा। अच्छा भी, बुरा भी। क्योंकि मानवीय कमज़ोरियां आ ही जाती हैं। पर हम इतने भाग्यशाली हैं कि हमारे पूर्वज ऋषि, मुनि, तपस्वी, योगी अलौकिक विलक्षण और आदर्श हुए। अपना पुरातन साहित्य भी ऐसा है कि भारत हो क्या सारे विश्व को मार्ग दर्शन करने का सामर्थ्य उसमें है। उन्हीं पावन उच्च आदर्शों को लेकर जीवन यापन करने वाले युग पुरुष इसी धरा पर जन्म लेते रहे। यदि इतिहास न बनता तो आज हम अपने अतीत को न जान पाते। इतिहास भी शायद पूरा हमारे तक पहुँचा नहीं है क्योंकि हम आज के इतिहासज्ञों से जान चुके हैं कि बाहरी आक्रमणकारियों ने हमारे इतिहास को नष्ट करने में भी कोई कोर कसर नहीं रखी। हमारी लायब्रेरियां छः छः महीनों तक आग की भेंट होती रही जब कि छापे खाने न होने से पुस्तकें भुज पत्तों पर हस्तलिखित होती थीं। फिर भी अपनी अतीत की समृद्धि के साक्ष्य जहां नालन्दा, तक्षशिला विश्वविद्यालियों के आज खण्डहर हमें प्राप्त हुए वहीं मन्दिरों ने भी इतिहास की साक्षी देने का भरपूर कार्य किया। आज बड़े पुराने से पुराने मन्दिर हैं जिनमें किसी न किसी अवतार, ऋषि, अवधूत, सती, देशभक्त, शहीद, कुल देवता की मूर्ति और कथा मिल जाती है। मूर्ति की कला बहुत प्राचीन है– बौद्ध काल और जैन काल से पहले की। रामेश्वरम का शिव मन्दिर भगवान राम का प्रारम्भ किया गया है। रामेश्वरम् में आज भी लगता है जैसे हम किसी युगों पहले के भूभाग पर पहुंच गए हैं। ईश्वर की मूर्ति तो कोई बना ही नहीं सकता क्योंकि यह पूरा विश्व पूरा ब्रह्माण्ड ही उसकी मूर्ति है पर जैसे जीवात्मा शरीर नहीं, वस्तु नहीं ठोस नहीं। इसी से हम जानते हैं कि भगवान् की भी कोई मूर्ति नहीं सारे कण-कण में जो समाया है उसका रूप क्या। रूप जो आज बनते हैं कल ढल जाते हैं, पर जब पुण्यात्माएं इन रूपों में ही जब हमारे सामने आती हैं तो आत्मा को हम न देख सके, न छू सके, न पकड़ सके। पर उस घट को छू सकते हैं, देख सकते हैं, पकड़ सकते हैं जिस में उस पुण्यात्मा ने निवास किया। पूज्य हजरत मुहम्मद जी का एक बाल 'हजरत बल' बन जाता है उस बाल के दर्शन करने जनता टूट पड़ती है तो क्या हजरत मुहम्मद जी का चित्र मिल जाता तो जनता को श्रद्धा न होती, शीश न झुक जाता ? हम

कुछ मिथ्या विश्वास भी पाल लेते हैं। जो हमारे भीतर भी प्रश्न चिह्न से बने रहते हैं पर मान्यता यही कहती है कि न माने, तो हम नहीं मानते। ईसा मसीह जो की मूर्ति क्रास पर टंगी हर गिरजा में पाई जाती है ईसाई समाज क्या उस मूर्ति को साक्षी बना कर नहीं चलता ? वह मूर्ति तो ईसा मसीह नहीं है, न ही हजरत बल का बाल हजरत मुहम्मद है। पर उन पावन आत्माओं की भी यह साक्षियां अनुयायियों के लिए प्रिय हो जाती हैं। भारत में तो कितनी महान आत्माओं ने जीवन जीकर मानवता को जीने की राह दिखाई। जीवन का दर्शन दिया। शैल माडल बन गए वह और जगह-जगह उनकी मूर्तियां स्थापित हो गईं। दीर्घ जीवन जीएं उन लोगों ने और ढेरों अध्यात्मिक, भौतिक सम्प्रदाएँ प्रदान कीं। संसार के ज्ञान का कोई क्षेत्र नहीं छोड़ा। आज हमारा ज्ञान समृद्ध है। परन्तु अशिक्षा के कारण भिखारी बने हुए हैं। कभी हमें अमेरिका आदर्श लगता है। कभी हमें यूरोप आदर्श लगता है। कभी हम अरब देशों की तरफ देखते हैं और उन लोगों से भीख मांगते फिरते हैं। आज हमारे पास जो शिक्षा है वह भी उधार की है। हमने अपने अतीत को झांकना छोड़ दिया, अपने खज़ानों को खोलना बन्द कर दिया। बाहर के लोगों ने हमें नालायक कहा, हम मान गए। फिर भी हमारे अतीत को, हमारे इतिहास को सम्भाला है हमारे मन्दिरों ने। एक-एक कहानी आज खुल सकती है हमें हमारे गौरव दिखा सकती है।

हाँ गलत क्या हो गया, यह भी हमें नहीं भूलना होगा। क्योंकि बाहर के आक्रान्ताओं से अधिक हमारे भीतर के धूर्त भी हैं जिन्होंने देश की संस्कृति और सभ्यता को तबाही के कगार पर पहुंचा दिया। उसी तबाही, उसी पाखण्ड, उसी नीचता ने स्वामी दयानन्द जी को रुला दिया, देश धर्म और संस्कृति का नाश देखकर महार्षि का हृदय रो उठा। वेदों का ज्ञान अपने पूज्य गुरु विरज़ानन्द जी से पाकर सत्य का अन्वेषक सक्रिय हो उठा। संस्कृति मरी नहीं थी, दिग्भ्रमित हो चुकी थी। मन्दिरों के देवता ही असली भगवान् हो गए। कई प्रकार की भोंड़ी कथाएं गढ़ी गई, धन के लालच में पण्डा लोग बुरी तरह फंस गए। मन्दिरों में प्रसाद के नाम पर बलि प्रथा चली। जिससे माँस भी प्रसाद बनकर बंटने लगा। देवदासियों की प्रथा चली, जिनसे पाखण्डी और धूर्त लोग मन्दिरों के मालिक बनकर जनता को दिग्भ्रमित करके अपनी स्वार्थ सिद्धि करने लगे। बात-बात पर लोगों को डराने धमकाने लगे कि देवता नाराज हो जाएगा तो आपका यह नुक्सान होगा, वह होगा। और तो और यह पोंगा पण्डित शास्त्रों के विषय में भी काला अक्षर भैंस बराबर। जो जाति का ब्राह्मण होता वह पुजारी बन जाता। मन्दिर भगवान का स्थान नहीं रहे। नर बलि भी चढ़ा दी जाती। देवता के आदर्श से कुछ सीखने की जगह यह हो गया कि लोग यही प्रार्थना करते कि उसके कार्य की सिद्धि देवता कर दें। चोर भी चोरी करने जाता तो काली माता को मत्था टेक कर जाता कि माता उसके कार्य में सफलता दे। आज भी हम देखते

हैं बहुत कम मन्दिर हैं यहां विद्वान लोग जुटे हैं। नहीं तो अनपढ़ औरतें, अनपढ़ पण्डितों की ऊटपटांग कथाएं आती और घर में कोहराम मचा देती। अभी भी गोवत्स पूजना एकादशी को पण्डिताईन कथा सुनाती है– सास बाहर गई और बहू को बोल गई छिक्के पर मच्छी पड़ी है बना लेना। बहू ने गलत सुना उसने बच्छी (गाय का बच्चा मार कर बना दिया। जब सास आई तो बड़ा घबराई और गले में कपड़ा डालकर प्रार्थना करने लगी। जै बेचरी बच्छ दुआई बहू के पाप को माफ कर देना और जब सांझ को गय्या आए तो बछड़ा उसके साथ आए। ऐसा ही हुआ और उस दिन से गोवत्स पूजन होने लगा। अब बताओ भारत में जब कि गाय को मातृवत पूजा जाता था। बछड़ा मारकर पका दिया। क्या भारतीय गौभक्षक थे ? फिर मार कर पकाया हुआ बछड़ा जिन्दा होकर गाय के साथ आ गया। कितना बड़ा झूठ है। ऐसी झूठी कथाएँ एक नहीं अनेक हैं। पूजा के तरीके भी बड़े भौंड़े हैं।

शिवरात्रि को मन्दिरों में शिव का नाटक जंगम करने आते हैं। एक लड़की को पार्वती बनाकर एक लड़के को शिव बना देते हैं और उट पटांग बकवास करके शिव विवाह का दृश्य बनाते हैं। फिर कहते हैं पांच वर्ष की कन्या का दान कर देने से मोक्ष मिलता है। सात वर्ष की कन्या विवाहने से स्वर्ग मिलता है। जो ऐसा नहीं करते वह नरक में जाते हैं। लोग अरदासें करवाते हैं। 2-4 हजार रुपए ज्यूं बटोर कर जंगम चलते बनते हैं। भला इसी को शिव विवाह कहते हैं ? करवा चौथ को वीरों कुड़ी की कथा बनाई हुई है। जो पढ़ी लिखी स्त्री भी आज तक चला रही है। ऐसी अनेकों कथाएं हैं। किसी के मरने पर गरुड़ पढ़ते हैं बड़ी भौड़ी भाषा में औरतों के हजूम में कथा सुनाई जाती है। इस भ्रम जाल का कोई पारावार नहीं है। तकरीबन सब त्यौहार इसी तरह के हैं। कोई ज़िन्दगी भर शनि को पूज रहा है कोई भैरों का भक्त है कोई देवी माता के नाम पर कथा सुनाता है कि भक्त ने अपनी जिह्वा काट कर चढ़ा दी और सुबह तक उसकी जिह्वा फिर से निकल आई। लखनऊ में सन्तोषी माता के मन्दिर में एक ने कथा सुन कर अपनी जिह्वा काट कर चढ़ा दी खून बहता रहा जिह्वा तो नहीं निकली पर उस व्यक्ति को पुलिस पकड़ कर ले गई। इस तरह के नालायक पण्डितों के कारण धर्म की जो हानि हुई उसका वर्णन कैसे करें। और आज जब शिक्षा का प्रचार हो चुका है। इन पाखण्डों से दुनिया फिर भी बाहर नहीं निकली। मूर्ति रो रही है, मूर्ति हँस रही है, मूर्ति प्रकट होकर भक्त के घर जा रही है। जाने क्या सुनने को मिलता है। ऐसे में मूर्ति पूजा का खण्डन करके स्वामी दयानन्द जी ने जो खण्डन-मण्डन का डंका बजाया तो यह पौंगा पण्डित तिलमिला उठे अपनी रोजी रोटी पर प्रहार होता देखा स्वामी दयानन्द उन्हें अपना शत्रु दिखने लगे। 16 बार जहर देकर उन्हें मार डालने की कोशिश की गई फिर भी सुधार के लिये वह डटे रहे, समाज की आंखें खोलने के लिए उन्होंने अपने जीवन की बलि दे दी। पर सच

तो यह है कि मन्दिरों में अब भी सुधार नहीं हुआ। वह ऐसे ही लकीर के फकीर हैं। क्योंकि वह लोग खुद अन्धेरे में हैं औरों को रोशनी कहां से देंगे। वह लोग जो उनके चंगुल से बाहर आते हैं, उनके माया जाल को जान जाते हैं। परन्तु वह क्यों लोगों को अपने माया जाल से निकलने दें। उन्हें तो अपना स्वार्थ अपनी रोजी रोटी उसी में दिखाई देती है। इसी से कोई आंखें खोलने वाला महा पुरुष इस धरा धाम पर जब आता है तो उसे कई प्रकार के सन्ताप इन्हीं लोगों के हाथों सहने पड़ते हैं। दिन जितना प्रकाशमान है रात उतनी ही अन्धेरी। अन्धेरे की छाती फाड़ कर प्रकाश आता है पर प्रकाश को निगलने का अन्धेरे का प्रयत्न भी सदा बना रहता है।

मूर्ति बनाना एक अद्‌भुत कला है। एक निर्जीव पत्थर में कला के हाथ उसे मुखरित कर देते हैं– मूर्ति इतिहास भी बनती है, मूर्ति बिन बोले मानव को संकेत में जीवन का दर्शन भी समझाती है, उपदेश भी देती है। पर मूर्ति भगवान् नहीं होती भगवत् सत्ता को समझने के लिए मूर्ति नहीं। मूर्ति को बनाने वाले किसी महान कलाकार की खोज जिसने यह सारी मूर्तिमान संस्कृति की रचना की, उसकी आराधना, अर्चना की आवश्यकता है। प्रकृति जिसकी दासी है उसके चरणों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित होने की आवश्यकता है। क्योंकि जीवन का कल्याण करने की सामर्थ्य उस करतार में है, बाकी सब उसके खिलौने हैं उसे जानने के लिए वेदों की शरण में जाने की आवश्यकता है। वेदों में पौंगा पण्डिताई नहीं है। हां वेदों ने यह बार-बार मानव को समझाने का प्रयत्न किया है कि विद्वानों, आचार्यों, ऋषियों की शरण जाकर ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करो। देवता जड़ भी है जिनमें वायु, जल, अग्नि, सूर्य, आकाश सब देवता है। जो मानव कल्याण का कार्य करते हैं वह देवता है और जो मुक्तात्मायें हैं वह ईश्वरीय तत्व में विलीन होते हुए भी उन्हें जब-जब धरा पुकारती है कल्याण के लिए, स्वस्ति के लिए, सबके लिए अपना वरद हस्त आगे बढ़ाते हैं वह भी सब देवता हैं इन सभी देवताओं से यह धरा सेवा प्राप्त करती है, करती रहेगी। जो पुण्यात्माएँ धरा धाम पर अपना पावन जीवन जी कर आदर्श स्थापित कर गई वह भी स्वस्ति के लिए सदा वर दायिनी बनी रहती है। नारी या पुरुष रूप में जो ईश प्राप्ति का प्रसाद स्वयं भरपूर खा चुके हैं। उनका वरदायी होना ही संभव है उनको याद करना, उनका गुण गान करना, उनकी कृपा की अपेक्षा करना कदापि गलत नहीं है। उनकी मूर्तियां बनाना भी मेरे विचार से गलत नहीं। यह तो मानव को उनके प्रति श्रद्धा और आदर भाव के कारण है। हम उन्हें क्यों भूल जाएं। भारत में ऐसे महान् ऋषि तपस्वी बहुत हुए हैं देश का उनके प्रति कृतज्ञ होना ही चाहिए। उनकी मूर्ति को नमन करना ही चाहिए। यह तो मानवता के गौरव की बात है। भगवान् कृष्ण ने गौ माता के प्रति गौवत्स पूजन का त्यौहार बनाया तो मनाना ही

चाहिए ताकि गौ माता को हम न भूलें। हमारी संस्कृति अपने अतीत पर पोचा फेर देने की सीख नहीं देती। अतीत के कन्धों पर वर्तमान खड़ा है और वर्तमान की गोदी में भविष्य का निर्माण है। बस हमें वितण्डवाद को अपने देश से दूर भगाना है। ताकि हमारी शुद्ध संस्कृति में मिलावट की गन्दगी प्रवेश न कर पाए। मत मतान्तरों के चक्र में हमारी संस्कृति बंटे नहीं। एकत्व को प्राप्त हो। मीरा के पास मूर्ति है तो यदि नहीं है तो भी कृष्ण उसके रोम-रोम में है। रोम-रोम में राम है तो मानव भगवान् है। मानव ही देवता बनता है। मानव ही ईश्वर का रूप हो जाता है और फिर उसकी दृष्टि में यह पूरा विश्व ही भगवान् की मूर्ति बन जाता है। यहीं पर विश्व के सारे तर्क समाप्त हो जाते हैं। मन्दिर प्रभु भक्ति के स्थान हैं उनके वातावरण को पवित्र रखने का हमारा कर्त्तव्य है। यह जगत उस प्रभु की लीला स्थली है और नित्त नये खेल हम देखते हैं। हमारी श्रद्धा अपने अतीत के हर महा मानव से जुड़ी रहे तो हम अपना जीवन सर्वश्रेष्ठ बनाने की प्रेरणा पाते रहेंगे। मानव इतना कमजोर है कि अच्छी बातें जल्दी भूलता है कमज़ोरियों का ग्रास बना रहता है, यदि हम अपने को सदैव सत्संग में विभोर रखें तो यह हमारी बुद्धियों को भ्रमित नहीं होने देंगे। हम अपने कदम सुधारने में अपना श्रम लगाएंगे। कर्त्तव्य रूप में हमें जीवन के सारे व्यापारों का निर्वहन करते हुए अपना पथ प्रशस्त करते रहें तो हमारे आगे हमारा लक्ष्य स्पष्ट रहेगा और सब महा मानव, सब जड़ देवता भी हमारा सहयोग करने में तत्पर रहेंगे। मूर्ति के रहस्य को जानना, जो मूर्ति में प्रतिपादित हैं उसके उच्च आदर्शों को प्राप्त करना, हमारे जीवन का धर्म लक्ष्य है न कि मूर्ति के आगे खाली आरती गाकर अपने कर्त्तव्य की इतिश्री मना लेना।



अहं निर्विकल्पों निराकार रुपों

बड़ा अटपटा लगता है यह सोचकर कि जो दिखाई दे रहा है वह सच नहीं है, जो दिखाई नहीं दे रहा वही सच है। छन्दोग्य उपनिषद् में शिष्य गुरुदेव से पूछते हैं आत्मा का स्वरूप क्या है ? गुरुदेव शिष्यों को आत्मा का स्वरूप समझाते हैं तो निषेधात्मकं ढंग से। क्या यह शरीर आत्मा है ? नहीं शरीर तो समाप्त हो जाता है आत्मा समाप्त नहीं होती। क्या यह आंख आत्मा है ? नहीं जिस शक्ति से आंख देखती है वह आत्मा है। क्या कान आत्मा है ? नहीं कान जिस शक्ति से सुनते है वह आत्मा है। इस तरह एक-एक अंग गिनकर आत्मा के विषय की ओर मोड़ने का (शिष्यों को) गुरु जी प्रयत्न करते हैं। यह सब कुछ जो दृश्यमान है सब नाशवान है पर आत्मा वह तत्व है जो नाश नहीं होता। आत्मा अमर है, अजर है, वियु है और आदि गुरु शंकराचार्य जो अपने में और भी सुन्दर ढंग से आत्मा के दर्शन करवाते हैं।

मनो बुद्धि अहंकार चित्तान माहम् आत्मा मन नहीं है, मन विकारी हो सकता है आत्मा उससे परे है, बुद्धि भी नहीं है, बुद्धि नष्ट हो सकती है, आत्मा नहीं। चित्त भी नहीं है, अहंकार भी नहीं है। न तो कान आत्मा है, न जिह्वा आत्मा है, न नासिका आत्मा है, न नेत्र आत्मा है यह आकाश भी आत्मा नहीं यह धरती भी आत्मा नहीं, यह प्रकाश भी आत्मा नहीं, यह वायु भी नहीं। यह पाँचों प्राण भी नहीं, यह पांच प्रकार की अग्नियां भी आत्मा नहीं, जल भी नहीं, यह धातु भी नहीं, यह धन दौलत के कोष भी, वाणी भी नहीं, हाथ भी नहीं, पांव भी नहीं यह मल मूत्र द्वार भी नहीं, रोग, द्वेष, लोभ, मोह, मद मत्सर। न धर्म, न अर्थ, न काम, न मोक्ष कुछ भी आत्मा नहीं न पुण्य, न पाप, न सुख, न दुःख, न बन्धु, न मित्र, न ही मन्त्र, न कोई तीर्थ, न वेद, न यज्ञ, यहां तक कि न भोजन, न भोज्य, भोक्ता कुछ भी आत्मा नहीं। आत्मा की मृत्यु नहीं होती। आत्मा की कोई जात-पात नहीं होती, आत्मा के कोई माता पिता नहीं, न ही आत्मा मरती और जन्मती है। आत्मा का शुद्ध स्वरूप है निर्विकल्प, निराकार, विभु, व्यापक सर्वत्र सर्व इन्द्रियों में भी। यहां एक रस सम रहना और भक्ति और बन्धन से परे का तत्व है आत्मा।

सारे गुण दोष ओढ़े हुए हैं, परिधान है जो यह आत्मा प्रकृति के संयोग से

ओढ़ती है। स्वतन्त्र है फिर यह आत्माओं का भण्डार इतना विविध इतना विरोधाभासी इतना बहुरूपिया क्यों दिखाई देता है। जितने आत्माओं के गुण बताए गए। यह सारे गुण तो उस परम पिता परमात्मा के हैं। परमात्मा से ही अलग होकर यह आत्माएं विभिन्न रूपों में, योनियों में, घटकों में आ विराजमान होती हैं और प्रकृति के संयोग से एक नयी लीला प्रकट हो जाती है। इतनी विविधता से यह पूरा ब्रह्माण्ड भरा पड़ा है कि जिसे निहार-निहार कर बुद्धि चकित हो जाती है। स्वयं हमारा अपना आत्मा ही समझ से परे है। हम सभी आत्माओं का स्रोत तो एक है पर इस संसार की हवा लगते ही विविधता का जाल बिछ जाता है। हमारे ओढने के लिए कितना कुछ है पर चयन करने का अधिकार हमारा है। इसीलिए हमारा सबसे बड़ा मुख्य कर्त्तव्य यह बन जाता है कि हम स्वयं अपनी खोज में लगें। हमारे पूर्वजों ने अपने जीवन इस खोज में, अन्वेषण मे लगा दिये और हमें यह कुंजी थमा दी कि जो कुछ दृश्यमान है सब नाशवान है, कभी न कभी सब रूप बदल लेता है, नष्ट होता है। पर वह तत्व जिससे तू बना है, जो तेरा असली रूप है, वह निर्विकल्प निराकार विर्भुव्याप्य है तू वही है जो वह जगनियन्ता है। तू एक ऐसी कड़ी है जो प्रकृति और परमेश्वर के बीच है। तेरा होना ही प्रकृति को सौन्दर्यशाली बना देता है। तेरे होने से ही उस परम शक्ति का सत्य प्रकट होता है। जो कुछ ओढ़ने को मिला उसमें से क्या ओढ़ा जाए, धारण किया जाए और क्या तज दिया जाए तू उसमें स्वतन्त्र है। चयन का अधिकार तुम्हें है। पर जो ओढ़ेगा, जैसे कर्म करेगा, जैसा मन मस्तिष्क बनाएगा वो ही तुम्हें भोगना पड़ेगा फिर तू स्वतन्त्र नहीं रहेगा। तुम्हें मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार इस निर्णय के लिए मिले हैं कि तू अपना मार्ग खोज सके। प्रकृति से आकर्षित हो अपने विभु रूप को भूल गया तो परिधान बदलते तू क्या से क्या हो जाएगा। यह जानने के लिए पूरा जड़ जंगम मय यह संसार तेरे सामने बिछा है और इन सबसे मुक्ति पाना चाहता है तो अपने समत्व रूप की ओर आगे बढ़। उपनिषद् के वाक्य को भी शंकराचार्य जी ने बहुत बढ़ चढ़कर हमें समझाने का प्रयास किया है अब यह हमारा अपना प्रयास है कि हम किस ओर बढ़ें ताकि हमारा पथ प्रशस्त हो।



आत्मा शरीर धारण क्यों करती है

बूंद को समुद्र बनने के लिए समुद्र तक जाना पड़ता है। आत्मा को परमात्मा बनने के लिए परमात्मा तक जाना पड़ता है। आत्मा जब तक शरीर धारण नहीं करती वायु मण्डल में व्याप्त वह क्या कर सकती है। शरीर धारण करके और फिर मानव का तन पाकर आत्मा जीवात्मा बन जाती है उसके लिए उन्नति के द्वार खुल जाते हैं। मानव शरीर महान् है। ऐसा तो सारी संसृति में कोई भी नहीं है न पशु, न पक्षी, न जलचर न धरती की मिट्टी में रहने वाले कीट पतंग।

सिवाय मानव के सब अधूरे है सब योग योनियां हैं। मानव का तन पाने को तो देव भी तरसते हैं। फिर हम मानव तन पाने की इच्छा क्यों न करें। कहते हैं कि मृत्यु के समय जैसे हमारे विचार हो, वैसा तन हमें आगे मिल जाता है। शरीर धारण कर लेने की इच्छा आत्मा में होती है, तभी तो वह इस धरा धाम पर आती है। ईश्वर के लिए कहा गया कि एकोऽस्मि बहू स्याम। मानव भी एक से बहुत हो जाने की इच्छा करता है यदि ईश्वर की इस महान् सृष्टि में मानव न होता हो तो ईश्वर के इस ऐश्वर्य को कौन जानता, कौन पहचानता, कौन उसके प्रेम को पाता कौन उसके गुणानुवाद को गाता, कौन सौन्दर्य को पहचानता, कौन मोक्ष की बात करता मुझे अपनी ही कविता की यह पंक्तियां बहुत अच्छी लगती है–

तुम कहां के देव होते
मैं अमर न भाव होती।
तुम पड़े रहते अलक्षित
आरती न मैं संजोति।

हमारी आत्मा उसी देव का अंश है। हम उसका यशोगान करके अपना ही यशोगान कर रहे होते हैं। जब मानव अध्यात्मिकता की पराकाष्ठा को प्राप्त कर लेता है तो महसूस करता है कि वह विराट हो गया। वह उस करतार से जा मिला। तब उसकी भाषा अलौकिक हो जाती है वह स्वयं महामानव बन जाता है। ऐसी अवस्था प्राप्त करने के लिए मानव तन चाहिए। मानव तन पाने के लिए आत्मा चिर पिपासित है। अपना निर्विकल्प निराकार स्वरूप किसी न किसी तन में आत्मा स्वयं निर्मित

करती है। तन पाकर साकार होती है तो इस धरा धाम को देखकर आश्चर्य चकित भी होती है। जीवन पाकर जीवन को ऊँचा उठाना हमारा कर्त्तव्य और निष्ठा का एक परम अंग होता है। पर उस भगवान की माया भी विचित्र है। उसने इस जगत में अपने ऐश्वर्य के, अपनी सम्पदा के इतने पुलकित करने वाले पदार्थ फैला रखे हैं कि उनमें फंस कर हम यह भूल जाते हैं कि इस उपवन में हम करने क्या आये थे। हम स्वयं को भूल जाते हैं जो लिबास हमें मिला उस पर लट्टू हो जाते हैं। स्वयं को शरीर समझने लगते हैं। शरीर को सजाकर बार-बार दर्पण में अपना सौन्दर्य झांकना। अच्छे-अच्छे मोहन भोग इस शरीर को खिलाना। अच्छे-अच्छे वस्त्र पहनाना, अच्छे से अच्छे ऐशो आराम में रहना, बस मस्त हो जाते हैं। बच्चे से युवा, युवा से वृद्ध होते चले जाते हैं। जो नहीं करना चाहिए, वह भी करते हैं। तो धीरे-धीरे रोगों का घर बन जाते हैं। कष्ट पाते हैं, रोगी होते हैं, दुखी होते हैं। घायल होते हैं तो रोते हैं गुस्सा करते है, गिड़गिड़ाते हैं, गालियां निकालते हैं। सब कुछ गलत करके अपने कर्म बिगाड़ लेते हैं। जन्म मरण के बन्धन में कर्म में भोग चक्र में फंस जाते हैं। फिर तो जो-जो कर्म किया उसका फल भोगने पशु, पक्षी कीट पतंग पेड़ पौधे सब कुछ बनते हैं। फिर होश कहां रहती है। बन्धे बन्धाएँ भान्ति-भान्ति के रूप धारण करके इस संसार सागर में गोते खाते रहते हैं। आत्मा तो अमर है। आदिकाल से अमर है, कुछ न कुछ तो हम बने ही रहते हैं कोई न कोई परिधान जो ओढ़े ही रहते हैं। सुखी रहें या दुखी, न तो मुक्ति की इच्छा रहती है न प्रयत्न, तो बार-बार तरह-तरह के तन पाकर यह आत्मा भटकती रहती है। नये-नये शरीर पाती रहती है। छुटकारा नहीं है। छुटकारा तब तक हो भी नहीं सकता जब तक होश न आ जाए कि इस गुलशन में आए क्यों थे और करना क्या है ? सोच आ भी जाए तो यह जानना ही काफी नहीं है उस रास्ते पर चलना बढ़ना, अपने स्रोत की तरफ जाना, एक कठिन रास्ता हो जाता है। पंच तन्त्र की कथाओं में एक कथा आती है मनुष्य स्वर्ग की इच्छा करता है। एक साधु आकर उससे कहता है चल मैं तुम्हे स्वर्ग ले चलता हूँ। वह मोह ग्रस्त कहता है अभी मेरे बच्चे छोटे हैं; बड़े हो जाए तब चलूंगा। बच्चे बड़े हो गए, साधु महाराज फिर आए, सेठ जी कहते हैं इनका शादी ब्याह कर लूं। शादी ब्याह हो गया तो पोते का मुँह देख लूं। पोता हो गया तो उसका ब्याह देख लूँ, साधु महाराज हर बार वापिस चले जाते वह सेठ जी मर कर बैल बन गए। साधु महाराज ने कहा चलो तो बोले इनकी कुछ सेवा कर लूँ। बैल मर कर कुत्ता बन गए तो भी उनके घर की रक्षा के लिए बने रहे। कुत्ता मर कर नाली का कीड़ा बन गए तो साधु महाराज फिर आ गए। कीड़ा बोला तुम मेरे पीछे ही क्यों पड़े हो, कहीं और जाओ। यही हाल हम सबका है जो शरीर मिलता

पड़ जाते हैं। शरीर का मोह हमें नहीं छोड़ता चाहे कैसा भी तन मिल जाए। क्यों कि कर्म भोग चक्र के कारण तरह-तरह के कैद खाने के रूप में तरह-तरह के तन मिलते हैं। हम इस विषय में स्वयं को स्वयं ही पराधीन कर लेते हैं। हम अपने सागर से दूर से दूर होते जाते हैं। वह ईश्वर बेशक, हमारे ही भीतर होता है पर हम उसके भीतर स्वयं को जोड़ नहीं पाते। संसार के और अपने कल्याण के लिए चले थे पर फंस गए मोह जाल में, ईश्वर ने हमें कब कहा कि तुम शरीर धारण करो। पर हमारी अपनी प्रवृत्ति हमें इस माया जाल में भटकती रहती है। ऐसे कुछ जागरुक आत्माएँ जब अपने आप को उस परम शक्ति से जोड़ लेती हैं। जीवन के महत्व को पहचानती है। स्वयं जागरुक होकर दूसरों को राह दिखाती हैं तो अपने को जो पहचानने में सफल होते हैं, वह इस मायावी जगत से स्वयं को तोड़-मोड़ कर उसकी राह पर चलने का प्रयत्न करते हैं। जीवन क्यों मिला ? शरीर धारण क्यों किया ? इसे समझने का प्रयास हमें यह चेतना देता है कि हमें कृपा करके ईश्वर ने यह नर तन क्यों दिया ? मेरे निराकार रूप को उसने आकार क्यों दिया तब हमारी यात्रा स्वयं को समझने के लिए प्रारम्भ होती है। शरीर धारण करने का उद्देश्य क्या था। इस ओर ध्यान जाता है। हमारी इस तन से सागर की यात्रा का रहस्य यही है कि आत्मा शरीर का परिधान को ओढ़ कर महत् ऐश्वर्य को पहचान उसका गुण गान करें। उसकी तरफ अपनी यात्रा को निरन्तर बनाए रखे। जीवात्मा के लिए इससे ऊंचा स्वर्ग क्या है ? सुख और आनन्द क्या है, उसी आनन्द की, आनन्द कन्द की प्राप्ति के लिए आत्मा शरीर धारण करती है और करती रहेगी क्योंकि मानव तन पाकर ही हम परम तत्व, आत्म को खोज सकते हैं तथा मुक्ति और बन्धन से परे अपने महत् स्वरूप को प्राप्त कर सकते हैं। नर तन महान है, इसका सम्मान कर, सदोपयोग करें यही अभीष्ट है।



इन्द्रियों के घोड़े मन का सारथी

मन बड़ा वेगवान है। पल भर में मन की उड़ान ग्रह नक्षत्रों तक पहुंच जाती है। मानव से मन की बड़ी प्रधानता है लोग गीत गाते हैं– मन जो भी कहेगा मानेंगे- आखिर यह हमारा मन ही तो है। मन के कहने पर हमारी ज्ञान इन्द्रियां, कर्म इन्द्रियां चलती हैं। क्योंकि हम लोगों ने शरीर के स्तर पर जीना सीख लिया है। मन चाहता है बढ़िया, बढ़िया खाएं तो भक्ष्य अभक्ष्य सब खा जाते हैं। मन ने कहा तो शील अश्लील सभी तरह का श्रवण कर लिया। मन ने कहा तो अच्छा बुरा सब देखने लगे, मन के मते विषय वासनाओं के दास हो गए, मन की ही करतूत से इतने लालची हो गए कि ठीक गलत का विवेक ही भूल गए। मन के कहने पर निर्दोषों पर भी खंजर चला दिया। मन के चलायमान चरित्रहीन हो गए। मन की शैतानी से हमारी इन्द्रियां मन के ही वशीभूत होकर रह गई। और हमने एक ऐसा जीवन जीना शुरू कर दिया कि दिन प्रतिदिन हम पाप के गहरे गड्ढे में धंसते चले गए। परिणाम आज सारा देश एक-एक मानव कामी, क्रोधी, मोह, मत्सर से ग्रस्त, ईर्ष्यालु होकर रह गया। पूरे देश का चरित्र गिर गया। वह देश जहां ऋषि मुनि महामानव अवतरित होते थे, वहां आज भ्रष्टाचारियों का साम्राज्य फैल गया। हजारों वर्षों से बाहर के आक्रमण कारियों ने जो नहीं किया वह हमने स्वयं कर लिया। जब हम अपनी समाज की, देश की यह दुर्दशा देखते हैं, तो लगता है, अब हमारा उद्धार होना कठिन है ऐसे में भगवान कृष्ण की गीता का सहारा सामने आता है। भगवान् हमारा ध्यान हमारी भीतर की शक्तियों की तरफ मोड़ते हैं। आत्मा की अमरता की तरफ दृष्टिपात करवाते हैं। यह जीवन जो जन्म मरण आवागमन के बीच चलता रहता है। इसमें हमारी जीवात्मा की अमरता का बोध कराते हैं। यह जीवन यहीं समाप्त होने वाला नहीं है। युगों-युगों से चला आ रहा, युगों-युगों तक भविष्य में भी चलता ही रहेगा। जो अच्छा बुरा करेंगे उसका फल भी हमें अवश्य मिलेगा। कर्म अच्छे न किए तो कष्ट पग-पग पर हमें भोगने पड़ेंगे। अच्छे का फल अच्छा, बुरे का बुरा मिलेगा। कष्ट से घबरा कर कहां जाएंगे। जीवन नरक बन जाएगा। दुष्कर्म से कमाया धन-पाकर क्षणिक प्रसन्नता भले ही दे। पर अन्त बुरा ही होगा। तो क्या करें ? सदा सुख की चाहना करने वाला यह मन ही अपनी चंचलता से दुख सागर में फंस जाता है।

इस घोर नैराश्य की स्थिति में भगवान् कहते हैं पहले अपनी बुद्धि को स्थिर कर, स्थित प्रज्ञ बन। मन को प्रधानता देकर बुद्धि का प्रयोग छूट गया तो यह दुर्गति

हुई अब सबसे पहले इन इन्द्रियों के घोड़ों की लगाम मन से छीनकर बुद्धि को सौंप दो। मन का सारथी बुद्धि के बिना नालायक है। मन के नहीं बुद्धि के मते चल बुद्धि को निर्मल करने के लिए ईश्वर की शरण में जा। मन में जितना कूड़ा कर्कट अन्दर भर दिया है उसे बुहारने के लिए उस शक्ति की शरण में जाना पड़ेगा। मन पर लगाम लगा। मन के कहे पर मत चल। बिना बुद्धि के प्रक्षालन के भी काम नहीं चलता। आज हम देखते हैं बड़ी-बड़ी ऊंची कुर्सियों पर बैठे लोग बुद्धि का प्रयोग बड़े-बड़े स्कैंडल करने में सिद्ध हस्त हो रहे हैं। किसी देश को, सदाचारी को लाख लांछन लगाकर अपनी स्वार्थ सिद्धि में रत हैं। देश और देश की प्रजा भाड़ में जाये उनकी बला से। पार्टी के नाम पर झूठ ही झूठ का सहारा लेकर अपनी योग्यता स्थापित कर रहे हैं। बातें बड़ी-बड़ी करते हैं पर कर्म में गांठ के पूरे और आंख के अन्धे बने हुए हैं। ऐसे में स्थित प्रज्ञ होना कोई खेल नहीं है। ऐसी स्थिति देश में पहले भी कई बार आ चुकी है। ऐसा इतिहास से प्रतीत होता है। तभी इस देश में ऐसे लोगों का प्रादुर्भाव होता है जो स्वयं को साधते हैं जनता का नेतृत्व करते हैं, मार्गदर्शन करते हैं। मार्ग सुगम तो कभी होता नहीं। पथ भ्रष्ट बुद्धि के लोगों को मार्ग पर लाने के लिए उन्हें तप करना ही पड़ता है। जब सुधार की बात आती है तो इसे व्यक्ति से ही शुरू किया जा सकता है कभी दयानन्द कभी विवेकानन्द। कभी शकंराचार्य कभी रामदेव कभी अन्ना हजारे कभी महात्मा गान्धी। हमें ऐसे पुरोधों की आवश्यकता सदा रहती है मन की लगाम बुद्धि को देने के लिए और बुद्धि की लगाम परम शक्ति के हाथों में सौंपने के लिए। अतः बड़ा जरूरी है हम ईश शरण में जाएं और उस सत चिदानन्द भगवान् से प्रार्थना करें कि वह हमारी बुद्धियों को सत्य की तरफ प्रेरित कर हमें सुधर्म का/सुकर्म का मार्ग सुझाए ऐसी सुंसस्कृत बुद्धि का मन पर नियन्त्रण हो तो मन शान्त हो। मन शान्त हो तो चित्त चिन्तन की तरफ मुड़े। यह इन्द्रियां जो कुमन के कारण पाप से रत थीं उन्हें सुमन से पुण्य की ओर मोड़ सकें। मनुष्य को भगवान् ने अतुल्य शक्ति दी है। मनचित्त बुद्धि के शुद्ध होते ही अहंकार में निर्मलता आती है। मैं जो रावण बन गया था उसे राम बनाने में सहायता मिलेगी। इन्द्रियां जो विषयों में रत थी उन्हें संयम प्राप्त होगा। इसी तरह जब हर व्यक्ति का मन मस्तिष्क सुधरेगा तो समाज सुधरेगा, राष्ट्र सुधरेगा तभी देव दानव युद्ध में देवता विजयी होंगे। अन्यथा नहीं। वेद मन्त्रों में मन के युग संकल्पों में जन कल्याण के लिए बार-बार यह पुकार की गई है।

शुभ संकल्पमस्तु

जागते हुए जो मन दूर-दूर तक चला जाता है और सोते हुए भी वह बड़े-

बड़े स्वप्न लेता है ऐसा हमारा मन भगवद् कृपा से शुभ संकल्प वाला हो, जिस मन के संयमित होने से मनीषी योगी सुकर्मों में प्रवृत होते हैं, वह हमारा मन शुभ संकल्प वाला हो। जिस मन के प्रज्ञावान होने से उत्तम ज्योतिर्मय लोकों की प्राप्ति होती है वह हमारा मन शुभ संकल्प वाला हो। जिस मन की सहायता से हमारा भूत, भविष्य वर्तमान ज्योतिर्मय होता है और हम सत्य बनते हैं वह मन हमारा शुभ संकल्प वाला हो, चारों वेदों का ज्ञान प्राप्त करके हम अपनी इन्द्रियों को वश में करके संसार में सर्वोत्तम जीवन जी सकते हैं वह मन हमारा शुभ संकल्प वाला हो। एक अच्छे सारथी की तरह जो मन इन्द्रियों के घोड़ों को वश में रखकर कल्याण की तरफ ले जाता है वही मन शुद्ध संकल्प वाला कल्याणकारी हो सकता है। और ऐसा ही मन अपने जीवन को ऊंचा उठा कर अपने और संसार के कल्याण के कार्य करने की हमारी क्षमता को बढ़ा सकता है। हमें प्रभु कृपा से ऐसा ही मन प्राप्त हो। जिसके सबल होने से हम संसार को नेतृत्व करने की क्षमता प्राप्त करें।

कमजोर मन से हम कैसे कल्पना करें कि एक बलशाली मन कैसे बनता है। बल्कि मन की जगह आत्मा ले लेती है। आत्मा अद्‌भुत शक्तियों का पुंज है। जहां भी जब भी इस आत्म शक्ति ने मन पर विजय पाली वही अद्‌भुत आश्चर्यकारी ऐसे शक्ति के साक्षी मिलते हैं कि साधारण मानव की बुद्धि विश्वास ही नहीं कर पाती। न जाने कितने जन्मों का तप और कमाई उन दिव्य आत्माओं की होती है जो इस धरा धाम पर अद्वितीय अलौकिक जीवन जीकर उदाहरण उपस्थित कर देते हैं। उनकी ऊंचाइयों तक पहुंचना ज्यों ही नहीं हो जाता। हम लोग देखते हुए भी उनमें छिद्र तलाश करते हैं, विश्वास नहीं कर पाते। पर ऐसे लोगों ने इस धरा को धन्य किया है। वह धरा को जब छोड़कर भी चले जाते हैं तब भी उनका प्रभाव बना रहता है। उनकी तपस्थली में ऐसा प्रभाव आ जाता है कि वहां जाने वाले व्यक्ति को एक अद्‌भुत अनुभूति वहां होती है जिसे वह वर्णन नहीं कर पाता। जैसे किसी स्थल पर गलत कार्य हो तो वहां जाने वाले को बड़ी कटोच सी होती है। ऐसे ही जहां तप युक्त स्थल है वहां सहज ही व्यक्ति का मन शान्त, स्थिर, पावन हो जाता है। अर्थात मन की शक्ति को इन्द्रियों से तोड़ जब आत्म शक्ति से जोड़ दिया जाता है तो उसकी शक्ति का कोई पारावार नहीं रहता। संसार अपने से परे-परे लगने लगता है। शरीर सब कार्य करता हुआ भी यन्त्रवत चलने लगता है। मन जैसे अन्तर्ध्यान हो गया। फिर इन्द्रियों के घोड़े दौड़ते-दौड़ते शान्त हो जाते हैं और यही इन्द्रियां संसार के कल्याण में लग जाती हैं।



एक अचल से सब चलायमान

आत्मा जीवात्मा के रूप में शरीर बदलता है, जगह बदलता है, परिवेश बदलता है। शरीरों के रूप बदलता है पर परमात्मा कुछ नहीं बदलता। वह सर्वकाल, सर्व स्थान, सब स्थितियों में एक समान सर्वत्र ठहरा हुआ है। उसी ठहरे हुए के कारण सब चलायमान है। सूर्य, चन्द्र, तारे, नक्षत्र, पृथ्वी और पृथ्वी पर सारे मानव जीव जन्तु, पर्वत, नदियां, सागर सबमें हलचल उसी के कारण है। स्वयं नहीं बदलता पर उसी के कारण सब कुछ बदलता रहता है। वह कारण है और सारी संसृति उसका कार्य है कृति है, परिणाम है, परिणति है। क्या ही अद्‌भुत विचार है। एक अचल से सब चलायमान। बुद्ध भगवान के शिष्य एक चक्र सा घुमाते हैं। सोचती थी यह छोटी-सी छड़ी से बन्धा चक्र चलाकर माला फेरने जैसा कुछ कृत्य धार्मिक पूजा के लिए क्यों करते हैं वह। वास्तव में एक के चारों तरफ निरन्तर चक्र काटते संसृति के सारे रूपों का द्योतक है यह। सूर्य के गिर्द सब नक्षत्र घूमते हैं। पर सूर्य भी घूमता है उस शक्ति के चारों ओर। कुछ भी स्थिर नहीं रहता। चरैवेति चरैवेति का उद्‌घोष गूँज रहा है। इस गति के कारण ही सूर्य में तेज है, ऊर्जा है, शक्ति है प्रभाव है। उससे ऊर्जा पाकर सृष्टि का कण-कण शक्तिमान हो रहा है। कर्म का अद्‌भुत खेल चल रहा है। जो ठहर जाए उसे मृत कहा जाता है। फिर अद्‌भुतता यह भी है कि वह अचल इन सारे गतिमानों में स्वयं को स्थापित करके चलता है। किसी से भी दूर नहीं जो कुछ वह रचयिता बनाता है उसमें स्वयं भी स्थापित हो जाता है। सखा है वह सबका। सबके साथ ही नहीं चलता, सब की सुनता है, सबको यह महसूस करवाता है, कि वह उसी का है। वास्तव में इस परिवर्तित होते जग में सब रिश्ते-नाते संगी साथी मिलते हैं। छूट जाते हैं, पर वह किसी से नहीं छूटता, वह किसी को छोड़ता ही नहीं। मनुष्य जो बनाता है वह वो स्वयं नहीं हो जाता है। पर ईश्वर जो कुछ बनाता है। उसी में अपना आसन जमा लेता है। अभी आज है मणीमहेश की विडियो देख रही थी। ऊंचा पर्वत है दूर से देखा जा रहा है। ऊपर तिकोणा पर्वत खण्ड है कोई समय ऐसा आता है पर्वत का वह तिकोणा खुल जाता है उसके चारों ओर प्रकाश है। उस खुले हुए तिकोण से एक अग्नि शिखा निकलती है, दूर आकाश

तक नाचती सी दिखती है, फिर नीचे आती है, फिर ऊपर जाती है। बार–बार ऐसा होता है आखिर उस तिकोणे में समा जाती है तिकोणा फिर कमल के फूल सा बन्द हो जाता है। क्या है वो प्रकाश ? क्या है वह स्थान ? क्या है इस सबका रहस्य ? जो नहीं जानते वह विश्वास भी नहीं करते। हर चीज को अविश्वास की दृष्टि से देखते हैं, पर अपनी पूरी आत्मा को डुबा कर मानसरोवर के तट पर खड़े होकर। देखो कैसा अलौकिक अनुभव होता है, बताया नहीं जा सकता। जिस मन्दिर में हर समय ईश्वर के नाम को गाया जाता है वहां कुछ समय आंखें बन्द करके बैठ जाइए। क्या अद्भुत आनन्द आता है। उठने को जी नहीं होता। जहां हर समय तू, तू, मैं, मैं, होती है, वहां जाइए। मन उचाट हो जाता है। जिस घर में प्रभु के नाम का कीर्तन भजन यज्ञ होता रहे उस घर में बाहर से आने वाले को भी बड़ा सुख सुकून मिलता है। यह पूरी सृष्टि एक परिवार की तरह बंधी हुई है। इन सबकी अपनी–अपनी छाया है। सूर्य की धूप के उलटी तरफ का भाग छाया सा देने लगता है। मानव मन पर इस चलती फिरती छाया का क्या प्रभाव होता है। मैं कह नहीं सकती पर यदि सारी संसृति परिवार है तो एक दूसरे के सुख दुख के सहचर भी होंगे। यह जग जीवन कैसे चलता है। चलाने वाला किस सौन्दर्य से चला रहा है। घूमा रहा है, गहरे में सोचो तो अनुभूति कुछ ओर ही कहने लगती है। वह सबको चलाने वाला अपनी पूरी सृष्टि से प्रेम करता है और उसके प्रेम का एक छींटा किसी भी जीवन को धन्य कर देता है। आश्रम की गाय प्रभु भजन करते लोगों को सुनकर जो दूध देती है वह कितना स्वादिष्ट, पौष्टिक और गुणकारी हो जाता है। मां प्यार में अपने बच्चे को खाना खिलाती है, बच्चा मां की चितवन से ही कृष्ण बन जाता है। बहुत प्यारी मां है वह भगवान। किसी की चोट को वही सहलाता है। बेशक ठहरा हुआ है पर उसके बिना कोई स्थान खाली भी तो नहीं। वह सहलाता भी है, पुचकारता भी है, फूलों सा कोमल भी होता है, पर उसकी मार भी खानी पड़ती है। हमारी हर गलती को ध्यान से देख रहा होता है। जब हम पाप कर्म करने लगे वह मना करता है। हम नहीं रुकते तो मार भी उसी से खानी पड़ती है। उसके बिना गति नहीं, उसके बिना सहारा नहीं, उसके बिना चैन नहीं और जब वह रुष्ट हो जाए तो कोई ओर ठौर भी नहीं। कहां जाएंगे हम उस अचल की गोद में खेलते खिलौने हैं। यदि स्वयं को उसको सौंप दें तो वह अपने खिलौने स्वयं सम्भालेगा। बस हमें उसका खिलौना बनना आना चाहिए। उसकी गोद मिल गई तो वह भी अचल हम भी अचल। उसकी गोद का आनन्द ऐसा है। हम कब बनेंगे उसके खिलौने ? जब हमारी अपनी 'मैं' उसके 'तू'

में मिल जाएगी। बस इतना ही। और इतना ही होता नहीं है। जीवात्मा जाने कहां-कहां भटकती रहती है। अपने अचल स्रोत को छोड़ उसकी सम्पूर्ण सम्पदा को वह उसे सौंप देता है जो उसकी गोद में आनन्द हो जाता है। यही जीवन का लक्ष्य है। वही अन्तिम पड़ाव है, वही परमधाम है, वही आनन्द धन है जिसे पाकर युगों-युगों की हमारी यात्रा को विश्राम मिल जाता है। हम उसके हैं उसमें मिल जाना ही जीवन का परम उद्देश्य है। सब कुछ बहुत स्पष्ट होते हुए भी हम क्यों नहीं उस के पथ के पथिक बन जाते। यह सबसे बड़ा आश्चर्य है। वास्तव में उसकी कृपा बिना कुछ कैसे हो। प्रार्थना है- हे देव, अपनी कृपा का पात्र हमें बना दें।



आलम्बन

मां के गर्भ से बाहर आते ही शिशु को लगता है जैसे बहुत दूर ऊपर से नीचे गिर गया है और बाहर आते ही वह उस आश्रय को तलाशने लगता है जिससे वह घिरा हुआ था। धाई माँ उसे कपड़े से पूरा लपेट देती है। बच्चा लाड़ प्यार की गोद में पलकर बड़ा होता है। आस-पास के लोगों का आलम्बन उसे सहारा देता है। आलम्बन पाकर उसके हर्ष का क्या ठिकाना। उसी आसरे में उसकी आसक्ति हो जाती है। परन्तु सब जानते हैं कोई भी सहारा शाश्वत नहीं है। यह नश्वर संसार आज कुछ, कल कुछ बदलता रहता है। मानव भूला रहता है अपने इन अस्थायी सहारों में। जब कोई सहारा टूटता है मनुआ बिलख उठता है। तथा तलाश शुरू होती है उस अवलम्ब की जो मनुष्य के साथ को, किसी के भी साथ को कभी छोड़ता नहीं। पर सहज में हम नहीं सोच पाते कि हम बे सहारा नहीं हैं। एक अन्वेषण भीतर ही भीतर चलता है अपने भीतर से ही कोई आवाज़ आती है – घबरा मत, मैं हूं। मैं कौन है यह ? यह आवाज सबके भीतर है। कोई सुनता है, कोई नहीं सुन पाता। हमारे अपने ही बनाए आवरण हमारा भीतर का संसार ढका रखते हैं। जागरूक आत्मा जीवात्मा इस मैं की खोज में निकलता है। सब कुछ जान भी लें तो भी मानव स्वभाव ऐसा है कि अपने भीतर के साथी को भुलाकर बाहर के सहारों की खोज में लगा रहता है। बाहर के सहारे रोज बदलते रहते हैं इस नश्वर संसार में कुछ भी स्थिर नहीं है। फिर ऐसा अकसर देखने में आता है कि सगे से सगे नाते रिश्तेदार भी शत्रु हो जाते हैं। धोखा दे देते हैं। आप रोते रह जाते हैं। रुपया पैसा लुट जाता है, स्वास्थ्य जवाब दे जाता है। मनुष्य असहाय हो जाता है। मान मर्यादा मिट्टी में मिल जाती है। अनुचर चले जाते हैं। क्रन्दन करती जीवात्मा घबरा जाती है। ऐसे में किसको पुकारें, किसको फरयाद करें ? तब याद आती है उस परवर दीगार की। मन महसूस करता है कि वह प्राणी मात्रा का अभिन्न साथी कहीं दूर नहीं था। अपने ही भीतर से उसका करुणाकार कष्ट की पराकाष्ठा में ऐसी थपकी देकर मान को सहलाता है कि उसकी गोद में मन शान्त हो जाता है। ओ भोले मन क्यों नहीं समझता कि पहले ही उसका अवलम्ब ले लेता। उसकी शरण में चला जा। नहीं, जब तक ठोकर न लग जाए मनुआ समझता नहीं। एक बार ठोकर खाकर इस जग की असलीयत को जान भी जाता है तो भी फिर-फिर जग की तरफ ही लपकता है। ऐ मेरे मन! यदि तू यह समझ जाए कि इस पूरी संसृष्टि में सबसे मजबूत और सबसे सच्चा भक्त

केवल उस परम प्रभु से ही है। वही तेरा जन्मदाता, पालक, रक्षक और कृपालु है तो तेरा कल्याण हो जाए। आज भी समझ ले तो भी तेरी किश्ती किनारे लग जाएगी।

साधारण व्यक्ति को तो सहारा तलाशना पड़ता है पर जो उस प्रभु के प्यारे हैं उनकी तो योगक्षेम की चिन्ता उन्हें होती ही नहीं। वह भक्त वत्सल भगवान स्वयं ही उनकी चिन्ता करते रहते हैं। कहते हैं तुलसीदास जी को कुटिया में एक दिन एक चोर चोरी करने आया वह सारी रात कोशिश करता रहा कि सेंत लगाऊं पर सारी रात उसे दो धनुषधारी दिखाई देते रहे कुटिया की रक्षा करते हुए। वह भाग भी नहीं सका सुबह तुलसीदास जी उठे तो बोले। भई, तुम कौन हो चोर रुआँसा होकर बोला-महाराज आया तो चोरी करने था पर सारी रात दो धनुषधारी आपकी कुटिया की रक्षा में लगे थे, मेरा दांव लगा ही नहीं। तुलसीदास जी की आंखों में आंसू आ गए। यह तो चोर भाग्यशाली निकला जो मेरे प्रभु के दर्शन करता रहा। उसके बाद उनके पास जो कुछ था सब बांट दिया। न कुछ होगा न मेरे प्रभु को कष्ट करना पड़ेगा। विवेकानन्द जी ने एक बार प्रण किया कि मांगेंगे नहीं जो अपने आप मिलेगा वही खाऊँगा। तीन-दिन भूखे प्यासे घूमते रहे। तीन दिन बाद एक हलवाई की दुकान के आगे से गुजर रहे थे तो हलवाई जल्दी से दुकान से उठकर बाहर आ गया। विवेकानन्द जी के पांव पड़ गया। महाराज चलिए भोजन पाइए मुझे बार-बार आप का ही चित्र दृष्टिगत हो रहा था और कोई कह रहा था उनको भोजन खिलाओ।

ऐसी अनगिनत कहानियां हैं भक्त के वश में होकर अद्भुत रक्षक बनकर किसी न किसी रूप में उपस्थित हो जाते हैं। क्योंकि भगवान दूर होते ही नहीं। इसीलिए जो उस प्रभु से प्यार करते हैं, उन्हें अबलम्ब तलाशने नहीं पड़ते। अवलम्ब तो अज्ञानी होने से ही हम तलाशते हैं। जिन्होंने अपना योगक्षेम उसे सौंप दिया वह घनघोर वन में भी निर्भय घूमते हैं। बड़ी से बड़ी विपद में भी बे फिकर मस्त रहते हैं। कठिनाई विश्वास की है, श्रद्धा की है। कहने को कितना आसान लगता है पर आयु भर प्रयत्न करते रहने पर भी इस विश्वास और श्रद्धा को अर्जित कर पाना ही आकाश पुष्प हो ज़ाता है। ज़रा सा कुछ खो गया कि हम रुआंसे हो गए। जरा मन के विपरीत कुछ घटा कि क्रोध से तम-तमा उठे। जिस दिन हमारा विश्वास हमारी श्रद्धा हमारी हो जाएगी उसी दिन उसी क्षण हम उसकी छाया के नीचे बैठकर निश्चिन्त हो जाएंगे। हमें वह परम आलम्बन प्राप्त हो जाएगा जिसके लिए युगों-युगों से भटकते चले आ रहे हैं। यही जीवन का चरम प्राप्तव्य है।



पूर्व संस्कार

अक्सर ऐसी घटनाएँ कई बार सुनने में आती हैं कि किसी बच्चे को अपने पूर्व जन्म का पता लग जाता है। वह यह भी बता देता है कि फलां गांव में फलां परिवार में उसका जन्म हुआ था, ब्याह हुआ था। कुछ घटनाएँ भी याद होती हैं। और कई बार वहां ले जाने पर वह लोगों को पहचान भी लेता है। तो इससे यह सिद्ध हो जाता है कि मृत्यु और जन्म के बीच हम सब प्राणी अपने पूर्व जन्म को स्मरण नहीं रख सकते। परन्तु हमारे पूर्ण संस्कारों का प्रभाव हमारे इस जन्म पर भी बहुत गहरा रहता है इसमें कोई सन्देह नहीं। विशेष कर जो बच्चे जन्म से ही विलक्षण प्रतिभाएं लेकर आ जाते हैं उनके कार्य कलाप से। जीने के ढंग से, यह अच्छी तरह अनुमान लगाया जा सकता है कि पूर्व जन्मों के संस्कार इन पर गहरा रंग लिए हुए हैं। भगवान कृष्ण इसके सबसे मुख्य उदाहरण हैं। उनका जन्म दिव्य, बचपन दिव्य, खेलें दिव्य, सम्बन्ध दिव्य, कर्म दिव्य और पूरा जीवन दिव्य। कहीं से भी उनके जीवन की झांकी को उघाड़ कर देख लो। यह दिव्यता क्या यूं ही आ गई ? नहीं, कृष्ण महाराज स्वयं कहते हैं, हे अर्जुन मेरे और तेरे कई जन्म हो चुके हैं। धरा के जन्म से मैं भी हूं, तू भी है और आज जो आत्मज्ञान तुम्हें दे रहा हूं वह नवीन नहीं है आदि सृष्टि से यह ज्ञान भी अमर अमिट है कृष्ण को हम ईश्वर की प्रतिमूर्ति जानते हैं, मानते हैं। पर वह स्वयं इस सत्य को प्रकट कर रहे हैं कि वह कई जंन्म ले चुके हैं। जन्म लेकर आमतौर पर प्राणी खाना पीना, ऐश उड़ाना और मर जाना ऐसा ही उद्देश्य लेकर चलते हैं। अतः न तो वह जीवन में कुछ अर्जित करते हैं। न अगले जन्म की चिन्ता करते हैं। इससे वह दैवी सम्पदा अर्जित नहीं कर पाते। जो आत्म जग जीवन में आकर, जागृत रहकर जीवन जीती है वह दिन प्रति दिन ऐसी कमाई करती रहती है कि कई जन्मों के पुण्य स्वरूप दिव्य जीवन को प्राप्त होती है। यह आत्मा को दो आकर्षण शक्तियां अपनी-अपनी ओर खींच रही होती है। जो संसार, प्रकृति के आकर्षण में अधिक रहते हैं वह भौतिक सम्पत्ति, धर्म ऐश्वर्य, भोग विलास, काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार से ग्रस्त होकर जन्म मरण के कष्ट सहते रहते हैं और अपने शुभाशुभ कर्मों के फल भोगते रहते हैं। कृष्ण की तरह कितने लोग कह सकते हैं – हे अर्जुन, मुझे किसी कर्म का बन्धन नहीं है। मैं बन्धन मुक्त हूँ परन्तु

कर्म किए बिना नहीं रहता हूँ क्योंकि मैं जानती हूँ मेरे निष्क्रिय रहने से संसार के लोग कर्म करना त्याग देंगे, जो मानवता के लिए घातक होगा। कर्म करना और विशेष कर सद्कर्म करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है यह हर मानव को उचित है कि वह स्वयं अपने सारे जीवन को कर्मण्यशील बनाए रक्खे और ऐसा ही दूसरों को करने की प्रेरणा दे।

स्वामी विवेकानन्द के गुरु परमहंस सप्त ऋषियों में से एक ऋषि के आगमन की प्रतीक्षा में एक दिन जब नरेन्द्र को देखते हैं तो पहचान लेते हैं कि यही वह व्यक्ति है जिसे वह तलाश रहे थे। नरेन्द्र को यह बात बह नहीं बताते पर स्वयं बलिहारी हो जाते हैं। नरेन्द्र ही विवेकानन्द बने और परमहंस राम कृष्ण जी के वह बड़े चहेते प्यारे शिष्य थे। भगवान शंकर सृष्टि के मानव थे और उनकी पत्नी उमा पार्वती गौरी सदा उन्हीं को पति रूप में वरण करती रही। भगवान शंकर दीर्घायु प्राप्त थे। तपस्वी भवधूत थे, महामानव थे। भविष्य, वर्तमान, भूतकाल के ज्ञाता थे। गुरु गोबिन्द पहले जन्म में किस कन्दरा में (हेम कुण्ड) हिमालय में तपस्या कर रहे थे यह उन्होंने स्वयं बताया।

संस्कारों का कल्याणकारी भण्डार लेकर धरा पर आने वालों से आज भी भारत की गोदी खाली नहीं है। यहां सन्त जन मिलते हैं क्योंकि यह भूमि है जहां सदा-सदा शुभ कर्मों और शुभ संस्कारों का सृजन होता रहता है। आज भारत की तस्वीर जो नजर आ रही है-अन्याय, अनाचार, दुर्गुण, अराजकता, अनुशासनहीनता, हिंसा दिन प्रतिदिन बढ़ती हुई दृष्टिगोचर हो रही है प्रजा त्राहि त्राहि कर रही है पर दूसरी तरफ ऐसे महापुरुष दिखाई दे रहे हैं जिन पर प्रजा की आंखें टिकी हुई हैं कि इस सारे अत्याचार का अन्त भी होगा। कृष्ण कंस की कारागर में उत्पन्न हुए थे। कंस को पता था इसके हाथों मेरी मृत्यु होगी, फिर भी वह प्रयास करता रहा कि कृष्ण को मार दिया जाए। परन्तु वह भगवान् तो सबके ऊपर है उनसे बलवान तो कोई हो नहीं सकता न आज तक हुआ है। पर जो जैसे संस्कार लेकर आता है वैसा ही आचरण करता है। वैसे ही उसके कर्म बनते जाते हैं।

यह सब जानकर हमें यह सोचना होगा कि आज तक जो हुआ सो हुआ भविष्य में हमें अपने संस्कार उत्तम बनाने के लिए ऐसे ही कर्मों का सृजन करना है कि आगे आने वाले जन्मों में हम फिर से मानव का शरीर भी प्राप्त करें और हमारे जीवन में दिन दुगुनी रात चौगुनी शुभ संस्कारों की ही दौलत बढ़े। हम उन्नत पथ पर चलें जिससे हमारे भावी जन्म उत्तम से उत्तम होते चले जाएं।



महान अतीत वर्तमान की नींव

हमारे देश में एक समय ऐसा था जब मानव मन का धरातल बहुत ऊंचा था। जब ऋषि मुनियों के आश्रमों में शिष्यों की भीड़ लगी रहती थी। वेदों का ज्ञान प्रवाहित होता था। इस देश में बड़े-बड़े विद्वान, तपस्वी, योगी, कर्मव्यशील, सुयोग्य, विज्ञान के ज्ञाता, गणित के महान् पण्डित और सब प्रकार की विधायों के धनी लोगों की कमी नहीं थी इसी से आज भी हमारे पास ज्ञान की अतुल्य सम्पदा का भण्डार है। जितना संसार के किसी भी देश के पास नहीं है। दिव्य शक्तियों से सम्पन्न लोगों ने कौन सी ऐसी विद्या है जिस पर प्रकाश न डाला हो। आज हम भले ही आधुनिक वैज्ञानिक उन्नति को देखकर आश्चर्य चकित होते हैं। पर सोचो जब मनुष्य इस धरती पर आया होगा तब छोटी से छोटी बात का उद्घाटित हो जाना कितना बड़ा आश्चर्य लगता होगा। जो हमें प्राप्त हो जाता है वह स्वाभाविक लगने लगता है, पर यह नयी-नयीं अन्वेषण की प्रतिक्रिया तो आदिकाल से चली आ रही है। जब यह खोज निरन्तर चलती रहती है तो हमें स्वयं को इसके साथ तादातम्य करना ही पड़ता है। हम इस सारे ज्ञान से वंचित क्यों रहे। इसलिए हमें अनजान न रहकर इस ज्ञान यात्रा पर चलना ही है। यह यात्रा इतनी विस्तृत है कि आप इसका कौन सा पन्ना पकड़ कर चलेंगे यही आपकी जिज्ञासा पर निर्भर करता है। पर जिस ओर भी चलेंगे उसी ओर इसका ओर छोर नहीं अर्थात् जानने की प्रतिक्रिया का कोई अन्त नहीं। जैसे अनन्त आकाश की तह लाने कोई पक्ष ऊंचा-ऊंचा और ऊंचा उड़ता ही चला जाए तो उसे आकाश का कोई अन्तिम छोर प्राप्त नहीं हो सकती। यह ईश्वर की अपार महिमा है और यही पर हर साधक नेति नेति पुकार उठता है। हर जिज्ञासु अनमोल है अनन्त का पथिक है। पथिक का पथ प्रशस्त है जिन नयी उपलब्धियों को जो प्राप्त करेगा उन उपलब्धियों से उसकी पहचान बन्ध जाएगी। इसीलिए मानव महान है। वह भगवान के कोष खोल-खोल कर नयी से नयी अनमोल ज्ञान गरिमाओं को पाकर स्वयं भी गौरवान्वित होता है। दूसरों को भी नये मार्गों की ओर इंगित करता है। आज विद्या के मन्दिर का हर विद्यार्थी अनमोल है और यह संसार हिरण्य मम पाठशाला है। हमारी अतीत की यह अनमोल आध्यात्मिक, सामाजिक, लौकिक सम्पदा सभ्यता हमारी धरोहर है। इस धरोहर के दर्पण में ही हमारी अस्मिता है। इसके सुदृढ़ धरातल पर टिकी हमारी जड़ें बहुत गहरी हैं अर्थ-पूर्ण हैं। इन्हीं कन्धों पर हमारी भविष्य की

इमारत जो बनेगी वह आदर्श होगी। यदि हम स्वयं को इस अतीत के आधार से तोड़ लेंगे तो हम भिखारियों की तरह उन देशों की तरफ मुँह लटकाए देखते रहेंगे जिनके पास अतीत नहीं है, वर्तमान ही वर्तमान है और जो दूसरों को लूट लेने में ही अपना बड़प्पन समझते हैं। ऐसी लुटेरी जातियों में आकर हमारे देश में बहुत लूट मचाई हमारे देश को कंगाल बनाने में लगे रहे और हमें मूर्ख बनाते रहे कि हमारे पूर्वज मूर्ख थे। हमारे पूर्वज क्या थे यह जानने के लिए हमें दूसरों का मन्तव्य नहीं लेना चाहिए। हमें अपना अतीत टटोलना होगा और उन्हीं माणिकों पर भविष्य के महल उसारने होंगे। जब-जब हमने पीछे मुड़कर देखा अपने को गौरवान्वित पाया, तो ए मनु, आज भी तू अपनी नींद से जाग। देखो नय सूर्य बड़ा भारी प्रकाश लेकर तेरे द्वार पर ज्योतित हो रहा है। जीवन का वही चिर नवीन सन्देश तेरे द्वार पर भेरी बजा रहा है पुकार रहा है और उस आकाश से गूँज रहा है यह सारा आसमान। अतीत के कन्धों पर सुसज्जित करें वर्तमान को और वर्तमान का समुज्जवल, समुन्नत जीवन कल के भविष्य को उज्जवल बनाएगा। अच्छी सन्तति की इच्छा हर किसी की बनी रहती है। सन्तति हमारी बिरासत को सम्भाले उसे और अधिक सौष्ठव स्वरूप प्रधान करे। ऐसी परम्परा की इच्छा समाप्त नहीं होती न होनी चाहिए। यह धारा भी सदा वीर प्रस्विती बना रहना चाहती है। कितना धन, धान्य अपनी सन्तति के लिए संजो कर रखती है। कभी कृपण नहीं होती। इस धरा पर ही हमारा पावन अतीत था, वर्तमान है और भविष्य होगा। अतीत का सम्मान, संवर्धन, संरक्षण हमें सौंपा गया। हम इसकी रक्षा करेंगे तो भविष्य सुरक्षित होगा। आज यदि हम अपनी मिली धरोहर को न सम्भाल सकेंगे तो कल को क्या उत्तर देंगे। अतीत नींव है, वर्तमान की इमारत उसका प्रसाद है। आने वाला कल हमारी ओर मुखातिब है।



गणेश क्या है

जम्मू में विश्व हिन्दू परिषद् के नारी सम्मेलन में अमेरिका से आई एक भारतीय महिला ने यह सवाल किया कि वहां पर लोग यह पूछते हैं कि गणेश की हाथी जैसी सूंड क्यों है। तो हम में से किसी से कोई सन्तोषजनक उत्तर उसे प्राप्त नहीं हुआ। अपार जन समूह के समक्ष आर्य समाज के कुछ वरिष्ठ लोग जो बैठे थे उन्होंने गणेश का होना ही गलत बना दिया और जो सनातन धर्म के साधु उपस्थित थे उन्होंने गणेश जी की पौराणिक व्याख्या में से गणेश के विषय में कथाओं के माध्यम से समझाना शुरू किया। भारतीय जनता पार्टी की महारानी सिन्धिया हमारे साथ स्टेज़ पर बैठी थीं उन्हीं के आदेश पर गणेश जी की लम्बी कथा सुनाई गई। परन्तु दोनों ही तर्क अपूर्ण थे गणेश तत्व को समझाने का प्रयास विफल रहा। घर आकर सोचती रही गणेश किस बात का द्योतक हो सकता है। भाव रूप में गणेश की कुछ व्याख्या समझ में आ रही थी पर वह भी इतनी सटीक नहीं लगी। मेरी जिज्ञासा निरन्तर बनी हुई थी। देहली में राकेश जी (मेरी बड़ी दीदी के बेटे) के घर महेश योगी के शिष्य नादिर जी की लिखी एक पुस्तक हाथ में आई जिसमें गणेश के विषय में जो पढ़ने, जानने को मिला वह इस प्रकार है–मानव मस्तिष्क की बनावट बिल्कुल गणेश जैसी है और मूल बन्ध में अन्तड़ियों का भाग भी गणेश जैसा है। तब तो मुझे यह तर्क अटपटा सा लगा था पर बाद में निरन्तर इस पर मनन करती रही। मस्तिष्क मानव शरीर का वह भाग है जिसके कारण मानव पूरी संमृति में सर्वोत्तम समझा जाता है। महर्षि व्यास श्रुति और स्मृति के रूप में चले आ रहे वेद ज्ञान को लिपि बद्ध करते हैं। पुराणों और महाभारत की रचना करते हैं। तो कहा जाता है कि व्यास जो बोलते जाते थे और गणेश जी लिखते जाते हैं। दोनों में कोई भी रुका नहीं। इतना तीव्र गति से लिखते रहे। गणेश गण राज्य के अधिष्ठता के रूप में पूजे जाते हैं। गणेश को बुद्धि विनायक कहा जाता है। गणेश प्रथम वन्दनीय हैं। गणेश कल्याणकारी शंकर के सुत हैं। निर्माण पार्वती ने किया। गणेश को विघ्न नाशक कहा जाता है। गणेश मनोरथों की पूर्ति करते हैं। गणेश गणों के ईश हैं। गणेश. शुद्ध पवित्र मोदक प्रिय है मोदक अर्थात् आनन्द के देने वाले हैं।

कहते हैं 'यथा ब्रह्माण्डे तथा पिण्डें।'

एक विकसित परिपक्व हितचिन्तक मस्तिष्क जो सर्वदा जन कल्याण की भावना से ओतप्रोत है। और गणेश जैसी आकृति है उसी का नाम गणेश है। यह कोई कल्पना नहीं। मानव का गूढ़तम रहस्य है। और महर्षि व्यास ने इसी को अपने संग बिठाकर कल्याकारी वेदों को लिपिबद्ध किया। कोई आश्चर्य नहीं था। इस गणेश रूपी मस्तिष्क के बिना मनुष्य मांस का मात्र सांस लेता हुआ लोथड़ा मात्र है एक जिन्दा शव है। जब बुद्धि सारिणी पार्वती इसे प्रवाहित करती है, विकसित करती है, प्रेरित करती है यह अपनी शक्ति से सब बाधाओं को, मुश्किलों को पार करके मनुष्य को मानव से ईश्वर बना देती है। ऐसे गणपति गणेश को हमारा कोटि-कोटि प्रणाम। गणेश का पेट बहुत बड़ा है क्योंकि यह गणपति संसार भर के ज्ञान विज्ञान को अपने भीतर भर कर बैठा है। गणेश मोदकी आनन्द का उपभोग करता है और आनन्द का वितरण करता है।

दूसरा स्थान विसर्जन का है। विसर्जन मानव जीवन को स्वस्थ, सुन्दर, क्रियाशील और कल्याणकारी बनाने के लिए एक बड़ी आवश्यक प्रक्रिया है। जिससे तन, मन और मस्तिष्क सबों को स्वस्थ रखने के लिए महत्वपूर्ण है। शरीर रक्षा के लिए जितना आवश्यक है उसे रख कर शेष का विसर्जन कर देना ही कल्याणकारी है। यह त्याग न किया गया तो सड़ांध पैदा कर देगा। रोगों का घर बन जाएगा मानव। मृत्यु या नाश की आशंका रहेगी। मनुष्य के पास जो कुछ है भगवान् का दिया है उसका ग्रहण करना प्रयोग करना और फिर विसर्जन करना आवश्यक है। जो केवल ग्रहण करता है, विसर्जन नहीं करता, तो ग्रहण किया हुआ नाश का कारण बन जाता है। यह विसर्जन भी इतना सुखपूर्वक, प्रसन्नतापूर्वक कर दीजिए जैसे मल मूत्र का परित्याग कर दिया जाता है। देना सीखिए, देकर उसका व्याख्यान मत करिए। कल्याण ही कल्याण है। त्यागने में ही सुख है, मोक्ष है, स्वच्छता है। शरीर स्वच्छ करके हम अपने भीतर ऐसे गणेश की स्थापना कर सकते हैं। गणपति प्रजापति ईश्वर को भीतर बिठा सकते हैं। हम स्वयं गणेश रूप हैं। हमारे भीतर वह सारी शक्तियां प्रवेश कर सकती हैं जिनसे सफलता हमारा मार्ग प्रशस्त करें। हम न घबराएं, न शर्माएं। हमारी गति ऊपर से नीचे तक अक्षुण्ण बनी रहे। यह गणेश की उपासना है। हमारा मुण्ड मस्तिष्क गणेश की शक्तियों का पुंज हमेशा बना रहे हमारे भीतर से नित्य, नया ज्ञान प्रबुद्ध होता रहे। हमारे समाज में जितने प्रबुद्ध, ईश्वर के प्रिय, राष्ट्र के हितकारी, विज्ञान और कला के सृजक हैं सब गणेश हैं उन्हीं से यह प्रजा ऊर्जा पाती है, नेतृत्व

पाती है, रक्षा पाती है। निर्भय होकर रहती है। शिव के, ईश्वर के इस पावन प्रसाद के लिए हम कृतज्ञ हों। हमारी ऐसे गणेश को बन्दना, शत शत बन्दना है। यह मानव मस्तिष्क इतना शक्तिशाली है कि कहते हैं हम केवल 5% भाग का ही प्रयोग कर पाते हैं। शेष निधि तो पड़ी रहती है। यदि इस निधि का पूर्ण प्रयोग हो तो मानव क्या हो जाए। मानव की असीम शक्ति कितनी बढ़ जाए। इसलिए आलस्य का परित्याग करके हम अपनी इस शक्ति को और क्रियाशील करें। तो इससे नित्त नये माणिक निकलेंगे। जिनका वितरण पूरी संसृति के कर सकेंगे।

समुद्र मन्थन की कथा में देवताओं और राक्षसों ने जितना मन्थन किया उतने ही रत्न निकलते चले गए। यह हमारा मस्तिष्क सागर जैसा ही है। इसको जितना घिसते जाएंगे जितना खर्च करते जाएंगे, जितना प्रयोग करते जाएं उतना ही नया-नया निकलता चला जायेगा। जो व्यक्ति लगातार लगा रहता है वह जब पीछे मुड़कर देखता है तो उसे अपनी ही उत्पन्न की अनमोल अनगिनत उपलब्धियां दिखाई देंगी। मस्तिष्क का मन्थन ही मनुष्य में शक्तिपात भी कर देता है। दिव्य दृष्टि भी देता है। मनुष्य की उन्नति का सोपान मस्तिष्क से ही उत्पन्न होता है। मस्तिष्क के विकास से ही मनुष्य दिन-दिन उन्नति का पथिक बन जाता है ऐसे महापुरुष उच्चकोटि के विचारक, तपस्वी, योगी, सिद्ध हमारे देश में बहुत हुए हैं। उनकी उपलब्धियों को संसार चकित हो देखता है, उनसे लाभ उठाता है। उनका अनुगमन करके ही हम उन ऊंचाईयों को छू सकते हैं तथा उनके आगे और नये-नये आविष्कार नये-नये अनुसन्धान कर सकते हैं। रास्ते हमें खुद चुनने हैं। यदि हाथ पर हाथ धरे गणेश जी की मूर्ति के आगे माथा टेकते पड़े रहेंगे तो एक कौड़ी भी हाथ नहीं आएगी। कहते हैं-

जिन ढूंढ़ा तिन पाएआ गहरे पानी पैठ
मैं बांवरी ढुढ़न गई रही किनारे बैठ

किनारे पर बैठे रहने से काम नहीं चलेगा। हम कोरे के कोरे रह जाएंगे कबीर जी कहते हैं-

लाली मेरे लाल की जित देखू तित लाल।
लाली देखन में चली मैं भी हो गई लाल।

यह रंग है जो जिसको चढ़ गया वह लाली लाल ही गया। हमारे भीतर इस सफलता की, उच्चता की लाली को प्राप्त करने की आग होगी तो हम किनारे पर नहीं बैठे रहेंगे। हम गहरे पानी में गोता लगाने से नहीं घबराएंगे। हम छलांग लगाएंगे और फिर सत्य की, सार तत्व की खोज में सफलता पाएंगे। कर्म की निरन्तरता, सफलता की कुंजी है। हम अपनी शक्तियों का आह्वान करें, प्रक्षालन करें, प्रयोग करें, हमारा जीवन हिरण्यमय हो उठेगा। हम गणपति को प्राप्त कर लेंगे। आ-हा-हा यह मानव तन कितना अनमोल, कितना विलक्षण कितना शक्तियों का भण्डार और कितना दुर्लभ है। यदि हम सत्य के इस महापथ के पथिक बन सकें तो हम ही शिव हैं, गणेश हैं, राम हैं, कृष्णा हैं। हम सर्व सामर्थ्य भगवान की सन्तान उसके सभी कोषों के अधिपति हैं। बस हमें अपनी शक्तियों को जगाने और स्वयं को जानने की आवश्यकता है। जिसने भी इस तलाश में सफलता पाई वही धन्य है।



देवासुर संग्राम

इस पूरी संसृति में चल रहा है देवासुर संग्राम। जिसमें अधिकतर विजय असुरों की होती है। कैसी बात है असुर जीत जाते हैं। देवता हार जाते हैं। कैसे ? हम अपने सामने हों तो यह सब कुछ होता देखते हैं। समुद्र मन्थन की कथा पुराणों में आती है। देवता और असुर मिलकर मन्दरांचल को मथानी बनाकर और नाग को रस्सी बनाकर मन्थन करते हैं सागर का। कथा अटपटी है पर भाव अटपटा नहीं है क्योंकि यह समुद्र मन्थन हमारे भीतर हर समय हो रहा होता है। मन्थन में सुधा कलश निकला। जो पीयेगा अमर हो जायेगा। संग्राम यही से आरम्भ हो गया। असुर सुधार पीकर अमर हो गए तो संसार का क्या हाल होगा। हमारी दुष्ट प्रवृत्तियों में अमृत पी लिया तो हमारी दुष्टता का कोई अन्त नहीं रहेगा। यह पूरा जगत नाटकीय बन जाएगा अमृत तो हमें अपने सद्‌गुणों को पिलाना है ताकि वह इतने बढ़ जाएं कि यह हमारा संसार स्वर्ग बन जाएं। हमारे इस तन में देवता भी हैं, असुर भी हैं। अच्छे गुण भी हैं, बुरे अवगुण भी हैं। हम किसको अमर बनाएं यह तो विवेकपूर्वक सोचना होगा। सो अमृत का कलश असुर न प्राप्त कर पाएं। उसके लिए सावधान होना पड़ेगा।

मन्थन में से गरल निकला ओर गरल पीने के लिए कौन तैयार है। कोई नहीं। तो गरल किसे पीना पड़ता है सज्जनों को। समाज का सारा गरल सज्जन पीते हैं। पर उस गरल को गले से नीचे नहीं उतारना। नीचे उतार लिया तो सारे अवगुण जागृत हो जाएंगे। असुर तो असुर है ही हम अपने असुरों को गरल पिला देंगे तो वह और जहरीले हो जाएंगे अतः घूंट भर कर सब की बुराईयां, सबके ताने, सारी दुष्टता सहन करने में कोई सज्जन ही समर्थ हो सकता है। अवगुण तो प्रति हिंसा पैदा करेंगे। इस जगत में मन्थन करिए चारों तरफ से कई तरह का विष दिखाई देगा, पी जाइए। और फिर उसका जिकर मत करिए। क्योंकि जिकर करना ही निन्दा को जन्म देगा और वहीं हम छोटे हो जाएंगे। नीच कहलाएंगे। पी लिया तो शिव बन गए। शिव किसी का भी मंगल ही करेंगे। बुरे से बुरे व्यक्ति को भले मार्ग पर लगाने का प्रयत्न करेंगे यदि दुष्टों का हनन भी करना होगा तो करेंगे कार्तिकेय के हाथों, पर उसको अच्छा

बनाकर उसका कल्याण करने में भी पीछे नहीं हटेंगे। कार्तिकेय के सुमंगल कृत्य से बुरे की बुराई मरेगी। बुरा व्यक्ति तो सुधर जाएगा कार्य मंगलमय मंथन हैं। यह मन्थन इस संसार सागर में करता है मन। मन मन्थन नहीं करेगा तो सुसंस्कृत कैसे होगा। मन सुसंस्कृत हो गया, तो विष्णु बनेगा ही। जो व्यक्ति विष्णु के गुण ग्रहण कर लेता है लक्ष्मी उसके पांव दबाती ही है। पांव दबाती है पर स्वामिनी नहीं बनती, यदि स्वामिनी बन गई तो विष्णु तिरोहित हो जाएगा दुष्ट व्यक्ति लक्ष्मी का सदोपयोग नहीं कर सकता। वह लक्ष्मी पाकर अधर्मचारी होगा और मस्त पागल हाथी की तरह तब्राही करेगा अहंकारी होकर। इस अहंकार के हाथी को ऐरावत बनाना तो देवत्व बिना नहीं हो सकता। इन्द्र (आत्मा) को इस पर सवारी करनी होगी ताकि यह नियन्त्रण में रहे जो व्यक्ति शिव की तरह गरल पी ले, विष्णु की तरह संसार का पोषक बन जाए और अहंकार के हाथी को अपनी सवारी बना ले वह तो सारे संसार का बादशाह हो जाता है। ऐसा प्रभु भक्त, कोई सिद्ध योगी, महान आत्मा, अपनी इन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण रखने वाला जिस प्रभु की छत्रछाया में रहेगा वहां कल्पतरु ही कल्पतरु होगा। कोई अकल्याण या अभिमान की भावना न रहेगी तो वह पूर्ण पुरुष उसकी कौन-सी इच्छा पूर्ण नहीं करेगा। ऐसा महामानव तो औरों के लिए भी कल्प वृक्ष बन जाएंगे। अपने जीवन का दुःख दर्द, पीड़ा व्याधियां, उलझनें लेकर तपस्वियों के पास लोग जाते हैं तो वहां से शान्ति और भगवद् भाव को लेकर लौटते हैं। कैसा सुन्दर है यह मन्थन। पर यह देवासुर, संग्राम निरन्तर चलता ही रहता है। हम देखते हैं बुराईयां विजयी होते, दुष्टों को जनता को लूट-लूट कर आनन्द मनाते। पर क्या ऐसा सदा होता ही रहेगा ? नहीं। जब जब बुराई, पाप, अत्याचार, अनाचार बढ़ जाता है। देवत्व भी उनका मुकाबला करने के लिए प्रकट हो जाता है। पहले अपने अन्तर से युद्ध होता है, वहां के सारे असुर मारकर जब देवत्व पूरी तरह जाग उठता है तो बुराईयां मरने लगती हैं, हारने लगती हैं मिटने लगती हैं। जय जय कार देवत्व की होती है बेशक देवत्व को पाना ही कठिन है, पर यदि मनुष्य स्वयं को देवता के काबिल बना लेता है तो वो पीछे कदम नहीं हटाएगा, वह देवत्व के महत्व को पहचान कर स्वयं को दृढ़ प्रज्ञ, स्थित प्रज्ञ बनाएगा। जब बन जाएगा तो असुर हार जाएगा।

हर व्यक्ति के भीतर यह संग्राम चलता है जो हार जाता है वह घोर कष्टों के नरक में स्वयं को गिरा देता है। जो अपनी स्थिरता को दृढ़ करता है, निरन्तर करता है। वह देवत्व के इतने ऊंचे पद पर स्थित हो जाता है कि फिर कोई गिरा नहीं

सकता। वह ईश्वर का सच्चा बेटा बन जाता है। यही हमें भी करना है। हम सत्य पर चलें देवत्व को प्राप्त करें, संसार का सारा विष पीकर भी विषाक्त न हों अतुल सम्पत्ति जिसे लालायित न करे। प्रशंसा से जिसकी विनम्रता न गिरे। मस्तक न बिगड़े, ऐसा योद्धा जो भी इस संसार में होगा उसे ही देवासुर संग्राम के विजेता माना जाएगा। पग-पग पर हार जाने वाले कमजोर मनोविज्ञान को नहीं। हम ऊंचा उठना चाहते हैं तो हमें ऊंचे से ऊंचा ही सोचना होगा। जीवन में गलतियां होती हैं, पर जिनकी सोच ऊंची है वह गलतियों से घबराते नहीं, उनसे सीखते हैं। अपने कदम और अधिक मजबूत बनाने की बात। गलत, झूठ, नीच काम करने वाले व्यक्ति का मनोबल सुदृढ़ चरित्र ऊंचे धरातल पर मन को टिकाने वाले व्यक्ति के सामने डोल जाता है जब वह अपने झूठ में फंस जाता है तो कितना ही प्रयत्न करे अपने खोदे गड्ढे में वह स्वयं बेहाल होकर गिर जाता है। नष्ट हो जाता है। आखिर इस देवासुर संग्राम में असुर कितना भी जीत जाये आखिर विजय देवत्व की होती है। विजय होना या पराजित हो जाना इतना महत्वपूर्ण नहीं है। मुहापुरुषों को हमने देखा है पराजय में भी अजय रहते। पूर्ण तथा आश्वस्त और सत्य पर आरूढ़ रहते। मनुष्य का यही उच्चतम भाव महत्वकारी है पराजय कितनी भी आएं जो अन्तर से हारता नहीं वास्तविक विजय उसी की है।



आत्मा कहां-कहां

वह सर्व शक्तिमान सर्व व्यापक परमात्मा तो एक ही है-एकोवशी सर्व भूतन्तरात्मा

एकोवसीसर्व भूतान्तरात्मा
एकं रुपं बहुधा यः करोति
तमात्मस्थं यो ऽनुपश्यन्ति धीरा
तेषां सुखम् शाशवतं नेतरेषाम्

समाज मन्दिर में यज्ञ करते एक हवन मन्त्र की पुस्तक में एक पत्र देखा तो उसे मैंने बाद में पढ़ा। लेखक अर्जुन नाम के कोई महानुभाव थे। उनका कहना है कि "कुत्तों, बिलों में आत्मा नहीं होती। यदि कोई किसी को कुत्ता कहे तो उसको कितना बुरा लगता है। परमात्मा जैसे महान तत्व को कुत्तों बिलों में भी है ऐसा सोचना भी पाप है। परमात्मा इतनी घटिया वस्तु नहीं है कि उनको कुत्तों बिलों में ही होने की बात सोची जाए। न ही परमात्मा सर्वव्यापक है यदि ऐसा हो तो वो अवतार कैसे ले सकता है।"

इन महाशय जी की बुद्धि पर बहुत ही तरस आया। जगदीश चन्द्र बोस जी ने तो जहां तक कहा कि पेड़ पोधों में भी भगवान है। हर व्रस्तु जो भीतर से बढ़ती या घटती है चाहे वह जानवर है और उसमें आत्म सत्ता है। खैर छोड़िये जगदीशचन्द्र बोस जी को। हम तो वेदों की बात करते हैं। वेद ईश्वरीय ज्ञान है और हर बात में वेद ही प्रमाण हैं। वेद ही संसार भर के सबसे पूर्ण और पुरातन ज्ञान के ग्रन्थ हैं। अर्जुन साहब कहते हैं कि यदि ईश्वर सर्वव्यापक होता तो अवतार कैसे लेता। तो मिस्टर अर्जुन समझ लीजिए कि ईश्वर अवतार नहीं लेता। आपका भ्रम है कि ईश्वर अवतार लेता है। इस पूरे ब्रह्माण्ड का एक ही स्वामी है ज़िसका कोई आकार नहीं है आकार होता तो उसकी शक्ति भी सीमित होती। लेकिन जितनी ईश्वर की शक्ति है उतनी बड़े से बड़े पहलवान की शक्ति भी नहीं है। जो महापुरुष इस संसार में जन्म लेते हैं शरीर धारण करते हैं वह अपने पुण्य कर्मों के फलस्वरूप, तप के परिणामस्वरूप दिव्य ईश्वरीय गुणों से सम्पन्न होते हैं। ईश्वर नहीं होते। ईश्वर को

जन्म लेने की जरूरत ही नहीं है। वह बिना जन्म लिए पर्वतों को चूर चूरकर सकता है। बादल बरसा सकता है। भूकम्प ला सकता है। सागर लहरा सकता है, सारे विश्व का पालन कर सकता है, सबको मृत्यु दे सकता है और सबको नव जीवन भी दे सकता है। जो जैसा कर्म करता है। उसे उसका फल वही दे सकता है अन्यथा अपने दुष्ट कर्मों का फल कोई स्वयं न भोगना चाहेगा न भोगेगा। सारी सृष्टि को वही नियम में चलाता है ? कोई सहायक उसे नहीं चाहिए, जिन महानात्माओं को आप ईश्वर की संज्ञा देते हैं वह उस भगवान के भेजे हुए ही होते हैं। उन्हें भगवान मत कहो भगवान के पुत्र कहो। क्योंकि सारा विश्व उसी की सन्तान है। यह ठीक है जब-जब संसार में अन्याय, अत्याचार, अधर्म बढ़ जाता है ईश्वर अपने ऐसे बेटों को इस संसार में भेजता है। जो गुमराह हुए लोगों को फिर से मार्ग पर लगा सके। रास्ता दिखा सके, क्योंकि आपकी तरह की सोच वाले लोगों को भटकनों से मोड़ने के लिए ऐसी आत्माओं को इस धरा पर आना पड़ता है। हर युग में, हर काल में, हर देश में कि वह उसका सन्देश, उसकी सत्ता के विषय में संसार को बताकर मार्ग पर ला सके। अगर ऐसा न हो तो यह दुनिया रहने योग्य न रहे। ईश्वर कर्मों का फल देने के लिए किसी भी आत्मा को कोई भी योनि में जन्म दे सकता है। आप कुत्तों बिलों की बात करते हैं। वह तो एक छोटी से छोटी च्युंटी में भी है-मक्खे में भी है। जो जैसी करनी करता है उसके लिए वैसी जेल उसने बना रखी है। जैसे उसने सारी सृष्टि को खुला रखा है। कोई ताला नहीं लगाया। उसकी जेलें भी तालों के बिना ही हैं। कोई भी प्राणी इतना स्वतन्त्र नहीं है कि करने को वह जो चाहे कर ले। जो जैसा करता है वह वैसा ही फल पाता है। यदि ईश्वर सर्वव्यापक नहीं है तो फिर बहुत सारे ईश्वर होने चाहिए कोई कहीं का, कोई कहीं का। इस दुनिया की बादशाहत ज्यूं ही तो चल नहीं सकती। और जब बहुत सारे ईश्वर होंगे तो आपस में उनके झगड़े मुकद्दमें भी होंगे। जैसे मनुष्यों ने बना रखे हैं। पर उसकी सृष्टि को तो ऐसा देखने को आज तक नहीं मिला। हां जीव सृष्टि में ऐसा है तभी तो इतनी गड़बड़ फैलती है। ईश्वरों की न कभी लड़ाई हुई न कभी झगड़ा। दूसरी बात यदि कुत्तों बिलों में आत्मा नहीं होती तो फिर बाकी जानवरों में, पक्षियों में, जलचरों में भी आत्मा नहीं होनी चाहिए। जी भर कर मांस, मछली, अण्डे खाते रहिए। पर कर्म की व्याख्या तो यह है कि यदि आप दूसरों को मारकर खाते हैं तो कल को आप को भी उन योनियों में जाना और उन्हीं की तरह मारा जाना, खाया जाना निश्चित है आप अपने कर्म से बच नहीं सकते। धर्म तो यह कहता है कि खाने से पहले यह सोच लीजिए कि जीव सृष्टि के प्रति भी हमारा कर्त्तव्य है। पक्षियों को पशुओं

को पालना, उनकी रक्षा करना, उनके जीवन का ध्यान रखना हमारा कर्त्तव्य है। जब आप किसी जीव को मारने लगते हैं तो उसकी आंखों में झांक कर देखिए वह आपको किस नजर से देखता है आपको समझ आ जाएगी कि उसमें आत्मा है या नहीं। यह तो उस खिलाड़ी का खेल है कि वह इसकी सृष्टि रचता है, उसका पालन का प्रबन्ध करता है और संहार का भी इन्तजाम करके रखता है। वह भूलता नहीं है कि किसको कब जन्मना, कब मरना और कैसे रहना है। न ही कोई स्थान उससे खाली है वह इतना विशाल है कि सारी संसृति उसके ही गर्भ में समाई हुई है। उसी में हम सब जन्म लेते हैं। जीते हैं और मरकर भी उसी में समा जाते हैं। इसी से जन्म के पहले क्या थे नहीं मालूम। मृत्यु के बाद क्या होंगे नहीं मालूम। आंख बन्द हुई सांस रुकी कि इस जीवन का इतिहास समाप्त अर्थात् विस्मृति के गर्भ में जन्म लेने वाला न जन्म अपनी ताकत से लेता है न अपनी ताकत से मरता है। यह सारे कर्म उसने अपने हाथ में रखे हैं चाहे कोई किसी देश का हो या किसी मजहब का हो या किसी योनि का हो।

हां अपनी पूरी कृति में भगवान ने मनुष्य को सर्वश्रेष्ठ कृति बनाया है। इसमें कोई सन्देह नहीं क्योंकि मनुष्य को अतिरिक्त बुद्धि का वरदान मिला है। कर्म का अधिकार मिला है अपनी शक्तियों को बढ़ाने की कला भगवान ने दी है। भवसागर से पार उतरने का मार्ग दिया है, मोक्ष का रास्ता दिया है। यह मानव की इच्छा पर है कि वह उसके खजाने से क्या पाना चाहता है। जो पाना चाहता है वैसे कर्म करने होंगे। लूट-पाट करके कुछ नहीं मिलता। जो मिलता हुआ नज़र आता है उसके साथ ही दण्ड भी मिलता दीख जाता है। अब चाहे तो सत्य ज्ञान को प्राप्त करने के लिए वेदों की, ज्ञान की, यज्ञ की, तप की, सत्य की शरण में चला जा या भवसागर में गोते लगाता रहे। यदि उसके होने का विश्वास है तो उसकी आराधना कर। यदि नहीं है तो मृत्यु के समय प्राण कौन खींच कर ले जाता है यह समझ आ जाएगी। ज्ञान नहीं है जो ईश्वर में आदि सृष्टि में दे दिया। मत मतान्तरों में पड़कर स्वयं को भ्रमित करके समय व्यर्थ गंवाने से क्या लाभ। आत्मा परमात्मा, प्रकृति के विषय में वेदों में विस्तृत ज्ञान है उसे जानने का प्रयत्न करो तो किसमें आत्मा है किसमें नहीं है अच्छी तरह समझ में आ जाएगा। वेदों से बढ़कर इस फिलासिफी को कोई समझा नहीं सकता। वेद ही प्रमाण हैं। क्योंकि वेदों का ज्ञान देने वाले स्वयं भगवान् हैं। अर्जुन जी आपने अपना पता नहीं भेजा यदि पता भेजते तो मैं आपको आपकी बात का उत्तर भी भेज देती।



आशा किरण

बरसों गुजर गए भारत की आजादी की सुबह रक्त रंजित सुबह के साक्षी हम भी हैं। बड़ी सुखद कल्पनाएं थीं भारत माता के लिए। आज इतने वर्षों बाद भारत की जो तस्वीर है उसे देखकर मैं नहीं, इस देश का हर इन्सान एक बहुत बड़ी हताशा को भीतर समेटे हुए है। यह नहीं कि देश आगे नहीं बढ़ा। बहुत कुछ बदला है पर धीरे-धीरे भ्रष्टाचार की घुन ने ऐसा जाल बिछाया है कि हर व्यक्ति उसके डंक से पीड़ित है। आज हमारी अपनी भाषा परित्यक्ता का जीवन जी रही है। हमारा विधान दोष पूर्ण है और कष्ट का विषय यह है कि देश के रक्षक ही देश के भक्षक बने बैठे हैं। राजनीति लोगों को लड़वाने और राज करने की हो गई है। वोट की नीति ने भ्रष्टाचार को बहुत बढ़ावा दे दिया है। न्याय व्यवस्था चरमरा गई है। चोर राजा और असहाय प्रजा का युग आ गया है। बेईमानी एक-एक इन्सान में घुस गई है। आतंकवाद की समस्या अलग खड़ी है। असन्तोष चारों तरफ है। स्थिति से सब निराश हैं। पर बोल कोई नहीं रहा था। यह समझ नहीं आ रही थी कि कहां से शुरू करें। इस बीच में रामदेव जी के रूप में एक जन आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ। आशा की एक किरण फूटी। अन्ना हजारे जी ने अनशन करके जन लोकपाल का आन्दोलन चलाया। सरकार के भ्रष्ट लोगों ने बड़ी कठिनाई से उस आन्दोलन को ठण्डा किया कि रामदेव जी ने रामलीला मैदान में एक और आन्दोलन खड़ा कर दिया। घबराई हुई सरकार ने पहले ही दिन आधी रात को पुलिस आक्रमण द्वारा इस आन्दोलन को तहस नहस कर दिया। जिससे सरकार का घिनौना रूप खुल कर सामने आ गया। अन्ना हजारे जी ने जब लोकपाल बिल के खरपचे उड़ाते देखा तो फिर ये अनशन पर बैठ गए। इस आन्दोलन को भी कुचलने का भरसक प्रयत्न किया गया। परन्तु जनता का समर्थन और अन्ना हजारे जी की दृढ़ता ने अपना रंग दिखाया। अनशन 13 दिन चला। सरकार ने कुछ शर्तें मानने का वायदा देकर इस आन्दोलन से मुक्ति पाई। परन्तु उसके बाद लग रहा है कि कोई नयी चाल चलने की फिराक में सरकार अब भी अपने तरीकों से बाज आने वाली नहीं है। चुनावों में अभी दो वर्ष और बाकी हैं। नेतृत्व में मजबूत लोगों के होने से अब जनता ने भी ऐसा ठान लिया लगता है कि सरकार का तख्ता पलट कर देश की राजनीति को निष्कपट बनाया जा सके। एक जागृति की लहर उठी है। बहुत से लोगों का विचार है कि भ्रष्टाचार इतना है

कि क्या कर लेंगे अन्ना हजारे और क्या कर लेंगे रामदेव, इस भ्रष्टाचार को मिटाने का कोई प्रयत्न सफल नहीं होगा। बीमारी को लाइलाज छोड़ देने से मरीज़ मौत के मुँह में समा जाएगा इसमें क्या सन्देह है। इतिहास साक्षी है कि जब-जब अत्याचार, अन्याय, आतंकवाद इस देश में तूल पकड़ गया, तब तक कोई न कोई महापुरुष अवतरित हो गया। युद्ध हुए, बलिदान हुए पर, फिर से अनाचार का अन्धकार छटा। आज फिर वैसी ही स्थितियां उपस्थित हो चुकी है। जनता जो बेबसी की हालत में पहुंच चुकी थी नेतृत्व पाकर जागृत हो गई। एक दम तो इतनी विशद् बीमारी को समाप्त नहीं किया जा सकता परन्तु अब इसकी जड़े हिलाने का समय उपस्थित हो गया है।

बहुत से स्कैंडल सामने आ रहे हैं। एक-एक करके देश के शीर्ष पर बैठे लोगों की करतूतें नंगी हो रही है। खुले आम जो रिश्वतखोरी काला बाजारी, बलात्कारी और अत्याचारी घटनायें पकड़ में आ रही हैं, समय तो लगेगा। सफाई करने में पर यह काले बादल छटेंगे ही। और यह सब तभी होगा जब जनता जागृत रहेगी, मजबूत रहेगी, नेतृत्व में रहेगी और संगठित रहेगी। ऐसे लोगों की आवश्यकता है जो जनता को जोड़ कर रख सकें। शीर्ष पर बैठे लोगों में यह त्रास हो कि वह भक्षक न बन सकें। अन्याय की खुली छूट उन्हें न हो। नेतृत्व में धार्मिकता हो। धार्मिकता लोगों को बांटने के लिए नहीं, जोड़ने के लिए है। धर्म निरपेक्षता के नाम पर जितनी मजहबों की धूल इन लोगों ने उड़ाई है वास्तव में आतंकवाद को जन्म उसी ने दिया है। यदि सरकार की नीति divide and rule की न होती तो देश में मेल मिलाप से ही बहुत उन्नति हो जाती। सरकारें ही देश को खुशहाल नहीं बनाना चाहती इसलिए विकास और जन कल्याण पर खर्च किया जाने वाला पैसा काला धन बनता जा रहा है और देश से बाहर धकेला जा रहा है। स्मगलर बढ़ रहे हैं। माफिया जोर पकड़ रहा है। चुनावों के लिए काला धन इन्हीं चोरों स्मगलरों से लिया जाता है जो उन्हें और प्रोत्साहन मिलता है अब तो बहुत से लोग संसदो में इन्हीं भ्रष्टाचारियों से हैं जिनका उद्देश्य केवल धन है अपने स्वार्थ के लिए। कोई इच्छा नहीं है किसानों, मजदूरों, निर्धनों, पढ़े लिखे नौजवानों बेकारों के भले की। बस येन केन प्रकारेण अपनी तिजोरियां भरने के लिए यह लोग शीर्ष पर बने रहना चाहते हैं जिससे उनके घिनौने कार्यों पर पर्दा पड़ा रहे और वह अपनी लूट जारी रखें।

अतः ऐसे में एक महाआन्दोलन की ही आवश्यकता है खुशी की बात यह है कि जो आन्दोलन हो रहे हैं वे पूर्णतया अहिंसक हैं। यदि जुल्मोसितम बढ़ गया तो हिंसक क्रान्ति भी जन्म ले सकती है उससे देश में बहुत तबाही होने की शंका है।

इसलिए ऐसी स्थिति आने से पहले ही देश की दशा सुधर सके ऐसा ही प्रयत्न जारी है, आज के इन क्रान्ति के महारथियों का। आज सारा संसार हमारे इस अहिंसक युद्ध को ध्यान से देख रहा है और आवश्यकता है देश का बच्चा-बच्चा सन्नद्ध होकर इस क्रान्ति का भाग बन जाए। अहिंसक क्रान्ति भी कितना हिला सकती है बड़ी से बड़ी ताकतों को, इसका अन्दाजा तो हम लोगों को हो ही गया है। आज बहुत से वीर हैं जो शहीद होने को तत्पर हैं। और इस क्रान्ति की सफलता में कोई सन्देह नहीं।

देश में सुव्यवस्था लाने के लिए बहुत कुछ बदलने की आवश्यकता है। आज चारित्रिक मूल्य इतने गिर गए हैं कि नारी जाति के सम्मान की रक्षा भी प्रश्न चिह्न बन गई हैं। शिक्षा के क्षेत्र में भारी परिवर्तनों की आवश्यकता है। खान-पान की आदतें इतनी बिगड़ गई हैं कि सारे देश का स्वास्थ्य खतरे में है। हमारे खेत जहरीले हो रहे हैं। धरती बंजर बनाई जा रही है भू स्खलन बढ़ रहे हैं, जल प्रबन्ध की घोर समस्या है। वायु मण्डल दूषित है। नदियां बेकाबू हैं इन आपदाओं से जन जीवन में आए दिन कोई न कोई मुसीबत खड़ी रहती है। हिंसक प्रवृत्तियों में इतनी बढ़ौत्तरी हो गई है कि आतताईपन पर काबू (नियन्त्रण) पाना कठिन हो रहा है। यदि शासन सुशासन होगा तो हमारी इन समस्याओं में सुधार आने लगेगा। कभी भारत ऐसा था कि लोगों को घरों में ताले नहीं लगाने पड़ते थे क्या उस युग को फिर से वापिस नहीं लाया जा सकता ?



साधु समाज कैसा हो

आज देश को ऐसे साधु समाज की आवश्यकता है जो आत्म कल्याण को लेकर हिमालय की चोटियों पर ही अपना जीवन न बिता दे, प्रत्युत्त हमें स्वामी विवेकानन्द स्वामी दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द जैसे साधु चाहिए जो स्वयं जागें और संसार को जगा दें। आज भी भारत में अधिकतर जनता शिक्षा से दूर है और जो शिक्षित हैं वह भी अपने देश की संस्कृति से अनभिज्ञ हैं। कुछ नहीं जानते तो भिखारी बनें हुए समझते है हम कंगाल हैं। ज़रा-ज़रा के लोभ में धर्म परिवर्तन कर लेते हैं। कोई उनसे उनके मूल धर्म की बात करे तो कोरे के कोरे हैं। इसी से तो अग्रेजों को यह कहने का साहस हुआ कि तुम्हारें वेद गडरियों के गीत हैं। लोगों ने उसी बात को सच मानकर अपने मूल धर्म का परित्याग कर दिया। धर्म की, सदाचार की, चरित्र की शिक्षा का प्रचार कौन करेगा ? आचार संहिता कौन समझाएगा। कौन वैदिक शिक्षा का प्रचार करेगा, कौन हमें इन पोंगा पण्डितों के डरावने किस्सों से निर्भय करेगा कौन हमारा पाखण्ड दूर करेगा। आज राम और कृष्ण की संस्कृति का सच्चा रूप कौन जनता को समझाए ? साधु समाज स्वयं सुघड़ हो, तपभूत हो और जनता में आकर सटीक पथ प्रदर्शन करने वाला हो। आज इस कार्य की आवश्यकता सब समयों से अधिक है। हमारी सांस्कृतिक सम्पदा इतनी समृद्ध है कि पूरा जीवन उसे सीखते रहें तो भी कम है। पर शिक्षक कहां से आएंगे ? साधु समाज जनता में आए, गुरूकुल से स्कूलों कालेजों में छा जाए। देश की नव पीढ़ी का पथ प्रदर्शन करें। एक आम गृहस्थी न तो स्वयं इस शिक्षा से स्वयं सम्पन्न है न वह दूसरों को सिखा सकता है। आज की शिक्षा नौकरी करने, धन कमाने के तरीके सिखा सकती है। डाक्टर, इंजिनियर बना सकती है पर चारित्रिक मूल्यों को नहीं समझा सकती। उसके लिए आत्म साधना करने वाले लोगों की आवश्यकता है। इसलिए हिमालय की

चोटियों से उतर कर यह शिक्षा आज के नये रक्त में घोलने की आवश्यकता है। दयानन्द न आते तो कौन छुआछूत मिटाता, कौन नारी शिक्षा का डंका बजाता ? कौन बलि प्रथा रोकता ? कौन बाल विवाह रोकता? कौन विधवाओं को जुल्म से बचाता? विवेकानन्द न आते तो शिकागो में भारतीय दर्शन का दिग्दर्शन कौन कराता ? कौन विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करता ? कौन सत्य धर्म की अलख जगाता ? जिन्हें और शिक्षा नहीं मिलती उन्हें धर्म की चरित्र की, सदाचार की शिक्षा साधु समाज दे सकता है। आज बहुत से साधु हैं जो केवल भिक्षा वृत्ति करके पेट पालना जानते हैं। ऐसे साधु नहीं चाहिए। ऐसे साधु तो जनता को गुमराह कर देते हैं। साधु तपस्वी, चरित्रवान, गुणवान, बुद्धिमान और शिक्षा देने में प्रवीण होने ही चाहिए। यदि हमारा साधु समाज ऐसा होगा तो हमारे में कल के नौजवान स्वस्थ सुघढ़, बलवान, बुद्धिशाली, कर्त्तव्य परायण, देश भक्त होंगे। परिवारों में सुख शान्ति होगी सद् शिक्षा होगी। हमें एक सुन्दर समाज मिले तो देश समृद्ध होगा। ऐसा साधु समाज हमारे लिए वरदान होगा। आज स्वामी श्रद्धानन्द जी के गुरुकुल के आचार्यों के वेद मन्त्रों के अर्थ व्याख्या सहित मिलते हैं तो पढ़ कर बुद्धि निर्मल हो जाती है। ऐसे साधु समाज की ही आवश्यकता है।



वृद्धावस्था

वृद्धावस्था आते-आते मनुष्य का मित्रता का दायरा कम होता जाता है। बहुत से मित्र धीरे-धीरे कूच कर जाते हैं, नये बनते नहीं। स्वयं अपनी शक्ति कम होने से घर से बाहर जाना भी कम हो जाता है। पति पत्नी में से एक चला गया तो जो बचा उसके एकाकीपन का कोई अन्त नहीं। ऊपर से यदि रोग आ जाए तो और मुसीबत। नौजवान कामकाज में व्यस्त। बच्चे पढ़ने लिखने में निरत। किसी को बात करने की फुर्सत नहीं। क्या करें बेचारे वृद्ध ? रह-रह कर पुरानी यादें उभर आती हैं। जी चाहता है दूसरों को सुनाएं पर वही-वही बातें फिर-फिर सुनकर सब तंग आने लगते हैं। कई लोगों को तो यह वृद्धावस्था वृद्ध आश्रमों में बितानी पड़ती है। वहां भी किसी का दिल लगता है किसी का नहीं। सन्ध्या वन्दन, पूजा पाठ भी सबके बस का रोग नहीं होता। पाचन क्रिया भी कमजोर हो जाती है। दिल नहीं लगता, ऐसे में क्या करे वृद्ध।

वृद्धावस्था सबको आ जाती है यदि ईश कृपा से जीवन लम्बा मिले तो। जिन लोगों को पढ़ने लिखने का शौक हो उनके लिए समय बिताना ज्यादा कठिन नहीं होता। वह कुछ न कुछ करते रहते हैं। जिन्हें स्वयं को किसी न किसी तरह व्यस्त रखने की आदत हो वह भी ज्यादा दुखी नहीं होते। पर रोगी निठल्ले होकर समय की सुईयां गिनते ही हो जाता है। नींद कम आती है। रात जगराता तो बिताना और भी कठिन होता है।

पर आज कल वृद्धों के लिए बहुत बढ़िया मन बहलाव समय का सदोपयोग तथा स्वस्थ वृद्धावस्था गुजारने का ढंग जो स्वामी रामदेव जी ने इजाद किया, उसका कोई जवाब नहीं। सुबह 4 बजे उठिए, प्रातः क्रिया से निवृत्त होकर बैठ जाइए। यदि अड़चन हो तो उसके लिए भी रामदेव जी को ही सुनिए। दो गिलास गर्म पानी गले के नीचे उतार दीजिए गट-गट करके और अच्छा यदि 2-4 बड़े चम्चम ऐलूवेरा पी लीजिए। थोड़ा चलिए, पेट हिलाइए बस हो जाएगी सफाई। सफाई हो गई तो मन हलका हो गया। टी.वी. पर प्राणायाम व्यायाम की प्रतिदिन की क्रिया रामदेव प्रतिदिन ही आपके सामने बैठे सिखा रहे होंगे। हो जाईए चालू। जो कठिन लगे छोड़ दीजिए। घण्टा दो घण्टे, अढ़ाई घण्टे आसानी से गुजर जाएंगे और शरीर के आधे रोग भी

नमस्कार कर देंगे। जीवन जीने का कितना अच्छा ढंग सुबह-सुबह मिल गया। मैं वृद्ध हूँ क्या करूं यह सोचने की आवश्यकता ही नहीं। मन हो तो थोड़ा टहल भी आइए। शरीर में स्फूर्ति आ जाएगी तो इधर-उधर दोस्तों में बैठक भी हो जाएगी। यदि आस-पास योग की कोई क्लास लग रही हो तो उसी में चले जाइए। गप-शप भी हो जाएगी। जब सुबह अच्छी होगी तो दिन भी अच्छा ही होगा थक जाओ तो थोड़ा सो जाईए खूब गहरी नींद आएगी। भूख नहीं लगती तो लगने लगेगी। ज्यादा लगती है तो नार्मल हो जाएगी। हां खान-पान में जरा ध्यान रखिए कि कुछ गलत न खा लें। गलत खाएंगे तो कष्ट होगा। सन्ध्या समय भी योग कर सकते हैं। दोस्त, अच्छी बातें करेंगे तो दोस्त जुड़ जाएंगे। वृद्ध व्यक्ति यदि अपनी दिनचर्या इस तरह बदल लें तो उसे याद ही नहीं रहेगा कि वह वृद्ध है। अलबत्ता उससे योग सीखने, स्वास्थ्य का राज जानने नौजवान भी आ जाएंगे। हां वृद्धों को ज़रा यह भी ध्यान रखना पड़ेगा कि नये जमाने के बदलते रंग ढंग में चलते नौजवानों को सहन करना सीख लें। बस फिर सुख ही सुख है। यदि हम मन से बूढ़े हो जाएंगे तो मुश्किल होगी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वृद्धों के पास बहुत अनुभव होते हैं। जिन्हें दूसरे सुनने में नहीं उकताएंगे। प्रत्युत उन्हें कुछ नवीन सीखने को मिल जाएगा। फिर देखिए कितनी खूबसूरत हो जाती है वृद्धावस्था।

यदि आपके पास धन है, पेन्शन है तो फिर कहना ही क्या। कुछ न कुछ छोटों को देते रहिए, बच्चे तो मधुमक्खियों की तरह आपसे चिपके रहेंगे। वो भी आपको प्रसन्न करने का भरसक प्रयत्न करेंगे। धन अधिक नहीं है तो भी मनुष्य में कोई न कोई उपयोगिता होती है। जिससे वह दूसरों का प्रिय बना रहता है। क्यों है न वृद्धावस्था भी कितनी मनभावन, कितनी सुहावनी। भगवान को अधिकतम अन्तिम सांस तक याद करो मन शान्त, मस्तिष्क स्वस्थ और शरीर मित्र बना रहे। ऊपर से सृजन का नशा भी कर लो। सत्संग में, भजन कीर्तन में चलो जब मौका मिले बैठ जाइए। आनन्द ही आनन्द है। याद रखिए मैं यह लेख 82 वर्ष की आयु में लिख रही हूँ। योग प्राणायाम ने स्वस्थ मस्तिष्क और हलका बना दिया है उसके लिए रामदेव जी को धन्यवाद।



हमारा आचरण सूर्य और चांद जैसा हो व्यवस्था परिवर्तन

जैसे पहिए के अरे पहिए की नाभि में फंसे रहते हैं पहिया कितना बड़ा हो नाभि में अरे फसे है तो रथ दोड़ेगा, खूब दौड़ेगा। सूर्य के परिवार के सारे नक्षत्र अज्ञात बन्धन से सूर्य से बन्धे हैं और अपनी-अपनी धुरी पर घूमते हैं प्रतिपल, पश्चिम से पूर्व की ओर युगों-युगों से सब घूम रहे हैं, बिना एक पल का विश्रांम किए। मन्दिर की परिक्रमा भी पश्चिम से पूर्व की ओर की जाती है। नाभि से बन्धे-बन्धे यह चक्र गति पूर्वक घूम सकता है। किसी भी परिवार में एक न एक व्यक्ति होता है जिसके कारण परिवार बन्धा होता है और सब प्राणी अपना-अपना कर्त्तव्य निभाते हुए परिवार की व्यवस्था को बनाए रखकर सुखपूर्वक घर चलाते हैं। समाज में कोई न कोई मुख्य व्यक्ति समाज को गति देता है और राष्ट्र भी तभी सुव्यवस्थित ढंग से चलता है यदि राष्ट्र को चलाने वाला नेतृत्व स्वस्थ मजबूत और पूरी प्रजा को न्यायपूर्वक पूरी निष्ठा से चलाने वाला हो। अराजकता तब फैलती है जब राजा कमजोर, बेईमान, स्वार्थी, लालची और प्रजा का अहित चाहने वाला हो। प्रजातन्त्र में बेशक राजा प्रजा ही चुनती है पर पद का मद यदि राजा को कर्त्तव्यहीन बना दे तो प्रजा में असन्तोष फैलता है उससे आन्दोलन होते हैं, हड़तालें होती हैं। यहां तक कि हिंसा भी होती है। राजा दमन करता है तो देश में और भी तबाही होती है। प्राकृतिक आपदाएं भी बहुत आने लगती है।

हम परिवार से ही आरम्भ करते हैं। परिवार में मां ही परिवार की नाभि होती है। बच्चे थोड़े हों या अधिक जिस घर में मां बुद्धिमति, स्वस्थ, कर्त्तव्य परायण, सम दृष्टि वाली, सुघड़ और शान्त स्वभाव की होगी, वाणी में संयम होगा, उस घर की व्यवस्था दूसरे घरों से बेहतर होगी। मां की शिक्षा अच्छी होगी तो बच्चों में भी गुण प्रवेश कर जाएंगे। वैसे गाड़ी कम से कम दो पहियों पर चलती है। दो से अधिक तो होते ही हैं। ट्रेन की लम्बाई के हिसाब से पहिए भी बहुत होते हैं। पर अपने मार्ग पर इंजिन के साथ चलते-चलते ट्रेन हजारों किलोमीटर चलती रहती है। लाखों

यात्रियों को उनकी मंजिल पर पहुंचाती है। गाड़ी का पहिया अपने पथ से जरा भी विचलित हुआ के दुर्घटना घटी। जीवन की गाड़ी भी दुर्घटनाग्रस्त न हो जाए उसके लिए माता-पिता को सावधान रहना पड़ता है। आज परिवारों में अशान्ति, लड़ाई झगड़े, विघटन यहां तक कि यहां युद्ध भी होने लगे हैं। महाभारत चारों तरफ लगा हुआ है। सबकी चाल.अपनी-अपनी हो गई है। न विचार एक समान, न रहने-सहने का ढंग एक सा, न खाने पीने की रुचियां एक सी। प्रतिदिन प्रतिपल आन्दोलन, पारस्परिक विरोध, ईर्ष्या, द्वेष, लालच परिवारों को नष्ट कर रहा है। विघटन हो रहे हैं। माता-पिता की वृद्धावस्था में सब बच्चे छोड़कर अलग-थलग हो जाते हैं। सामूहिक पारिवारिक शैली समाप्त हो रही है। सगे बहिन भाइयों में प्रेम-भाव का लोप हो रहा है। तो समाज में संगठन कैसे ? समाज संगठित हो तो राष्ट्र में शान्ति कैसी ? बच्चे और बूढ़ों में generation gap आ रहा है। सब अपनी-अपनी अलग दिशा की ओर भाग रहा है। पारिवारिक परम्पराएं टूट रही हैं। मत मतान्तरों में दिन प्रतिदिन बढ़ौतरी हो रही है। नये-नये धर्म, नयी-नयी विधाएं लेकर पथ-भ्रमित कर रहे हैं। एक ही परिवार में कई मत मतान्तर घुस जाते हैं जिससे धर्मों की मान्यताएं लेकर भी परिवारों में मतभेद पैदा हो जाते हैं। मानवता का सर्वोपरि धर्म लुप्त हो रहा है। जिससे आज हम ऐसे कगार पर पहुंच गए हैं कि कब, कहां, कौन सा विस्फोट होगा कोई पता नहीं।

सरकारों के खेल तो हम रोज ही देख रहे हैं। जो देश के शीर्ष हैं, वही देश के भक्षक हो रहे हैं सारी राजनीति पांच वर्ष बाद होने वाले चुनावों पर टिक जाती है। चुनावों में अधिक से अधिक वोट कैसे प्राप्त करें उसके लिए कौन-कौन से हथकण्डे अपनाएं, सारी कूटनीति छुपा के कैसे रखें सारी अकलमन्दी इसी पर केन्द्रित हो गई है। आए दिन नये-नये स्कैंडल सामने आ रहे हैं। जिन लोगों को कमान हाथ में देकर प्रजा गहरी नींद सो जाती है, सारी खुराफात के पीछे उन्हीं का मस्तिष्क कार्य करता दिखाई देने लगता है इन बड़े-बड़े लोगों को झूठ बोलते, छल करते, देश का धन लूटते खुले आम देखा जाता है। न्यायालयों में झूठी गवाहियों के सिर पर अपराधी स्वतन्त्र और निरापराधी सींखचों के पीछे हो जाते हैं। और नाभि से छिन्न-भिन्न हो जाते हैं। ऐसे में देश के कर्णधारों पर भी क्या विश्वास हो सकता है।

अपने-अपने घोंसलों में छिपे बैठे रहने से तो काम नहीं चलेगा यह अराजकता की आग हमारे घर भी पहुँच जाएगी। यह आततायीपन सब को निगल जाएगा इसलिए

सबको जागना होगा। आज जागृति का शंख बजने लगा है। असन्तुष्ट जनता का आक्रोश लावे की तरह फूट रहा है और हम एक भारी परिवर्तन कगार पर खड़े हैं। देखिए कब क्या होता है और कैसे देश फिर से स्वस्थ, सुडौल, सुन्दर व्यवस्था को प्राप्त करते हैं। यह अब आने वाला समय बताएगा। देश में राजा से लेकर छोटी से छोटी इकाई पर अंकुश की जरूरत है। अन्ना हजारे जी का आन्दोलन इसी बात को लेकर है। वह जन लोक पाल में यही कानून की धारा बनवाना चाहते हैं कि देश के अहित में राजा भी हो तो वह भी सजा का पात्र होना चाहिए। स्वच्छन्दता किसी को भी कुधर्म पर अग्रसर कर सकती है। घर की नारी स्वच्छन्द हो तो वह घर बर्बाद कर देती है। बच्चे स्वच्छन्द हो तो उनका जीवन नष्ट होने का अन्देशा बना रहता है। जहां पिता अपनी मर्जी से गलत मार्ग पर चल पड़ते हैं वहां परिवार की सारी गरिमा मिट्टी में मिल जाती है। आज बेईमान बलात्कारी सीना तान कर क्यों चलते हैं। अंकुश कठोर हो तो कोई भी नियम तोड़ने से पहले इन्सान दस बार सोचेगा। आज भारत की यह हालत है कि गुरु जैसे संसद पर हमला करने वालों को फांसी देना कठिन हो रहा है। अपराधी बड़े-बड़े अपराध करके भी आंखें दिखाते हैं और बेकसूर बै मौत मारे जाते हैं। यह सब एक बहुत बड़े देश के बहुत बड़े जनतन्त्र में हो रहा है। कहां पर है हमारी राष्ट्रीयता, हमारा देश प्रेम, हमारा आत्म गौरव ?

अपने-अपने नीति स्वार्थों ने कर्णधारों ने कानों में सीसा भर दिया है। न्याय, सदाचार, सत् असत् का विचार ताक पर रखा रह गया है। यही हम भारतीयों की सबसे बड़ी कमजोरी और बद किस्मती है। इसीलिए एक-एक मानव से झकझोरने की आवश्यकता है। जो अपनी जान हथेली पर रख कर आगे आते हैं उन्हें कुचलने का भरसक प्रयत्न किया जाता है। झूठे तर्क, झूठी गवाहियां, झूठे वायदे और झूठे कर्म करके भी बड़ी बेशर्मी से छाती ठोंक कर चलते हैं धूर्त । और कानून ऐसे हैं कि इन धूर्तों को शिकंजे में कसना मुश्किल हो रहा है। दुनिया के देश तमाशबीन बन कर हमारे इस बन्दर नाच को देख रहे हैं। वास्तव में बड़ी ताकतें यह चाहत ही नहीं कि भारत उनके मुकाबले में खड़ा हो। जब भी मौका मिलता है वह हमें कमज़ोर बनाने की, आपस में लड़वाने की ही कोशिश करते हैं। ऐसी स्थिति में एक एक व्यक्ति को सन्नद्ध करने की आवश्यकता है। हम एक विचार, एक खान पान, सात्विक जीवन शैली चला कर एकता को, संगठन को मज़बूत बना सकते हैं। हमें पहले स्वयं को, अपने एक-एक घर को, समाज को स्वस्थ और संगठित करना होगा।

फिर ही एक सुदृढ़ राष्ट्र बना कर संसार के दूसरे देशों के सामने खड़े हो सकते हैं। भारत मज़बूत होगा तो कोई हमारी हानि करने में सफल नहीं होगा। भारत किसी पर आक्रमण नहीं करता, किसी की धरती नहीं छीनता, फिर भी हमारे पड़ोसी देश हमारी ज़मीन, धन, सत्ता को झपटने की फ़िराक में रहते हैं। सावधान पहरेदारी देश के प्रति हमारी ईमानदार और सच्चाई ही हमें बचा सकती है। इसी ढाल को लेकर हम दुनिया का सामना करें, भविष्य में करते रहें इसके लिए हमारा आचरण सूर्य और चांद की तरह हो। तो हम किसी से विजित नहीं होंगे।

स्वस्ति पन्थामनुचरेम
सूर्य्या चन्द्रमसा विव
पुनर्ददता घ्नता जानता
संगममेमहि



वैदिक शिक्षा

धर्म की सही शिक्षा वेदों से ही मिलती है। वेदों में धर्म के अर्थ कोई मजहब, कोई मतमतान्तर अथवा कोई व्यक्ति विशेष नहीं है। न ही वेद ऐसी कोई बात कहते हैं जिससे किसी शुभाचरण का विरोध हो। एक मात्र मानव मात्र के कल्याण और शुभाचरण की नियमावलि, जिससे कोई भी व्यक्ति, किसी भी मजहब का मानने वाला हो, लाभ उठा सकता है। आज संसार का कोई भी देश वैदिक भाषा को अच्छी तरह अध्ययन करके वैदिक ज्ञान से अवगत होता है तो उसे जीवन के सत्य को समझने का अवसर प्राप्त होता है। उपनिषद और दर्शन ऋषि मुनियों के वैदिक सम्वाद को और अधिक स्पष्ट करने और अधिक प्रकाश डालने के लिए है। एक-एक प्रश्न मानव धर्म के अलग-अलग पहलूओं पर प्रकाश डाल कर उन्हें सरल, सुबोध बना लेते हैं। दिव्य मानवों के जीवन चरित्र, जीवन जीने के ढंग और अधिक स्पष्ट कर देते हैं और उन विभूतियों के आचरण हमें अपना आचरण सुधारने का नेतृत्व करते हैं। महाजनों येन गतः स यन्थाः। सम्पूर्ण विश्व के इतिहास में किसी पुरातन व्यक्तित्व का ऐसा गौरवपूर्ण चरित्र नहीं मिलता जैसा राम चरित मानस (बाल्मिकी कृत) तुलसीकृत रामायण में कुछ अस्वाभाविक बातों का समावेश है जैसे हनुमान की पूंछ का इतना बढ़ जाना कि पूंछ से लंका जला दी या अंगद की पूंछ इतनी हो जाना कि रावण के सिंहासन से भी ऊंचा बनाकर उस पर बैठ जाना या दशरथं में 6 हजार हाथियों का बल होना। ऐसी बहुत सी बातें तो तुलसी बाबा की अतिभक्ति से उत्पन्न हुई है उन्हें विश्वास में लिया जाए या अतिश्योक्ति के रूप में उपमेय समझा जाए प्रश्न चिह्न उपस्थित करती है। परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस धरा धाम पर यदि दुष्ट राक्षस प्रवृत्ति के लोग पैदा हो गए तो उनका नाश करने के लिए पुण्यात्माओं का प्रादुर्भाव भी होता रहा है। जिनके आचरण से प्रतीत होता है कि आततायी अत्याचारियों का नाश कर देना अहिंसा में ही आता है। यदि दुष्टों का नाश न किया तो अन्याय, अत्याचार, राक्षसपना कभी सम्पन्न नहीं हो सकता। ऐसी विभूतियां परमादरणीय, परम पूजनीय हैं और आज भी भारत और भारत से बाहर भी उन पुण्य विभूतियों को वह सम्मान प्राप्त है। आज भीं इस धरा पर ऐसी विभूतियां वर्तमान हैं क्योंकि सन्तों की परम्परा भी अक्षुण्ण रही है। इसीलिए सद्शिक्षा के लिए आचार्यों गुरुओं के पास जाना, सत्संग करना, आचरण सुधारना और वैदिक परम्पराओं को

निरन्तर चलाए रखने के लिए आवश्यक कहा जाता है। जो व्यक्ति जिस संगत में रहेगा वैसा ही बनेगा। दुष्टों का संग मिल जाए तो वैसी ही मति हो जाएगी। महापुरुषों के उदाहरण में किसी भी बात को समझने में सुविधा रहती है। केवल सिद्धान्त इतनी जल्दी गले के नीचे नहीं उतरते। इससे सद् चरित्र हमारे सामने होने ही चाहिए विशेष का नव जीवन में कष्ट आते हैं, लोभ के अवसर उपस्थित हो जाते हैं। काम वासनाएं उजागर हो जाती है, क्रोध में मनुष्य पागल हो जाता है तो विचार करने से जब हमारे समक्ष सद्पुरुषों के उदाहरण होते हैं, अथवा कोई महापुरुष हमारे सम्पर्क में हमें वर्जना करने के लिए होता है तो हम उस पाप को करने से रुक जाते हैं, अच्छाई बुराई का विवेक हमें बचा लेता है। ऐसे में हम अध्यात्म की ओर आकर्षित होते हैं। संग की पवित्रता हमारी जीवन धारा को बदल देती है।

कुशिक्षा से आततायीपन बचपन से ही मन मस्तिष्क को दूषित कर दे तो वही उस व्यक्ति की जीवन पद्धति बन जाती है। सद् शिक्षा मानव में देवत्व पैदा कर देती है। भगवान राम, भगवान कृष्ण, गौतम बुद्ध, महावीर न जाने कितने ऐसे उज्जवल चरित्र हमारे सामने हैं जिनकी शिक्षा हमारे जीवन को उर्ध्व गति की ओर ले जाती है। अच्छी शिक्षा से हमारे विचारों में ऐसी प्रांजल पवित्रता को भर देती है कि हम भूलकर भी कोई दुष्कर्म करने से बच जाते हैं। हम योग के सूत्र पढ़ते रहें, योग न करें तो रटे हुए योग सूत्र हमें क्या लाभ दे सकते हैं। उनके अनुसार योग का अभ्यास करें, प्राणायाम करें, ध्यान करें, जीवन में उन सद्गुणों को धारण करें तभी तो उनसे होने वाले लाभ से अवगत हो सकते हैं। रुचि प्राप्त कर सकते हैं। वैदिक शिक्षा को जीवन में उतारने से ही सत्य के दर्शन होते हैं अन्यथा वेद भी कहते हैं कि वेद भी उस व्यक्ति का क्या कल्याण करेंगे जो उन्हें जीवन में नहीं उतारेगा। जीवन में उतारेंगे तो बारीकियां भी समझ में आएंगी फिर रुचि प्रतिपल बढ़ेगी। यह जीवन का बहुत बड़ा सत्य है जिसे किसी शिशु को जन्म देने से पहले ही संस्कारित करके माता उसे एक उत्तम व्यक्तित्व दे सकती है। माँ के गर्भ से मिले संस्कार बड़े प्रबल होते हैं इसीलिए वैदिक संस्कृति सोलह संस्कारों की बात करती है। यही कारण है कि जिस बच्चे को ऐसे संस्कार प्राप्त होते हैं वह सद् विचारों का पुंज बन जाता है। हम भाग्यवान् हैं जो ऐसी महान संस्कृति हमें विरासत में मिली और सत्त असत के विवेचन का मार्ग प्रशस्त हो गया। ईश्वर हमारा मार्गदर्शन करें। वैदिक शिक्षा से विश्व का कल्याण हो। उस शिक्षा पर आचरण करके एक ऐसा संसार बन जाए जिसे सब शुभ ही शुभ हो तो स्वर्ग धरती पर क्यों नहीं उतर आएगा। अलबत्ता यह धरा स्वर्ग से भी उत्तम स्थली बन जाएगी।



एक विहंगम दृष्टि

दिन प्रतिदिन जर्जित होते तन को देखकर लगता है कि आगे समय बहुत कम है और जीवन में कुछ सार्थक कर नहीं पाए। पीछे दृष्टि ले जाने से लगता है कि समय ने बदलते-बदलते हमें कहीं से कहीं पहुंचा दिया है। बचपन बहुत भोला था दुनिया बहुत छोटी थी, साधन बड़े कम थे, जीवन बहुत ही सादा था। शिक्षा के प्रचार भी नये-नये थे। कुछ ही चन्द लोग होते थे जो शिक्षा के मन्दिर में पहुंचते थे। पहले बहुत कुछ होता होगा, पर पराधीनता के लम्बे वर्षों ने हालत काफी नाजुक कर रखी थी। भारत की समृद्धि को लूटने बाहर के आक्रमणकारी यहां आते ही रहते थे। पहले तो जो लोग आते थे वह भारतीय परिवेश में घुल मिल जाते थे और यहीं के जीवन को आत्मसात कर लेते थे। परन्तु रेगिस्तानी देशों से जब आक्रमणकारी आने लगे तो वह जुल्म की तस्वीर बनकर आए। मारकाट जुल्मों सितम लूट पाट करके अपने देशों को लौट जाते। फिर आते फिर वैसी ही तबाही मचाते। उन्हें यहां की संस्कृति से कोई लेना देना नहीं था। डरा धमका कर, मारपीट कर वह इस देश की सम्पत्ति ही नहीं लूटते, जबरदस्ती धर्म परिवर्तन करवाते। लड़कियां उठाकर ले जाते। भारत छोटे-छोटे राज्यों में बंटता चला गया। यहां के लोग आपसी वैर विरोध में विदेशियों से मिल जाते तो तबाही और भी जोर-शोर से होती। फिर एक ऐसा समय आया भारत में मुस्लिम बादशाहत ने जोर पकड़ा कभी सूरी, कभी नादरशाही कभी मुगल। हजार वर्षों की अवधि में भारत ने यहां के मूल निवासियों की अपनी ही मूर्खताओं के कारण गुलामी की जंजीरों में देश को जकड़ दिया। कहां तो बाहर से आने-वाले भारतीय संस्कृति में आत्मसात होते थे। और कहां धर्म परिवर्तन का कलियुग आ गया। अधिकतर जुल्मों सितम से यह प्रक्रिया चलती रही। जिससे शिक्षा के मन्दिर बन्द हो गए। बड़े-बड़े पुस्तकालय आग की भेंट चढ़ गए। अपनी बेटियों की अस्मत बचाने के लिए लोगों ने बचपन में ही बेटियों की शादियां करना शुरू कर दीं। विधवाओं को सिर मूड कर कुरूप बना दिया जाता कि कोई उनसे छेड़खानी न करें। फिर यूरोप के लोगों के आक्रमण शुरू हुए। देश की नबज को पहचान वह लोग हिन्दू मुसलमान को और भी जोर से लड़वाने के प्रयत्न में जुट गए। अशिक्षा के

कारण भारतीय वांगमय तो नेपथ्य में चला गया। अंग्रेजों ने लोगों को यह समझाना शुरू किया कि आपके धर्म ग्रन्थ गडरियों के गीत हैं। अनपढ़ जनता और भी अन्धेरे में धंसती चली गई। अंग्रेजों ने हिन्दू मुसलमानों की नब्ज पहचानी और हिन्दुस्तान में राज्य जमाने के लिए divide and rule का सहारा लिया। नफरत का बाजार गर्म हुआ पराधीनता के लम्बे वर्षों ने हालत बहुत नाजुक कर दी। गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हर हिन्दुस्तानी दुखी था। हिन्दू मुसलमान जो आपस में मिलकर रहते थे, व्यवहार करते थे यहां तक कि 1857 के युद्ध में यह दोनों कौमें एकत्र होकर लड़ीं, दिल्ली के बादशाह बहादुर शाह जफर झांसी की रानी, नाना फड़नवीस, यू.पी की बेगम हजरत। हिन्दू मुसलमान सब लोगों ने मिलकर भारत की आजादी की पहली लड़ाई लड़ी आजाद होने की तड़फ तड़फ ही रह गई। अब जुल्मो सितम की बागडोर अंग्रेजों ने सम्भाल ली तो हिन्दू मुसलमानों के मेल मिलाप को ही अंग्रेजों ने सबसे पहले तोड़ने का बीड़ा उठाया। हिन्दुंओं की मुसलमानों के विरुद्ध और मुसलमानों में हिन्दुओं के विरुद्ध जहर घोलने का काम इस कौम ने जी भर कर किया। लोगों का ध्यान अंग्रेजों से हटकर आपस में लड़ने की तरफ बंट गया। अपने शहरों में भी हम लोग त्रस्त रहते कि अभी मुसलमान हमला करने वाले हैं तैयारी कर लो। ऐसा क्यों था ? हमें मालूम नहीं था। हम सोचते थे शायद हमेशा से ऐसा ही होता चला आ रहा है। यह तो बड़े होते-होते समझ में आने लगा कि इन दोनों जातियों को लड़वाने वाली एक तीसरी कौम है। आजादी की तड़प में हमारी कई जवानियां फांसी पर झूल गई, काले पानी की सजा भुगतती रही। आजादी मिली जो रक्त रंजित थी, आजादी की खुशी में गम और पीड़ा के आंसू मिश्रित थे, हमें याद है हम अपने शहर के मुसलमानों को जब बार्डर पार करवाने जाते थे तो रो रोकर गले मिल-मिल एक दूसरे से विदा होते थे। उस समय इस देश के टुकड़े होने में कितना रक्त बहा, कितने वीभत्स दृश्य देखने को मिले यह आज का नौजवान नहीं जानता। पर हम लोग शरणार्थी होकर आए अच्छे-अच्छे लोगों को उजड़ पुजड़ कर खून के आँसू रोते देखते थे। दिन रात रिफ्यूजी कैम्पों में काम करते थे। पढ़ाई लिखाई बन्द हो गई थी। पीड़ा का कोई अन्त नहीं था। कई बार घर आकर मां के पास बैठ कर रोते थे लोगों के कष्ट देखकर। मां समझाती थी- सेवा करती हो फिर दुःखी क्यों हो। पुचकार कर सहलाती थी बड़ा दर्द भरा समय था। आज बच्चों को शहीदों की याद दिलानी पड़ती हैं। वह उनके बारे में कुछ नहीं जानते कि देश की आजादी की खातिर वह किस तरह काल कोठरियों में सड़ते गलते रहे, पर भारत माँ को गुलामी से छुड़ाने में लगे रहे। अपने बचपन को जवानी में आते-आते कितना इतिहास

आंखों के सामने पलटता रहा, आज तक नहीं भूला पाए। बच्चे हमारी इन कहानियों को सुनने की इच्छा भी नहीं रखते वह आज की रोशनी की जिस दुनिया में जी रहे हैं उस चकाचौंध में इस इतिहास को कोई स्थान नहीं। इसी से सहसा मन में आया कि जीवन तो शाश्वत नहीं है। जाने कब आंखें बन्द हो जाएं और यह इतिहास भी हमारे साथ ही मौन हो जाए। चुहले में लकड़ी (गीली) जलाकर खाना बनाने से लेकर आज के इस इलैक्ट्रोनिक युग तक के सफर में कई परिवर्तन आए, इसका अनुमान आज के बच्चे को कैसे हो। सब साधन नहीं थे। दुनिया छोटी सी थी। अब दुनिया की लम्बाई चौड़ाई इसलिए सिमट गई है क्योंकि हवाई सफर में हम कहीं के कहीं जा पहुंचते हैं और मोबाईल फोन से कहीं भी कभी बात कर लेते हैं। दुनिया के एक कोने में कुछ होता है समाचार से सेकिण्डों में फैल जाता है।

परन्तु गुम क्या हो गया इसका भी जरा अनुमान लगाए। आज चिड़ियों की चहचहाहट कम हो गई, रंग बिरंगी छोटी-छोटी चिड़िया नज़र नहीं आतीं। अब वायुमण्डल उनके अनुकूल नहीं उन्होंने बसेरे बदल लिए। पर मानव दूषित वायु मण्डल में रहता है। हजारों रोगों को अपने साथ लगा चुका है। फिर भी इन नयी विधायों को छोड़ नहीं सकता। इन्हीं में मौज मनाता है। जीवन जितना जादू भरा लगने लगा है उतना ही भयंकर भी होता जा रहा है। यह वैज्ञानिक उन्नति हमें किस कगार पर खींच कर ले जा रही है हम उसके आकर्षण में इतने अविभूत हैं कि आने वाले नये संकटों से नज़र मिलाना नहीं चाहते।

दूसरी तरफ यही विज्ञान मानव को उसका अतीत दर्शाने में भी सहायक हो रहा है। आज इलैक्ट्रानिक मीडिया के कारण पतंजलि का योग घर-घर पहुंच गया है। इतिहास के पन्ने खुल रहे हैं, जिनके प्रभाव से मानव मन अछूता नहीं है। एक नयी क्रान्ति ने जन्म लिया है। क्या मन की चेतना जगेगी फिर से क्योंकि आतंकवाद अब और नये-नये रूप में हमारी दहलीज पर खड़ा है। मानव को लूटने, पीटने, झगड़ने और सिकन्दर बनने की धुन में रोज नये रूप में आतंकवाद आता ही रहता है। पाकिस्तान ने आंतकवाद को बढ़ावा देने को अपनी सरजमीं को युद्ध का क्षेत्र बना लिया हुआ है। आजादी के बाद भी जब अपने क्षेत्र से हिन्दुओं को खदेड़ दिया तो भी और-और की भूख ने उसको अशांत कर रखा है। भारत का पाकिस्तान से युद्ध निरन्तर जारी है कभी आमने सामने से कभी शीत युद्ध। क्योंकि पाकिस्तान के शासक काश्मीर जम्मू को निगलना चाहते हैं। जितना निगल चुके हैं उसका बंटवारा चीन के साथ कर लिया। चीन की विस्तारवाद के लालच में हिमालय पार की धरती

को काग दृष्टि से देख रहा है। ऊपर से दोस्ती की बात करता है पर हजारों किलोमीटर का हिमालय क्षेत्र वह निगल चुका है। तिब्बत को तो उसने निगला ही है वहां से तिब्बती शरणार्थी भी बरसों से भारत में ही आश्रय लिए बैठे हैं, और अब चीन पाकिस्तान से सांठ गांठ करके भारत के पूरे उत्तरी सीमा क्षेत्र में दृष्टि गड़ाए बैठा है। भारत बड़े कुटिल शत्रुओं से घिरा है। पर भारत के भीतर क्या हो रहा है? हालांकि भारत संसार का सबसे बड़ा जनतन्त्र है पर अब इस जनतन्त्र ने भी एक भयानक मोड़ ले लिया है। वोट की राजनीति ने धीरे-धीरे यह रंग दिखाया कि शीर्ष पर वह लोग आ गए जो देशहित को भूल गए और पैसा पैसा पैसा उनका मन्त्र हो गया। गरीब-गरीब हो रहा है, महंगाई आसमान छू रही है। अमीर-अमीर हो रहा है। देश एक नये आन्दोलन में व्यस्त है कैसे इस देश के नये शत्रुओं से देश को बचाएं? एक नयी क्रान्ति का सूत्रपात। क्रान्ति का स्वरूप नहीं है जो महात्मा गान्धी जी ने दिया था। आजादी दिलाई थी पर शासक जो बने वह काले अंग्रेज बन गए। आज ठीक और गलत में भेद करना भी समस्या हो चुकी है। पर भारत का वह पुरातन गौरव, वह पुरातन इतिहास पुराने आदर्श भूले नहीं हैं क्योंकि भारत की संस्कृति को जीवित रखने वालों का भी अभाव नहीं है। एक बार फिर सबकी दृष्टि उस ओर लग गई है कि कैसे देश की धरती को दूसरी स्वतन्त्रता के लिए तैयार किया जाए। जन मानस इतना असन्तुष्ट और आक्रोश में है कि इन सारी कठिनाइयों में भी एक नया रास्ता खोज रही है। कल का भारत क्या होगा ? अब हम सबको उसी की तैयारी करनी है। हम रहें न रहें। मां रहे, भारत रहे, भारत की संस्कृति रहे, क्योंकि यही है संसार की श्रेष्ठतम संस्कृति। इसी में छिपा है संसार भर के कल्याण का मार्ग और यही वह मन्त्र है जो मानव को भगवान बना देने की क्षमता रखता है। हम अभी भी निराश होना नहीं चाहते। हम आत्म विश्वास से अपने देश में एक नया स्वर्ण युग का भविष्य अंकित करने का संकल्प संजोऐ, देश को एक सूत्र में बान्ध नयी जागृति, नयी क्रान्ति नये प्रकाश के उदय का स्वागत करेंगे। यह विश्वास हमें नया उत्साह, नया बल, नया जोश देगा। भारत विश्व का सिरमौर बनेगा और हमारी आदि संस्कृति ही देश को इस नव निर्माण के लिए मार्ग प्रशस्त करेगी। हम उत्सुकता से नये भारत का स्वागत करेंगे।



साधु समाज

साधु समाज भी एक-सा नहीं होता। यह आध्यत्मिक कमाई भी सबकी एक सी नहीं होती। वक्तृत्ता शक्ति भी सबकी अपनी-अपनी है। कार्य शैली भिन्न-भिन्न है, विचारों की तरंगें सबकी अलग-अलग हैं, अनुभव भी अपने-अपने हैं। इसीलिए अपनी बात रखने का ढंग भी सबका निराला है। एक ही भगवान की उपासना सब करते हैं पर पहचान सबकी भिन्न-भिन्न, अनुभव भी भिन्न-भिन्न। और फिर गूंगे का गुड़ खा लिया कैसे बताए स्वाद ? पाखण्डी और नकली साधुओं की बात हम नहीं करते क्योंकि उनसे लाभ की जगह हानि ही समाज को मिलेगी।

आज मीडिया के कारण भारत से बाहर जो संन्यासी प्रचार के लिए निकल जाते हैं उनकी शैली भी अपनी-अपनी हैं। एक से एक सुयोग्य, अनुभवी और वैरागी सन्त हमारे देश में हुए हैं और अभी भी हैं। समर्थ स्वामी रामदास हुए तो उन्होंने एक शिवा देश को दिया। वो शिवा जिसने औरंगजेब जैसे क्रूर बादशाह से टक्कर ली। कहते हैं जब साधु समाज, समाज और देश के कल्याणार्थ खड़े हो जाएं तो क्रान्ति अवश्य आती है। विवेकानन्द हुए जिनकी पुस्तकें पढ़कर आज भी कईयों का अन्तर मन जागृत हो जाता है। स्वामी दयानन्द हुए इतने निर्भय कि हर बुराई की जड़ उखाड़ कर धर्म का प्रांजल स्वरूप उपस्थित कर दिया। सत्यार्थ-प्रकाश पढ़ कर मन के अनेकानेक संशय दूर भाग जाते हैं। गान्धी बाबा आए तो गुलामी की जंजीर टूट कर गिर गई। नैपोलियन बोना पार्ट जैसे जब चलते हैं तो तबाही मचाते चलते हैं। भारत को भी ऐसे गौरी, गजनी, सिकन्दर कईयों ने लूटा, तबाही मचाई। पर जब भारत का सन्त चलता है तो तबाह होती जनता को जीवन देता हुआ चलता है। आजादी के लिए कफन पहन कर निकलने वाले शहीद किन्हीं संन्यासियों से कम नहीं होते

वह देश के सन्यासी होते हैं ऐसे सन्यासियों में बहुत से सन्यासी आर्य समाज की धरोहर रहे हैं जो वैदिक संस्कृति का प्रचार प्रसार तो करते ही हैं जब देश के लिए मरने की बारी आती है तो सबसे आगे पंक्ति में स्थापित हो जाते हैं। समाज में घूमती बुराईयों की जड़ें उखाड़ने वाले सन्तों में स्वामी राम स्वरूप जी का नाम भी स्वर्णाक्षरों में लिखा मिलता है जो लोक कल्याण हित चारों वेदों के यज्ञ का आयोजन करते रहते हैं। वैदिक मन्त्रों की विशद् व्याख्या से जन मानस को प्रक्षालित करके पावन बना देते हैं। अन्ना हजारे संन्यासी नहीं है पर उनकी देश के लिए जो तपस्या देखने में आ रही है वह किसी संन्यासी या शहीद से कम नहीं है। जिसका उद्घोष सारे भारत को जागृत करके खड़ा कर देता है वह देश का संन्यासी पूज्यनीय है। और रामदेव जी जैसे योद्धा सन्यासी कम ही दृष्टि गोचर होते हैं। वह भारत के लिए जीते हैं। जन मानस में पूरी तरह बस जाते हैं ऐसा निर्भय, निशंक, स्पष्टवादी, योद्धा कम ही देखने को मिलता है। और जब साधु समाज खड़ा हो जाता है तो फिर कहूंगी क्रान्ति को आने से कोई रोक नहीं सकता। आयेगी ही आयेगी। राजा जब पथ भ्रष्ट होता है तो साधु ही उसको पथ पर लाने का उद्घोष बन जाता है। हम ऐसे सारे सच्चे साधुओं को प्रणाम करते हैं।



जमाने के साथ

आज आदमी ज़माने के साथ चलता है। जमाना जो पहनाता है पहनता है, जो खिलाता है, खाता है, जैसे तौर तरीके सिखाता है, सीखता है और कहता है कि क्या करें जमाने के साथ चलना पड़ता है। इसलिए घर-घर में सब जमाने के साथ चल रहे हैं। बच्चे आज कल सुबह 12 बजे तक सोते हैं। रात भर कम्प्यूटर, टी.वी. और मोबाइल पर व्यस्त होते हैं। फास्ट फूड खाते हैं। हर नये फैशन को तुरन्त अपनाते हैं। फैशन में स्त्रियां तो स्त्रियां पुरुष भी तरह-तरह रंग के बाल रंगते हैं, फैशन करते हैं, एक कान में कांटा डालते हैं। जमाने के साथ चलते हैं।

यह जमाना क्या बला है जो सबको अपने पीछे चलाता है। जैसे भेड़ों का रेबड अपने चरवाहे के पीछे-पीछे चल रहा होता है। इस जमाने को कोई नहीं पूछता कि तुम कैसे जादूगर हो जो सब किसी को बीन बजाकर अपने पीछे घसीट रहे हो। तुम नहीं जानते, तुम्हारे पीछे चलने से लोगों का क्या हाल हो रहा है। लोग बीमार हो रहे हैं। दवाईयों पर दवाईयां खा रहे हैं फिर भी ठीक नहीं हो रहे, बेहाल हो रहे हैं और तुम हो कि सबको तंग हाल किए जा रहे हो। जिसके पास पैसा नहीं है, वो उधार लेकर, चोरी करके, बेईमानी करके, पैसा लाकर तुम्हारे पीछे भाग रहा है। सारी दुनिया पागल हो रही है। यदि तुम हट जाओ तो सबको कुछ होश आए। लोग तुम्हारे को छोड़ अपने लिए कुछ करें। पर नहीं तुम नहीं मानोगे तुमने मानना सीखा ही नहीं, मनवाना सीखा है। क्या कोई माई का लाल ऐसा नहीं जो तुम्हें अपने पीछे भगा सके। क्या सब इतने नपुंसक हो गए हैं कि तुम्हारी तेज रफ्तार को रोक ही नहीं सकते। तुम इतना भी नहीं जानते कि तुम्हारी जबरदस्ती कितना कहर ढाह रही है जो तेरे साथ भाग नहीं सकता वह खुदखुशी कर लेता है या इतना शर्मिन्दा महसूस करता है कि घर की कोठरी में घुसा बैठा रहता है। किसी को अपना मुँह ही नहीं दिखाता। कुछ है कि अपना सारा पैसा बर्बाद करके भी तुमसे पिछड़ जाते हैं। मन मसोस कर रह जाता है। जो आगे निकल जाते हैं वह च च करके तरस खाते हैं।

मैं सोचती हूँ तुम्हें अपने साथ चलने को कहूँ पर कहां है इतनी ताकत मुझ में। जमाने के खिलाफ चलने वालों को दुनिया लंगड़ी लगाकर मिटा देती है। छोटी सी बात है आज कल रिश्वत को कमीशन कहा जाता है। किसी का ज़रा सा काम

करना हो तो मुंह मीठा करवाना पड़ता है। मुंह मीठे की लम्बाई चौड़ाई का भी कोई हिसाब नहीं। लोग क्या करें जमाना ही ऐसा है। खर्चे बढ़ गए हैं। महंगाई आसमान छू रही है। फिर थोड़ी बहुत बेईमानी तो करनी ही पड़ती है। झूठ सच बोलना ही पड़ता है। आजकल बेईमान एक सफल व्यापारी है। रिश्वतखोर आला अफसर है। जो नहीं कर सकता वह बुद्धू है, जमाने से पिछड़ ही जाएगा। पिछड़ जाए हमारी बला से। जानते नहीं कितने खर्चे हैं। बच्चों को स्कूल का दाखिला चाहिए डोनेशन दो, नौकरी चाहिए, कमीशन दो परीक्षा पास करनी है मुँह मीठा कराओ। गाड़ी की टिकट लेनी है ब्लैक करो। यदि बेईमानी नहीं करेंगे तो यह सारे खर्चे कहां से पूरे करेंगे। अब सारी दुनिया रामदेव थोड़े बन सकती है। देखो तो यह अदना-सा आदमी दो चादरों में सारी दुनिया घूम आता है और जमाने को कहता है मेरे पीछे चलो। इसके पास कौन सी जादू की छड़ी है भाई जो जमाने को कहता है मेरे पीछे चल। भीड़ इकट्ठी करता है । खरी-खरी सुनाता है। कईयों को ताप चढ़ जाता है देखो तो क्या-क्या कह जाता है। फिर भी लोग इसकी सुन रहे हैं, पेट हिला रहे हैं, नाक दबा रहे हैं और अपनी बिमारियां हट जाने की बात बता रहे है। जरूर जादू ज़ानता होगा। इसे देखकर लगता है यह जमाने को लगड़ी लगा सकता है। इसमें ऐसा कुछ है जिससे जमाने का मिज़ाज़ शायद ठिकाने आ जाए। देखते-देखते जमाना बदलेगा, जमाने के साथ लोग बदलेंगे, लोगों के साथ गांव शहर बदलेंगे, गांव शहरों के साथ देश बदलेगा और फिर पूरा हिन्दुस्तान बदलेगा। जब सब बदलेगा तो सिकन्दर और सिकन्दर का बाप भी बदलेगा तो और देखिए जमाने ने मुझे बोलने नहीं दिया तो मैंने भी इसकी पीठ पर कलम घिसाना शुरू कर दिया। हम भी तो उन्हीं में है ना जमाने की रफ्तार के साथ चल नहीं पाते और देख रहे हैं कि कोई जमाने को अपने पीछे चलाने वाला मिले तो उसके साथ चल कर देखें।



गुरु

ओ३म् अग्नये समिधमाहार्षं बृहते जातवेदसे।
स मे श्रद्धां च मेधां च जातवेदाः प्रयच्छतु।।

अर्थववेद(6-64)

बहुत बड़े परम जात मात्र (जातवेद से) के जानने वाले ज्ञान चक्र अग्नि के लिए मैं समिधा को प्रदीपनीय वस्तु को आहरण करता हूँ, लाता हूँ। यह ज्ञान चक्र अग्नि मुझे श्रद्धा को और मेधर को प्रदान करें।

यह वेद मन्त्र शिष्य को अपने गुरु आचार्य के प्रति श्रद्धा और मेधर के लिए अति उत्तम प्रार्थना है। पूज्य देव दयानन्द जी ने जो गुरु ढम की निन्दा की उसको गलत परिप्रेक्ष्य में हमें नहीं लेना चाहिए। गुरु ढम तब होता है जब निर्बुद्धि, मूर्ख, अनपढ़ लोग इस परम्परा के वाहक बन गए। लोगों को यह गलत धारणा दे दी गई कि गुरु नहीं बनाओगे तो सीधे नरक में जाओगे। डर के मारे लोगों में गधे जैसे मूर्खों को भी गुरु बना लिया। ऐसा गुरु स्वयं भी घोर नरक में गिरता है और शिष्यों को भी ले डूबता है। स्वामी दयानन्द के गुरू देव विरजानन्द प्रज्ञा चक्षु थे। उनकी शोभा सुनकर जब दयानन्द कुटिया पर उपस्थित हुए तो गुरुदेव ने भीतर से आवाज़ दी कौन है ? पुष्य श्लोक शिष्य ने उत्तर दिया– यही जानने तो आया हूँ। परम उत्कृष्ट गुरु को परम श्रेष्ठ पात्र प्राप्त हो गया। सारे ग्रन्थ यमुना की भेंट कर दिए गए और नये सिरे से जिस वैदिक ज्ञान को गुरु ने शिष्य के भीतर उतारा उससे गुरु शिष्य दोनों धन्य हो गए। गुरु ओर शिष्य का यह मिलन ही एक दिव्य मिलन था। यह ज्ञान की जलती शिखा को ज्ञान के भूखे शिष्य को सूखी समिधा प्राप्त हो गई और श्रद्धा तथा मेधा के मिलाप ने ज्ञान की प्रचण्ड शिखा प्रज्जवलित कर दी। गुरु शिष्य का हृदय एक हो गया। शिष्य गुरु के लिए न्यौछावर हो गया ऐसी गुरु भक्ति थी उस महान शिष्य की, जिसका उदाहरण अनुकरणीय है। गुरु ज्ञान का, आत्मदर्शन का भण्डार हो तो शिष्य स्वयं को पूर्णतया उसके आगे समर्पित क्यों न करें। गुरु शिष्य के अन्तर को जगाता ही नहीं, प्रज्जवलित करता है। ईश्वरीय ज्ञान से, साक्षात्कार से सम्पन्न कर देता है तो शिष्य अपनी श्रद्धा से समर्पित हो जाता है। अपना सम्पूर्ण

जीवन समिधा बना डालता है। गुरु से प्राप्त अग्नि को सम्पूर्ण विश्व में जला देता है। कौन कहता है कि गुरु ईश्वर से कम है। ईश्वर की ज्योति को अपने भीतर बाहर परिवेष्ठित करके ऐसा गुरु तो सारे परिवेश को ही ब्रह्ममय बना देता है। शिष्य पुकार उठता है :

गुरु ब्रंह्मा गुरुंर्विष्णु गुरूर्देवोमहेश्वरः
तस्मै श्री गुरुवे नमः

जिस महापुरुष ने स्वयं गुरु के आदेश में अपना जीवन समर्पित कर दिया। वह दूसरों को क्यों कर यह कहेगा कि गुरु की महिमा कम है।

गुरु बेशक परमेश्वर नहीं पर परमेश्वर की व्यापक सत्ता का जीता जागता स्वरूप है। बात केवल इतनी सी है कि उस प्रज्जवलित दीप शिखर का रूप तो हो। हर कोई गुरु के पद पर आसीन नहीं हो सकता और नालायक मूर्ख गुरु को गुरु पद पर प्रतिष्ठित करने से गुरु के गुरुत्व का अपमान है।

दूसरे जो लोग गुरुदेव के तप, त्याग को अपने-अपने स्वार्थों की सिद्धि का ही प्रावधान समझते हैं वह गुरु पद की महिमा को छोटा आंकते हैं। यह ठीक है कि सांसारिक दुख सुख में फंसा प्राणी अपने मौलिक दुखों के क्षण के लिए ही गुरु की शरण में जाते हैं। अलबत्ता गुरु के पास ही हम अपनी चेतना को इसलिए ले जाएं कि जो जातवेद अग्नि गुरु में जल रही है उसी ज्ञान को शिखा को हम उनसे ग्रहण करें और अपनी श्रद्धा और लगन से अपनी आत्मोन्नति का मार्ग प्रशस्त करें। ऐसे ही शिष्य थे विवेकानन्द रामकृष्ण परमहंस के और कबीर रामानुजाचार्य के। सांसारिकता नहीं मांगी इन शिष्यों ने उससे वही दौलत प्राप्त की जो गुरु की अपनी सम्पदा थी। जब भगवान के भजन के लिए बैठे तो छोटी-छोटी मांगें उनके आगे हम जो रखकर छोटे से भिखारी बने रहते हैं उससे क्या लाभ? भगवान से भगवान को मांगे, भगवान को ही पाए तो धन्य हो जाएं। बिना गुरु यह ज्ञान भी कैसे पाएं। साधारण जीवन में भी जो कुछ सीखना होता है उसके लिए भी गुरु चाहिए आजकल तो जगह-जगह टयुटोरियल खुले हैं। जो क्लास में समझ नहीं आता टयुटोरियल में सीखने का प्रयास रहता है। हजारों खर्च किए जाते हैं। फिर कहीं क्लास पास करके, शिक्षा पूरी करके रोजी रोटी का जुगाड़ किया जाता है। यह तो परम विद्या का मन्दिर है अध्यात्म विद्या के गुरु का घर, यहां उसके घर का पता बताया जाता है जिसके घर से हम आए हैं और जिसके घर वापिस जाना है। जो हमारे दैहिक, दैविक, भौतिक सारे सन्ताप मिटाकर हमें परम शान्ति, परम ऐश्वर्य की

ओर ले जाने वाला है। तो ऐसे महान तपस्वी, तत्व वेत्ता ऋषि गुरु वर के लिए हमारा मस्तक न झुक जाए तो कहां झुकेगा और ऐसे गुरु के बिना परम विद्या कहां से पाईयेगा। भारत में ऐसे महातत्व वेताओं ने कभी भारत को निर्धन नहीं होने दिया। इसी से आज तक यह मशाल जल रही है और यह विद्या परा विद्या सुरक्षित है जिसे प्राप्त करके आज भी सोये मानव को जगाया जाता है और उस परम शक्तिमान परमेश्वर के घर का पता बताया जाता है। वास्तविक मन्दिर तो ऐसे आचार्यों, गुरुओं, सन्तों, ऋषियों के आश्रम ही हैं जहां शिष्य उस महान् विद्या को प्राप्त करके संसार को प्रकाशित करने निकलते हैं।



पागल प्रेमी

जब व्यक्ति के भीतर प्रेम का, भाव का, ज्ञान का सागर उमड़ आता है तो वह खामोश नहीं बैठ सकता। सामने कुछ नहीं है तो भी उमड़ते सागर को बाहर आने से वह रोक नहीं सकता। यदि कलम हो तो लिखने से भी नहीं रुक पाता। यदि कोई पशु पक्षी पास है तो उनसे भी वह बतियाने लगता है और फिर यदि मनुष्य रूप में कोई शिष्य प्राप्त हो जाए तो कहना ही क्या। एक क्षण भी वह क्यों रुकेगा। वह अपना आप उंड़ेल देगा। ऐसी आत्माएं विरली होती हैं। पर जब होती हैं तो वायुमण्डल हिल उठता है। चैतन्य महाप्रभु सागर की लहरों में अपने प्रियतम को पकड़ते-पकड़ते समा गए। दिव्य प्रेम, दिव्य भाव अलौकिक था, उसी भाव में वह निर्वाण को प्राप्त कर गए। स्वामी रामतीर्थ को गंगा की लहरों की पुकार कैसी लगी, कमरे में टेबल पर लिखा पड़ा था–

लोग कहते हैं कि शहरों में रहना खूब है,
कौन जाए राम अब गंगा की लहरें छोड़कर ।

और फिर गंगा की लहरों में समा गए। उनका ज्ञान का सागर ठाठें मार रहा था ऐसा उनके साहित्य से हम जानते हैं। भगवान के प्रेम में विभोर थे और भीतर सुनामी फूट पड़ा तो उसी में समा गए। ऐसे ही आज भी इसी परम्परा में बड़े-बड़े ज्ञानवान, कर्मयोगी ऋषि भारत में विद्यमान हैं, जो पूरे विश्व में घूम घूमकर भारतीय संस्कृति सभ्यता और अध्यात्मिकता का नाद गूंजा रहे हैं। स्वामी राम स्वरूप योगाचार्य वेदों के मर्मज्ञ यज्ञ पुरुष भू पर अपने पावन जीवन कृत्यों के कल्याण मार्ग पर अग्रसर हैं। और स्वामी रामदेव युवा संन्यासी विश्वप्रेम, विश्व धर्म का परचम लेकर विश्व कल्याण के जिस कार्य में जुटे हैं बिना विश्राम किए अपनी सिंह गर्जना से सत्य की स्थापना के लिए बड़े-बड़े सिंहासन भी हिला देने में निर्भय लगे हैं। उबल रहा है जो भीतर वह बाहर आए बिना कैसे रहेगा। सारे विश्व को अपना चुका है जो उसे एक भी आँख का आंसू कैसे सहन होगा। लोग उनके शत्रु बनते रहे वह किसी के शत्रु नहीं हैं। उनके साथ आज भारत का सम्पूर्ण साधु समाज है जो देश में सत्य युग की स्थापना में रत है। ईश प्रेम का उबलता सागर न हो तो साधु

सन्त भी क्या उपदेश करेंगे जब अपने मन के द्वार बन्द हों तो बाहर भी क्या आएगा। नव जागृति के साथ जब-जब कोई सन्त विश्व मंच पर उपस्थित होता है तो उसका विरोध भी होता है। कई सन्तों को लोगों के आक्रोश का सामना भी करना पड़ा। आज भी करना पड़ता है। गोलियां खानी पड़ती हैं, जहर निगलना पड़ता है। किसी सत्य को स्वीकारने में धैर्य की अपेक्षा होती है, जब धैर्य का अभाव होता है तो महापुरुषों से दुर्व्यवहार भी होता है क्योंकि आचार संहिता की पुनर्स्थापना बहुत लोगों को पसन्द नहीं आती, जो उनके स्वार्थों को ठेस पहुंचाती है। ईश्वर की यह सृष्टि इतनी रहस्यमयी है कि इसके अनुसन्धानों की आवश्यकता सदा बनी रहती है। वैज्ञानिक अनुसन्धान जल्दी स्वीकृत हो जाते हैं परन्तु आन्तरिक अनुसन्धान स्वीकृत करना आसान नहीं क्योंकि उसके लिए हर मानव को स्वयं कर्मशाला बनना पड़ता है। भीतर की प्रयोगशाला का हर व्यक्ति केवल स्वयं ही अनुभव प्राप्त करता है। शेष तर्क का प्रयोग धर्म संहिता के लिए व्यवहार के लिए हो सकता है, ईश्वरीय प्रेम के लिए नहीं। वह तो मनुष्य की निजी सम्पत्ति ही बना रहता है। कबीर जी कहते हैं- जा घट प्रेम न उपजे ता घट जान मसान। और मीरा का भगवत प्रेम का नशा इतना गहरा है कि वह जहर का प्याला पीकर, सर्प को फूलों की माला में बदल देता है पर चढ़ा हुआ रंग नहीं उतरता। ऐसे प्रेमी को तर्क क्या करेगा। जब तक मनुष्य की सांसारिक चेतना बनी हुई है वह उस पारब्रह्म की चेतना से अनभिज्ञ रहता है। जब प्रभु प्रेम का रंग चढ़ता है सांसारिकता ओझल हो जाती है। बस फिर एक ही नशा दिन रात चढ़ा रहता है। संसार के नशे जहां मनुष्य को विनाश के गर्त में गिरा देते हैं वहां यह ईश्वरीय नशा मनुष्य को शक्ति पुंज बना देता है। सारी सम्पदाएं तुच्छ हो जाती हैं। पर ब्रह्म का प्रेम ही सबसे बड़ी सम्पदा बन जाता है। तब उस प्रेम में पड़े चक्र की वाणी भी ईश्वरीय वाणी हो उठती है। वह निर्भय विचरता है क्योंकि जिस रंग में वह रंगा है उससे उत्तम कोई रंग इस सृष्टि में नहीं है।



जीवन कैसे चलाएं

यह सत्य है कि मानव जीवन का उद्देश्य ईश्वर प्राप्ति है। यह मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। जितना आवश्यक पारलौकिक जीवन के विषय में विचार करना है उतना ही आवश्यक है हम आज जो जीवन जी रहे हैं उसके विषय में भी विचार करें। इस जीवन में हमारा व्यवहार बड़ा महत्तपूर्ण है। बात करने का सलीका मनुष्य के व्यक्तित्व का दर्पण है। हम अपनी दैनिक जीवनचर्या कैसे निभाएं, कैसे बड़ों से व्यवहार करें, कैसे छोटों को देखें, कैसे अभ्यागत से पेश आएं। समाज सभा में कैसे बैठें, कैसे खाना पीना है, क्या खाना पीना है। कैसे रहना है, किसी के कष्ट में कैसे सहायता करनी है, किसी का कष्ट कैसे सुनना है। खाना कैसे बनाना है, घर कैसे सजाना है। शिल्प और कला का क्या महत्व है, जीवन में कष्ट आएं तो क्या करें, देश के प्रति कैसे सोचें, राजनीति क्या है? राष्ट्र क्या है, धोखे बाजों से कैसे बचें, हमारा व्यवहार सत्य और सदाचारपूर्ण कैसे बने, हमारा जीवन उपयोगी कैसे हो। धन का सदुपयोग किस तरह हो ? और भी बहुत कुछ है जिसका हमें जीवन में ध्यान रखना है। जीवन में कभी-कभी मनुष्य भयंकर गलतियां कर लेता है कि हालत यह हो जाती है कि 'लहमों में गलती की युगों ने सजा पाई'। जिसे हम छोटी-सी गलती कहते हैं वही कई बार ज़िन्दगी का बबाल बन जाती है। चौराहे से कैसे गुजरें, सड़क पार कैसे करें ? जरा कदम गलत हुआ कि दुर्घटना घटी या गलत रास्ते पर चल पड़े, जिससे मंजिल और दूर होती गई, जीवन निरर्थक हो गया, सुधार नहीं हो सकता।

बहुत चिन्तन की आवश्यकता है। जीवन को समुद्र रूप में देखना और कर्त्तव्यों का निर्धारण करना, इसी परिप्रेक्ष्य में आता है। शायद यह सब करने के लिए हमें बहुत मार खानी पड़ती है वक्त की, परिस्थितियों की, वातावरण की। यदि हमारे पास एक सुलझा हुआ मस्तिष्क हो, एक धीर गम्भीर हृदय हो तो हम चारों तरफ से अपने आप को समेटकर ठीक मार्ग पर स्वयं को चला सकते हैं। ऐसे महान् व्यक्तियों के उदाहरण हमारे सामने हैं जिन्होंने जीवन के दोनों पहलुओं में सामंजस्य करके जीवन का दर्शन हमारे सामने उपस्थित किया। स्वयं चले औरों के लिए मार्ग निर्धारित कर गए। भारत तो ऐसे महापुरुषों की प्राप्ति में सर्वप्रथम है। आदिकाल से ही भगवान् राम के चरित्र का दर्शन, कितने ऋषियों मुनियों का जीवन, भगवान् कृष्ण का लीलामय अलौकिक जीवन तो युग-युगों से जन मानस का पथ प्रदर्शन करते आ

रहे हैं। हमारा यह देश एक महान संस्कृति का वाहक है। जो सारे संसार को मार्ग दिखाने में सक्षम है। जो हम आज अपनी सोच को नवीन और उत्कृष्ट सोचने का विचार करते हैं वह हम अपने वैदिक साहित्य में पहले से ही मौजूद पाते हैं। लाखों बरस पहले की वेद विद्या ने जीवन का कोई पक्ष अछूता नहीं छोड़ा उपनिषदों के उपदस्ठायों ने बड़े सूक्ष्म ढंग से कठिन से कठिन विषय का समाधान स्थापित किया। भाषा के कैसे-कैसे विद्या विशारद हमारे देश में हुए। आयुर्वेद, योग शास्त्र के कैसे-कैसे महान् व्यक्ति यहां अवतरे। व्याकरण की 4000 सूत्रों वाला पाणिनी की अष्टाध्यायी इसी देश की सम्पदा है। मनु स्मृति जैसे राजनीति के ग्रन्थ यहीं रचे गए। आज हम सब भूल भाल कर उधार की संस्कृति के गुलाम होकर रह गए। जिससे हम अपनी असलियत, अपनी अस्मिता भूल गए। देश द्रोहियों की लम्बी शृंखला है अब जो अपनों को, अपने धरती को धोखा देकर विदेशियों को यह सुविधा देते रहे कि वह यहां आकर हमारी सम्पदा लूट कर ले जाएं हमारी सांस्कृतिक धरोहर को तहस-नहस कर जाएं और हमारा जन-जीवन अस्त व्यस्त कर दें। कहते हैं बुरे तो बुरे ही होते हैं, शत्रु तो शत्रु होते हैं, पर जब अच्छे लोग, अपने लोग आंखें बन्द करके बैठ जाएं तो देश बर्बाद होता है घर बर्बाद होते हैं। सभ्यता नष्ट होती है, सदाचार मिट जाता है। तमाशाई बनकर जीने वाले देश के मित्र नहीं, समाज के हितकारी नहीं, परिवारों के उद्धारक नहीं, अच्छों की उदासीनता बहुत भयंकर परिणाम लाती है। कठिनाईयां पैदा कर देती है। ऐसे में जो सिंह गर्जन करके सब बुराईयों के खिलाफ खड़ा हो जाता है, उसे मूर्ख कह-कह कर भर्त्सना करते हैं। राम प्रसाद विस्मिल ने फांसी पर झूल जाने से पहले यह कहा थां कि- यह लोग नहीं जानते है कि उनके हित के लिए हम अपने प्राण दे रहे हैं। बजाय हम लोगों की मदद करने के देश पर कुर्बान होने वालों के भेद शत्रु को बता देते हैं। आजादी के शत्रु तो यह अपने ही है। अंग्रेजियत के गुलाम, शीर्ष पर बैठ कर देश को लूटने वाले, इन्हीं लोगों के कारण अराजकता है क्योंकि अंग्रेजों से इन्होंने सीखा लोगों को आपस में लड़ाते रहना और राज करना। घरों में एक दूसरे को भड़काते रहना और परिवारों को इकट्ठा न होने देना। सद् व्यवहार जब घर में भूल जाता है तो व्यक्ति का स्वार्थ भरा दुर्व्यवहार राष्ट्र व्यापी होकर जिस विप्लव को लाता है वह किसी के लिए भी हितकर नहीं होता। पारस्परिक प्रेम की भावना सद्गुणों को बढ़ावा देती है। यही भावना राष्ट्रों को उन्नत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। राष्ट्र ईश्वर का साकार रूप है। हमारी ईश्वर भक्ति अधूरी है यदि हमने पारिवारिक सम्बन्धों की मिठास और राष्ट्रहित की भावना को अपने भें भुला दिया तो अपने परिवार की और देश की उन्नति के लिए हमारा व्यवहार, आचार, विचार ही प्रथम भूमिका है।



पारिवारिक एकता

हमें अपने आस-पास अधिकतर ऐसे लोग मिलते हैं जो समस्याएं पैदा करते हैं। समाधान बन सकें ऐसे लोगों की कमी के कारण ही झगड़े फसाद लड़ाईयां होती हैं। क्योंकि ज्यादातर लोग निजी स्वार्थों से बन्धे होते हैं। ज़रा जिसके स्वार्थ को थोड़ी सी चोट लगी आग बबूला हो गया। जब एक भड़का तो दूसरा उससे भी ज्यादा भड़का बस हो गया महाभारत। यह कहानी घर-घर की है। समाधान वही बन सकता है जो निजी स्वार्थों से परे हो। हम सरदार पटेल को भारत के लौह पुरुष के रूप में जानते हैं। सरदार पटेल ने सारी रियासतों को भारत से जोड़ा एक काश्मीर को छोड़कर। क्योंकि काश्मीर का मसला पण्डित जवाहर लाल नेहरू जी की देखरेख में चला। कश्मीर पण्डित जी का अपना घर था। पर पण्डित जी के हाथों काश्मीर की समस्या इतनी उलझी कि आज तक सुलझ नहीं पाई। होते-होते एक विकराल समस्या बन गई। रियासतों के रजवाडे आसानी से तो भारत में विलय होने से रहे, पर सरदार पटेल जो सूझबूझ और सटीक सोच के कारण ही कठिन और उलझनों भरी समस्या सहज हो गई। सभी लोग सरदार पटेल जैसे तो नहीं हो सकते। इसी से झगड़ों का अन्त नहीं होता। राजनीति की तो बात ही क्या, घरों में छोटे-छोटे परिवारों में इतनी भीषण समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं कि कत्ल तक हो जाते हैं। बाहर के शत्रु को तो आने में कुछ समय लगेगा, घरों में आपसी वैमनस्य, स्वार्थपरता और लोभ के कारण सगे सम्बन्ध भी कड़वा जाते हैं। इतने कटु हो जाते हैं कि जीना दूभर हो जाता है। जब स्वार्थपरता न हो तो बड़े-बड़े परिवार एक साथ रह सकते हैं। आज बड़ी-बड़ी कोठियों में अधिकतर दो चार लोग ही होते हैं। वह भी आपस में गुत्थम गुत्था हुए रहते हैं। बहुत से घरों में तो बूढ़े लोग अकेले रहते हैं ज़िन्दगी की आखिरी घड़िया गिनते। इसलिए कि बूढ़ों में भी धैर्य नहीं होता, जवानों में भी सहनशक्ति नहीं होती। बहुएं चाहती हैं सासू जी रास्ते से हट जाएं और उनका एक छत्र राज्य हो। ऐसे घर बहुत मिलेंगे जहां एक घर में रहते हुए भी लोग आपस में कटे-कटे रहते हैं। एक दूसरे से आँख चुराते हैं। अपने काम दूसरों से छुपा-छुपा कर करते हैं। चौंके में क्या बिगड़ रहा है, परवाह नहीं, बिगड़ता है बिगड़े, उजड़ता है उजड़े। काम करते हैं तो एक दूसरे पर अहसान करके, बात करते हैं तो एक दूसरे को टकोरे लगाकर। एक बीमार होता है दूसरे का मुँह फूल जाता है। धन माल में सब सबसे बड़ा भाग पाना चाहते हैं। ऐसे घरों को जोड़कर रखने वाली कड़ी कहां पर है। ध्यान दें तो कोई न कोई ऐसी कड़ी मिल ही जाएगी जो इन गरजते तरज़ते

शेरों को अपनी-अपनी सीमा में बांधकर रख सके। वह कड़ी जो व्यक्ति होता है वही सरदार पटेल होता है। परिवार से ऐसे व्यक्ति के हटते ही रेत के घरौंदे की तरह एकता चरमरा जाती है। ऐसा व्यक्ति निजी स्वार्थों से ऊपर होता है तभी वह दूसरों को एक माला के मनको की तरह समेटे रहता है। ऐसा व्यक्ति स्वयं कितनी चोटें सहता है, कितने गम पीता है वह वही जानता है। इस व्यक्ति में इतनी क्षमता होती है कि सर्कस में शेरों के मास्टर सा वह सब शेरों की घुड़कियां भी सुनता है फिर भी सब शेरों को सन्तुष्ट भी रखता है। नहीं तो शेर एक मामूली आदमी से क्यों डरे। वह तो उसे फाड़ खाए। फिर भी दुनिया तमाशा देख रही होती है शेरों का खेलना और मेमने की तरह स्वामी के इशारों पर नाचते शेरों का व्यवहार। जो व्यक्ति घरों को थाम सकता है वह समाज को भी थाम सकता है, राष्ट्र को भी थाम सकता है। जितनी बड़ी उसकी जिम्मेदारी होती है उतना ही बड़ा उसका हृदय होता है। और उतनी ही क्षमता से वह न्याय भी कर सकता है। बुद्धि बल के साथ सर्व जन हिताय की भावना और निजी स्वार्थों का अभाव उस व्यक्ति की विशेषता होनी चाहिए और होना चाहिए गौरवपूर्ण सामर्थ्य जो भगवद् कृपा से मिलता है। कानून बाहरी तौर पर बान्धने का काम करता है। मानसिकता बदलने के लिए व्यक्ति का आत्मविश्वास काम करता है। कानून सजा दे सकता है। पीड़ा दे सकता है। विचार बदलने के लिए बुद्धिमत्ता चाहिए। कानूनी व्यवस्था निर्णय है जन चेतना का इलाज नहीं। इससे सजाए मौत भी कुछ नहीं करती, प्रबुद्ध चेतना झकझोरती हैं जब। जागरूकता से इन्कलाब आता है। जमाना बदलता है। सत्ता बदलती है। कारतूस बदलते हैं और देश स्वस्थ होने लगते हैं। जनजागरण से क्रान्ति आती है और सहज में व्यवस्था भी परिवर्तित होती है। परिवार बदले, समाज बदले, देश बदले तो सारा राष्ट्र बदल जाएगा। एक स्वस्थ राष्ट्र उन्नति का सोपान है बरसों से हम जापानियों को देखते आ रहे हैं। जापानी व्यक्ति कहीं भी हो उसे यह ध्यान रहता है कि उसके कारण उसके देश की अवमानना न हो। आज जापान ने कितने बड़ी-बड़ी प्राकृतिक आपदाओं का सामना किया पर उसने अपना स्वाभिमान नहीं त्यागा। हर मुसीबत को कैसे निपटाया जाए यह हम उन लोगों को देखकर सीख सकते हैं। मन्त्र एक ही है कि व्यक्ति देश को आगे रखे, व्यक्त्वि को पीछे। जब देश हित जनहित ही हमारा हित हो जाएगा, भारत को कोई तोड़ न सकेगा, कोई हमलावर, हमारी दीवारों से टकराएगा तो चूर-चूर हो जाएगा। हम तामाशाई न बनकर देश की इमारत की ईंट बन जाए। हमारा हर कदम राष्ट्र के हित में बढ़े तो तभी सब समस्याओं का समाधान हो सकता है। अपनी-अपनी डफली बजाते रहें तो कुछ भी परिणाम अच्छा नहीं होगा।



शाबाश

'शाबाश' एक ऐसा शब्द है जो मुर्दों में भी जीवन का संचार कर देता है। मानो दस हजार हाथियों का बल संचार हो गया। दिन भर परिश्रम करके सन्ध्या को दस गालियां सुनने को मिल जाएं तो लगता है किसी ने शरीर में से सारी ताकत निचोड़ कर निकाल ली हो। बच्चा एक पग चलता है मां बोलती है 'शाबाश' और चलो, दिनों में बच्चा भागने लगता है। विद्यार्थी अच्छे नम्बर लेकर परीक्षा पास करता है। घर से शाबाश मिलती है। पढ़ने में दुगुना उत्साह आ जाता है। पत्नी कुछ अच्छा काम करती है पति की शाबाशी का एक जुमला पत्नी की सारी थकावट दूर कर देता है। इतना बड़ा टानिक है यह 'शाबाश' शाबाश प्रोत्साहन है आशीश है, यौवन है, जीवन का रस है। थका मांदा पति दिन भर कठोर मेहनत करके सन्ध्या को घर लौटता है तो पत्नी का मुस्कराता चेहरा, उसकी पुनीत नयनाबलि, स्वागत का स्नेहासिक्त भाव पति को शाबाशी का अहसास दिला देता है। पर पति देव आते ही आव देखें न ताव और परिवार पर बरसने लगे तो शाबाशी का भाव सब तरफ से ओझल हो जाता है परिवारों में एक दूसरे से ईर्ष्या द्वेष का भाव दूसरों के अच्छे कामों की भी प्रशंसा करने नहीं देता। यहां तक कि पति पत्नी में भी यह असहनशीलता जब आ जाती है तो जीवन नरक बन जाता है। शासक प्रवृत्ति के कारण पुरुष सोचता है कि यदि मैंने पत्नी की तारीफ कर दी तो इसका दिमाग आसमान पर चढ़ जाएगा तो अच्छा जो किया उसे तो कह देंगे 'ठीक है, ठीक है।' पर जरा सी चूक होते ही ऐसा बरसेंगे कि दम निकाल देंगे। ऐसे में व्यक्ति इतना किं कर्त्तव्य विमूढ़ हो जाता है कि कई दिनों तक लगता है मस्तिष्क ही खाली हो गया। यदि पत्नी जी कर्कशा है तो बात-बात पर पति से कटाक्ष करके उसका जीना दूभर कर देगी। ऐसे में कई बार परिणाम बड़े घातक होते हैं जिनके कारण जीवन में जीता जागता नरक पैदा हो जाता है। बच्चे विमुख हो जाते हैं परिवार बिखर जाते हैं। यह नहीं कि गलती

पर कुछ कहा ही न जाए। ऐसे में तो गलती का सुधार ही नहीं हो सकता पर कहने के लिए ऐसे ढंग अपनाने पड़ते हैं जिससे सामने वाला बुरा न माने और बात भी सुधर जाए। ज्यादा ताना कशी तो दूसरे को ज़िदी बनाने का काम करती है। मन कट जाते हैं, दिल दूर हो जाते हैं। छोटों की वाणी में माधुर्य हो, हृदय में सद्भाव हो, प्रेम भाव से बड़ों की आंखों में शाबाशी की रेखा खिंच जाए तो परिवार बिना रज्जु के बन्धे रहते हैं। कटे हुए परिवार दीर्घजीवी नहीं होते। जीवन में सुखों दुःखों का आना स्वाभाविक है। ऐसा समय उपस्थित हो जाता है कि मुसीबत और बीमारी में मनुष्य अकेलेपन से बड़ा लाचार हो जाता है। हर कोई सहायता करने वाले दिखाई नहीं देता। परन्तु अपनी स्वच्छन्दता के लिए जब सब कुछ ठीक होता है, लोग एक-दूसरे को सहन नहीं करते। भविष्य की सोच ही नहीं पाते। इसी से जो परिवार इकट्ठे रहते हैं। आपसी प्रेमभाव को बनाए रखते हैं, ईर्ष्या द्वेष को त्याग सकते हैं वह लोग हंसते चेहरे लेकर एक-दूसरे से प्रशंसा भरी मुस्कान लेकर एक-दूसरे से मिलजुलकर रहते हैं तो यह एक बहुत बड़ी शाबाशी का विषय है। इससे एक दूसरे से बहुत कुछ सीखने को भी मिल जाता है। सम्बन्धों का माधुर्य उत्साह भी बनाए रखता है। जीवन में विकास का यह मन्त्र है। एकता में ही बल है।



चेतना

हर सिक्के के दो पहलू होते हैं। हर ठोस पदार्थ की परिछाया होती है। हर दिन के पीछे रात और रात के पीछे दिन होता है। हर समय और स्थान पर देवत्व के साथ-साथ असुरत्व भी पाया जाता है। इसलिए देवासुर संग्राम भी निरन्तर चलता है। बहुत सुखी व्यक्ति खुराफात करने लगता है तो कष्टों का सृजन होने लगता है। मनुष्य भूल जाता है। बार-बार इसलिए स्वर्ग और नरक के झूलों में झूलता हुआ जीवन यापन करता है। हमारे पुराणों में बहुत सी कहानियां इस सत्य को उद्घाटित करती हैं, जिनसे जीवन में हम बहुत कुछ शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। पर शिक्षा ग्रहण कर ही लेंगे ऐसा कम होता है। सुविधा भरा जीवन जीने के लिए अवांछनीय कार्य मनुष्य छोड़ता नहीं और वांछनीय की तरफ आकर्षित नहीं होता क्योंकि उसमें मानव को श्रम करना पड़ता है। स्वस्थ अच्छा रखने के लिए प्राणायाम करना है पर मारे आलस्य के करते नहीं बीमार बने रहते हैं। रोज़ पाठ याद करते हैं क्रोध नहीं करना, किए बिना रहते नहीं, कामुकता जीवन को व्यर्थ कर देती है, पर कामुकता से त्राण नहीं, लोभ पाप का मूल है, लोभ हमारे मन को छोड़ता नहीं, जानते हैं जब जाएंगे दोनों हाथ खाली होंगे, माया जोड़े बिना रहते नहीं स्वयं में सन्तुष्ट नहीं रह सकते, दूसरों का वैभव, उत्कर्ष देखकर जलने से उकताते नहीं। इसी से हम जानबूझ कर अपने लिए घोर नरक का सृजन करते रहते हैं। स्वर्ग की वितृष्णा में जलते रहते हैं। भैंस खूटे से बन्धी रहती है घास खा लेती है दूध दे देती है, शिकायत करती नहीं। वाणी उसके पास नहीं। हमें भगवान ने बहुत सुन्दर वाणी दी है, भाषा दी है, कण्ठ दिया है, गायन की कला दी है, सद् विचार दिए हैं सत्यकर्म दिए हैं, पर कुछ करते बनता नहीं, दान की महिमा वेदों तक ने गाई है पर हाथ से कुछ छूटता नहीं। हमें भगवान ने सब जीव सृष्टि से उत्तम बनाया, ऊंचा दर्जा दिया। कर्म की स्वतन्त्रता दी, सोचने के लिए मस्तिष्क दिया। चिन्तन के लिए चित्त दिया पर हम अपने बन्दर मन के गुलाम होकर रह गए। मानव जीवन व्यर्थ कर लिया। ऐसे-ऐसे संकटों को निमन्त्रण दे दिया कि जिनमें फंस कर उभरने का कोई ढंग भी नज़र न आए। हमने अपना मानव जन्म व्यर्थ कर लिया। गिरे तो ऐसे गिरे कि दानवता को भी हार माननी पड़ी। फिर भी ईश्वर की दया सदा बनी रही। सूर्य ने प्रकाश देने से इन्कार नहीं किया

इन्द्र ने अपनी शीतल छाया नहीं चुराई, जल उतना ही पिपासा बुझाने वाला बना रहा, दिन और रात उसी तरह निरन्तर एक-दूसरे के पीछे-पीछे आते रहे, खेतों से अन्न, वनस्पतियां, फल उत्पन्न होते रहे। पक्षियों का संगीत हर उषा काल को सुरभित करता रहा, वर्षा आकर इस धरा को रसमय बनाती रही। कुछ नहीं बदला, कोई नियंम नहीं तोड़ा उस पालनहार ने।

अपनी ही काली करतूतों से जब-जब कष्ट उठाया, मनुआ जोर-जोर से चिल्लाया, बिलखा, रोया, तड़पा और ऐसे में कोई अलौकिक स्वर आया तुम्हारे अन्तर से, किसी सन्त से, आकाश मण्डल से – उठो प्रिय चेतो, तन्द्रा त्यागो अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा। एक बार उस करतार को याद करके देखो। कृष्ण की रूपमाधुरी ने उकसाया, देखो मेरी तरह जीना सीखो, तुम भी मेरे जैसे बन सकते हो। उठो प्रयत्न करो, जो कुछ उपभोग करने को इस धरा धाम है वह इसलिए नहीं है कि तुम इसके लोभ में फंस जाओ। जीवन सार्थक होकर जीयो। जो दिया है उसे 'तेन त्यक्रेन मूज्जिया' त्याग पूर्वक भोगो। विवेकपूर्वक प्रयोग करो, सबमें मैं हूँ सबसे प्रेम करना सीखो। मेरे घर तक आने के लिए तुम्हें एक तिनका भी साथ लाने की आवश्यकता नहीं है। तुम्हारे साथ केवल तुम्हारे संस्कार, शुभ कर्म या अशुभ कर्म तुम्हारी मानसिकता तुम्हारी चेतना जाएगी। बस उन्हीं का प्रक्षालण कर ले जितना करेगा उतना ही पावन होगा। ज्तिना पावन होगा। उतना ही मेरा प्रिय होगा। क्यों तुमने व्यर्थ में इतने झंझट पाल लिए कि अपने ही बुने जंजाल में फंसे-फंसे नष्ट हो रहे हो। वेदों की शरण में जाओ, आर्ष पुरुषों को पुकारो, सत्य का पल्लू पकड़ो, तुम्हारा उद्धार होने में जरा भी विलम्ब नहीं होगा। सारे संकट छूमन्तर हो जाएंगे। सारी माया तिरोहित हो जाएगी। ऐ आत्मन् तू मेरा आत्मज है, तू भटकता रहा मैं देखता रहा, तू जब पुकारेगा, मैं तेरा पल्लू पकड़ लूंगा। यह चेतना पा लो, तेरा कल्याण हो जाएगा।



सबसे बड़ा प्रश्न चिन्ह

कलिंग विजय के बाद महाराज अशोक को इतना कष्ट हुआ, इतना बड़ा नर संहार देख कर, कि उस महा सम्राट ने महात्मा बुद्ध की शरण ग्रहण करके परिव्राजक जीवन अपना लिया। महाराज युधिष्ठर महाभारत युद्ध के बाद इतनी आत्मग्लानि से भर गए कि मृत्यु शय्या पर पड़े भीष्म पितामह के पास गए। भीष्म पितामह ने युधिष्ठर को स्वस्थ करने के लिए धर्म के तत्व और आत्मा की अमरता का उपदेश दिया तथा राज्य पाठ सम्भालने का मन्तव्य दिया। अर्जुन युद्ध प्रारम्भ होने से पहले ही इस विचार से ही शिथिल हो गए कि इतना बड़ा नर संहार करना होगा वो भी अपने ही भाई बन्धुओं का। गाण्डीव छोड़ कातर हो सखा कृष्ण से प्रार्थना करने लगे कि युद्ध न ही करूं तो अच्छा हो। उस समय अधर्म और अत्याचार के विरुद्ध युद्ध करने के लिए भगवान कृष्ण ने धर्म के गूढ़ तत्वों का उपदेश देकर वैदिक सत्यों से अवगत करवा कर अर्जुन को अपने कर्त्तव्य से विमुख होने से रोका। युद्ध की विभिषिका को सहन कर पाना कितना दुष्कर होता है और युद्ध के परिणाम कितने हानिकारक होते हैं इन्हें समझते हुए भी क्रूर व्यक्ति लोभ से प्रेरित कितना आतंकवादी हो उठता है कि निरपराधियों का खून बहाकर अपनी क्रूर प्रकृति को सन्तुष्ट करने के प्रयास में उसकी सारी मानवता मर जाती है। आत्म ग्लानि नाम की कोई भावना उन्हें नहीं झकझोरती। भारत पर ऐसे कुकर्मी आक्रमणकारियों का इतिहास बहुत लम्बा है। मुहम्मद गौरी बार-बार पृथ्वीराज से हार-हार कर जाता रहा पर जयचन्द के देश द्रोही कृत्य से जब एक बार वह जीत गया तो भूल गया कि सोलह बार जिस योद्धा ने उसे क्षमा कर दिया वह यही है। मौका पाते ही गजनी तक घसीटता ले गया आंखें फोड़ दीं। यह तो चन्द बरदायी की योग्यता थी जो भेष बदल पृथ्वी राज के संग-संग गजनी पहुँच गया और गौरी को उसकी मांद में जाकर मार गिराया। महमूद गजनी ने लूटपाट के लालच में कौन-सी क्रूरता है जो नहीं की, दुख का विषय यह है कि भारतीयों ने अपनी फूट के कारण इन आक्रमणकारियों को प्रोत्साहित किया। नादिरशाही जुल्मों की कहानी कम करुणाजनक नहीं है। पर भारतीयों को कब अक्ल आएगी कि हम आपस में वैर विरोध त्याग कर देश के विषय में सोचें। यूरोप को भारत के धन दौलत लूटने के लालच में भारत की इसकी गुलामी के आका अंग्रेजों को भी यदि भारतीय फूट का सहारा न मिलता तो सोने की चिड़िया कहलाने वाला

भारत मिट्टी में न मिलता। औरंगजेब के सामने दक्षिण में शिवाजी और उत्तर में गुरु गोबिन्द सिंह जी न खड़े होते तो वह न जाने कितने और क्रूर कर्मों को कर चुका होता। इतनी मार खाकर भी हम भारतीय पृथ्वीराज की गलती को आज भी दोहरा रहे हैं। गजनियों और गौरियों को दोस्ती का हाथ फैला रहे हैं। यह जानते हुए भी कि यह लोग न सुधरे हैं न सुधरेंगे। गजनी अशोक नहीं हो सकते अगर हो सकते तो अफगानिस्तान में महात्मा बुद्ध की प्रतिमाओं को चूर-चूर नहीं करते। उनको अहिंसा और मानवीयता से कुछ लेना देना नहीं है। उनकी मानवीयता मर चुकी है। दानवता का नंगा नृत्य ही उनका मनोविनोद है। यह भारत का चरित्र है कि भारत दूसरे देशों पर आक्रामक होकर नहीं जाता न ही दूसरे देशों की धन सम्पत्ति की लूट-खसौट करता है। भारत का विज्ञान संसार के लोगों को प्रेम और सद्भाव से जीतना चाहता है। यह भारत की संस्कृति है। पर भारत की भूमि और धन दौलत पर सब की नज़रें गढ़ी रहती हैं। पहले उत्तर दिशा से भारत देश निरापद था। आज चीन की नजरें भी भारत को तहस नहस करने पर लगी हुई हैं। चारों तरफ से अपनी सीमाओं की सुरक्षा का प्रश्न सुरक्षा का रूप धारण किए हुए है। परन्तु अपने देश के लोगों में हमारी भारत सरकार में बैठे हमारे शासक भी अंग्रेज़ों की divide & rule की नीति को अपना कर लोगों को जानबूझ कर आपस में लड़वाते रहते हैं, जिससे देश को और निर्बल और दुर्दशा ग्रस्त करने के मनसूबों को कार्यान्वित कर रहे हैं। यदि कोई देश के हित में बात करने के लिए खड़ा होता है अपने मनोवृत्ति का खुलेआम प्रदर्शन करके देश के शत्रुओं को और अधिक न्यौता दे रहे हैं। चारों तरफ से घोर विपत्ति के बादल छाए हैं। आज देश के सामने सबसे बड़ा प्रश्न यही है कि अपने देश की संस्कृति को कैसे बचाएं ? शत्रु जो घर के भीतर है कैसे पहचानें। आज पलभर की लापरवाही देश को बड़े घातक परिणाम दे सकती है। क्योंकि देश के भीतर ही कितने शत्रु घुसे हैं। क्या कब कर देंगे इसी का अनुमान भी तो हम लोग लगा नहीं पा रहे हैं। जिन्हें देश की बागडोर दे रखी है वह अपना सारा जोर उन लोगों को फंसाने और मारने में लगे हैं जो उन्हें ठीक ढंग से शासन प्रणाली चलाने को कहते हैं। ऐसे में भारत क्या करे ? लोग क्या करें ? यह प्रश्न चिह्न ही सबसे दैत्याकार होकर हमारे सामने खड़ा है। हर भारतीयों को अब इस दिशा में सोचने समझने और ठीक कदम उठाने की आवश्यकता है। आज संसार की बड़ी कहलाने वाली शक्तियां भी यही चाहती हैं कि भारत को शक्तिशाली न बनने दिया जाए। इसलिए वह भी उन्हीं लोगों का साथ दे रही हैं जो भारत के लिए खतरे की घण्टी बजाते रहें। एक घनघोर परिस्थिति में आज भारत का योगक्षेम खड़ा है। आवश्यकता है ऐसे ही महापुरुषों की जो जागृति का शंख भी फूंके तथा देश को निरापद करने

के उपाय भी सोचें। दूसरी तरफ परमाणु शक्तियों का भूत चारों तरफ खड़ा है। भारत के पास भी शक्तियां हैं पर उसका प्रयोग करके महानाश का ताण्डव रचाना मानवता नहीं है, न ही भारत ऐसी धृष्टता कर सकता है। इसलिए इस गम्भीर प्रश्न का उत्तर खोजना आज भारत के लिए सर्वप्रथम कर्त्तव्य की तरह ही खड़ा है।



छिन्न भिन्न पारिवारिक जीवन

मानवीय सम्बन्धों के अर्थ आज शीघ्रता से बदलते जा रहे हैं। बड़े-बड़े समारोहों में बड़ी पाश शादियां आजकल मनाई जाती हैं। लाखों का धन खर्चकर दिया जाता है परन्तु कुछ ही दिनों में तलाक की हालत में बदल जाती है। हमारी भारतीय वैदिक पद्धति में विवाह कोई खेल तमाशा नहीं था। एक पवित्र, अटूट बन्धन था। जिस प्रकार हम किस माता-पिता के जहां जन्म ले रहे हैं उसे स्वीकार किया जाता था, इसी प्रकार विवाह से दो आत्माओं का मिलन भी अटूट बन्धन था, समझौता नहीं था। पर आज विवाह एक समझौता बनकर रह गया है। परिवर्तन के बहुत से कारण है, जिसमें पुरुष और स्त्री दोनों समान रूप से उत्तरदायी हैं। जब पति अपनी पत्नी को सम्पत्ति का एक अंग समझकर व्यवहार करता है तो वह धीरे-धीरे एक क्रूर शासक बन जाता है। शिक्षित या अशिक्षित पुरुष की शासन करने की प्रकृति उससे पशुवत व्यवहार करवाने लगती है। वह भूल जाता है कि पत्नी कहलाने वाली नारी कोई गाय, भैंस या घोड़ी नहीं है, वह उसी की तरह मन मस्तिष्क रखने वाली पढ़ी लिखी, विचारशील महिला ही सुयोग्य गृहिणी है। तब तकरार पैदा होता है, तकरार युद्ध में बदल जाता है और तलाक की स्थिति पैदा हो जाती है।

कई घरों में पत्नी ही स्वभाव से ऐसी आ जाती है कि शासन करने की प्रवृत्ति उनमें कूट-कूट कर भरी होती है। वह घर के लोगों को सहन नहीं कर पाती, ईर्ष्या द्वेष से ग्रस्त मानसिकता उसे सहज होने नहीं देती। लोभ की भावना उनका मन का सन्तुलन डांवाडोल कर देती है। बात-बात पर महाभारत रच देती है। ऐसे में भी विवाह-बन्धन शिथिल हो जाते हैं। मानसिक वेदना, पारस्परिक अविश्वास, तलाक का कारण बन जाते है। दूसरी जातियों और देशों के रीति रिवाज़ों को देख-देख कर नाटकीय जीवन जीने से सम्बन्ध विच्छेद के सिवाय कोई चारा नहीं रहता। कई बार पुरुष या नारी विवाह के बाद भी जब पर पुरुष या पर नारी के साथ सम्बन्ध बनाने लगते हैं तो पुराने सम्बन्धों को तिलांजलि दे देते हैं। मानसिक तनाव से भयंकर रोगों की उत्पत्ति होती है। अशान्ति बढ़ जाती है, अविश्वास भयंकर रूप धारण कर लेता है। यदि तनाव नहीं होते तो एक दूसरे को मार डालने तक की घटनाएं देखने में आती हैं। दोषी सभी हैं। जिस घर में पति पत्नी में, दोनों में कोई एक अधिक

सहनशील होता है वहां तो जीवन फिर भी किसी तरह घिसटता है, पर यहां सहन शक्ति का अभाव हो वहां तो सम्बन्ध टिक ही नहीं सकते।

जब मनुष्य का मन सन्तोषी होता है तो वह कई दुर्गुणों से बच जाता है। परन्तु आज इस दिखावे के ज़ीवन में धन का लोभ इतना अधिक है कि स्त्रियां पतियों को प्रेरित करती हैं धन कमाओ, चाहे जैसे भी हो। क्योंकि जमाने की शान शौकत धन के बिना चल नहीं सकती। दिन रात-पुरुष के आगे ही ध्येय खड़ा रहता है कि कैसे कमाऊं ? यदि सीधे से नहीं कमा सकता तो उलटे रास्तों को अपनाता है। अब तो उलटे रास्ते अपराध के रास्ते ही दिखाई देते हैं किसी का अपहरण कर लिया, फिरौती मांगते रहे न मिली तो उस व्यक्ति को जान से मार डाला। मिल गई तो भी बचने के ढंग सोचने में कुछ गलत करते रहे। पकड़े गए तो सलाखों के पीछे बैठे रो-रो कर ज़िन्दगी के दिन गिनते रहे। स्मगलरों के संग फंस गए। इधर का माल उधर, उधर का इधर करके अण्डरवर्ल्ड के आदमी बन गए। किसी जहमत में फंस गए तो कई-कई कत्ल भी करने पड़े। आखिर कानून के हाथों फंस गए तो बस वही सलाखें साथी बन जाती हैं। आजकल बड़े-बड़े डान है, जो जमीनों के खरीद बेच में घपले करके लाखों की दौलत दिनों में कमा लेते हैं। आए दिन ऐसे लोगों के हाथों कई जुर्म हो जाते हैं और फिर जेलों की आबादी में बढ़ौत्तरी हो जाती है। मुकद्दमें सालों साल चलते रहते हैं। घर के लोग अपनी किस्मत को रोते हैं यह जेलों में बैठे-बैठे और तुन्द होते रहते हैं।

कई लड़कियां पढ़ लिखकर ऊंचे पदों पर आसीन होती हैं। आज के समय में लड़कों से लड़कियां ज्यादा सुघड़, ज्यादा परिश्रमी और सुयोग्य निकल रही हैं। ऐसी सुयोग्य पत्नियों पर पति की कोई ज़्यादती चल नही सकती, समानता का युग बन जाता है। यदि पति अपनी ऐसी पत्नी से कुछ ज्यादती करना चाहे तो नहीं कर सकता। पर पत्नी कई बार यह सोचकर कि मैं पति से ज्यादा कमा लाती हूं जब शासक प्रवृत्ति अपना लेती है तो भी शादी टूटने की नौबत आ जाती है। इस तरह आज भारत में कई प्रकार की नई समस्याओं ने जन्म ले लिया है।

नारी जागरण से नारी ने पुरुष का दुर्व्यवहार नकार दिया है। कई लड़कियां विवाह ही नहीं करती दहेज की प्रथा ने भी पारिवारिक जीवन जहरीले बना रखे हैं। जिनके पास धन है वहां तो बेटियों को देने का कोई अन्त ही नहीं। पर मध्यम वर्ग में दहेज की समस्या लेकर लोगों ने गर्भपात करवाना शुरू कर दिया। यह एक नया अत्याचार नारी जाति पर है। यदि जीवन जीने के ढंग कुछ सादे हो जाएं, दहेज की

प्रथा न रहे, नारी जाति का सम्मान हो तो लड़कियां बोझ न रहें। बेटियां माता पिता की ज्यादा हित चिन्तक होती हैं। हमारे खोखले होते पारिवारिक जीवन रसमय बन सकें, भारतीय परिवेश में ढल सकें और नये युग में आत्मसात भी हो सके उसके लिए हम भारतीयों को बहुत कुछ सोचने समझने और करने की आवश्यकता है। समस्याएं बहुत हैं और गम्भीर भी हैं। समाधान खुले मस्तिष्क से विचार कर परिवारों के नये वातावरण को ऐसा बना सकें जिससे हमारी उसमें आने वाली सन्तानें स्वस्थ मन, मस्तिष्क की मालिक हों। अन्यथा माता-पिता का मन मुटाव, लड़ाई झगड़े बच्चों के मन मस्तिष्क पर बहुत घातक प्रभाव डालता है। माता-पिता यह विचार निजी स्वार्थों में न भूलें कि वह जो कुछ कर रहे हैं उससे उनकी सन्तानों पर प्रभाव उनके जीवन को विषमय बना देगा।

पारिवारिक जीवन की स्वच्छता के लिए फिर से यही कहना पड़ेगा कि हमारा भारतीय वांग्मय बड़ी दूरदर्शिता से निर्मित है। शायद किसी भी और देश में इतना प्रांजल शिक्षण नहीं है जापान के सिवाय।

जापानी लोग बड़े देश भक्त होते हैं। हर व्यक्ति दुनिया के किसी कोने में हो वह स्वयं को जापान की मान मर्यादा पर न्यौछावर कर देता है। जापान पर बड़ी-बड़ी मुसीबतें आईं, अणुबमों का शिकार भी हुआ, भूकम्प, सुनामी भी वहां आए दिन तबाही मचाते हैं पर जापानी अपना आत्म सम्मान नहीं खोता, राष्ट्रीय सम्पत्ति की रक्षा अपना धर्म मानता है। जापानी बड़ा परिश्रमी है। पारिवारिक जीवन के नियमों का पालन करते हैं। जापानी कभी भिक्षा पात्र लेकर किसी के आगे गिड़गिड़ाता नहीं। यह भावना बड़ी आवश्यक है। हम भारतीयों ने अपनी भारतीयता भूल कर जो दूसरों की नकल का रास्ता अपना लिया, वही हमारे पतन का मार्ग बन गया। जिन देशों में वहां का पारिवारिक जीवन व्यवस्थित नहीं है। वहां के बच्चे अपने अविभावकों का सम्मान नहीं करते। छूटपन से ही उन्हें चिन्ता होने लगती है अपने पैरों पर खड़े होने की। वहां छोटे-छोटे स्कूली बच्चे बन्दूकें लेकर स्कूलों में पहुंच जाते हैं इस तरह नावालिग बच्चों को अपने साथियों को अध्यापकों को शूट करते देखा जाता है। नारी पुरुष कई-कई बार तलाक देकर और शादियां कर लेते हैं। किसी परिवार को एक साथ प्रेमपूर्वक रहते हुए देखना उन्हें नसीब नहीं होता। ऐसे लोगों की नकल में हम लोगों को बरबादी का मार्ग नहीं अपनाना चाहिए।

हमारे पास अपनी जीवन पद्धति है अपने आदर्श हैं, अपनी आचार, संहिताएं हैं। हम उनसे विमुख होकर अपने परिवारों के विघटन के कारण क्यों उपस्थित करें?

छिन्न भिन्न, होते पारिवारिक जीवन को बचाने के लिए अपनी संस्कृति और सभ्यता की ओर अविमुख होकर हमें वह मार्ग, वह दृष्टिकोण मिल सकता है जिससे भारतीय क्षीण न हों और भारत का भविष्य भी किसी अन्धेरे गलियारे में न जा फंसे।

जब व्यक्ति को यह ध्यान हो कि मैं ऐसा कोई काम न करूं जिससे मेरी इज्जत न रहे, फिर यह विचार हो कि मेरे गलत चलने से मेरे घर की बदनामी होगी, खानदान की बदनामी होगी और फिर समाज में नीचा देखना पड़ेगा, सबसे ऊपर मेरे कर्म से मेरे देश को नुकसान होगा, तो कोई व्यक्ति किसी भी बुरे कर्म को करने से स्वयं को बचाएगा। सदाचार का मार्ग भले ही कठिन लगे पर सबसे प्रथम हमारा आचरण ही हमारी कीर्ति को बचा सकता है। ऐसा कौन व्यक्ति है जिसे अपनी शोभा अच्छी नहीं लगती। कीर्ति के हित तो मनुष्य आग में भी कूद सकता है। पंजाबी में कहावत है 'घरों भैड़ा जम्मे न, वाहरों भैड़ा आए न' (घर में कोई बुरा व्यक्ति जन्म न ले, बाहर से कोई बुरा न आए।) इससे हमें घर के बेटे बेटियों को सुशिक्षित करना है। सुशिक्षित का अर्थ केवल यह नहीं कि उन्हें बड़ी-बड़ी डिगरियां हासिल करनी है। जीवन सुचारू रूप से चलाने के लिए डिगरियां भी लेनी ही है। पर डिगरियों के साथ-साथ घरों में आचरण की, सदाचार की, सद् व्यवहार की, सहनशक्ति की; मिष्ठ भाषण की, सत्य बोलने की, ईमानदारी की और दूसरों से किस प्रकार पेश आएं यह शिक्षाएं बहुत जरूरी है। मुश्किल यह है कि घर में ऐसा कुछ कहने की कोशिश भी की जाए तो बच्चे बाहर से जो सीख आते हैं, उसका हवाला देकर आपको गलत करार देते हैं, नये जमाने नये माहौल की दुहाई देते हैं। जिससे यह आवश्यक हो जाता है कि हमारी बाहर की शिक्षा प्रणाली में भी बहुत कुछ सुधार की आवश्यकता है। घर और बाहर दोनों जगह की सद् शिक्षा ही हमारे भावी परिवारों को छिन्न-भिन्न होने से बचा सकेगी। हमें इन रास्तों को खोजना और प्रयोग में लाना होगा जिससे पारिवारिक विघटन न हो पारिवारिक सुदृढ़ता ही देश की सुदृढ़ता का मूल है। छिन्न-भिन्न होते परिवारों को कैसे बचाएं आज इन पर विचार करने की आवश्यकता है।



संन्यासी योद्धा

आज के इस हलचल भरे युग में एक स्वर यह है कि संन्यासी को राजनीति में नहीं पड़ना चाहिए। इसका स्वर कहता है संन्यासी होकर देश की, राष्ट्र की सेवा की बात सोचो। संन्यासी अपना छोटा परिवार छोड़कर जन सेवा के लिए बड़े परिवार में सम्मिलित हो जाता है। हम देखते है संसार से वैरागी होकर अधिकतर तपस्या के लिए लोग हिमालय की शरण में चले जाते हैं। कई तो अपना सारा जीवन हिमालय की गोद में ही बिता देते हैं। गुरु गोबिन्द सिंह जी अपने पूर्व जन्म की बात करते थे तो बताते थे कि वह हिमालय के स्थान पर तप कर रहे थे। वहां से उन्हें अन्तः प्रेरणा में आदेश दिया कि जाओ संसार के उद्धार के लिए कार्य करो। तो वहां से उन्होंने अपना शरीर त्याग दिया और गुरु तेग बहादुर जी के यहां पुत्र रूप में जन्म लिया। उस समय देश की दशा औरंगजेब के हाथों कैसी हो रही थी यह तो जग जाहिर है। उस अत्याचार से देश को बचाने के लिए जो कार्य गुरु गोबिन्द सिंह जी ने किया, जो बलिदान दिए। आज भारत उनका आभारी है। दक्षिण भारत में संत समर्थ स्वामी रामदास जी भी संन्यासी थे पर शिवाजी जो आततायीपन का सामना करने के लिए तत्पर करने वाले वही महात्मन थे। इन दो धर्म गुरुओं की कृपा से औरंगजेब के जुल्मोसितम से निजात पाने में भारत की प्रजा को सहयोग मिला। स्वामी विवेकानन्द भी संन्यासी थे पर भारत की जनता को जागृत करने और भारतीय संस्कृति को प्रकाशित करने में उनका भरपूर सहयोग था। यह सब केवल राम राम जपने वाले संन्यासी नहीं थे यह राष्ट्र के परम भक्त और परम रक्षक थे। योद्धाओं का मार्गदर्शन यदि संन्यासियों से प्राप्त होता है तो उनके तीर तरकश अधर्म का नाश करने वाले बन जाते हैं। 1957 के स्वतन्त्रता संग्राम में संन्यासी दयानन्द तीस वर्ष तक स्वतन्त्रता सेनानियों के संग-संग कार्य करते रहे। राजनैतिक लोग अपने स्वार्थों में जब अन्धे हो जाते हैं। तब उनको मार्ग पर लाने के लिए संन्यासियों को गुफाओं को त्याग कर मैदान में कूद कर आना पड़ता है। यदि मानवीय मन मस्तिष्क को स्वस्थ रखना हो तो ऐसे महापुरुषों की आवश्यकता सदा बनी रहती है। जो उनको मार्गदर्शन करें और कर्त्तव्य के प्रति सचेत कर दें। संन्यासी यदि कर्त्तव्य विमुख हो जाएगा तो जनता दिशा भ्रमित होगी ही। प्राचीन भारत में जितने भी राजा महाराजा हुए हैं सबके यहां कोई न कोई सात्विक व्यक्तित्व रहा है जिसके नेतृत्व में राजाओं का आचरण भी

मर्यादा से बाहर न जा सके। अन्तर साधना से मनु अपने भीतर शक्तियों का संचार करता है और फिर अपनी अन्तर साधना की शक्ति का प्रयोग दूसरे लोगों को सद्प्रेरणा देकर सत्याचरण की तरफ मोड़ता है। ऐसा पहले भी होता रहा है आज भी होना ही चाहिए। निजी जीवन में मनुष्य की प्रकृति स्वभाव से नीचता की तरफ मुड़ जाती है–

'नल वल जल ऊंचो चढ़े अन्त नीच को नीच।' ऐसी मानवीय प्रवृत्ति को हर समय हर क्षण हर जगह विचारों के प्रक्षालण द्वारा कर्त्तव्य की ओर इंगित करके प्रेरणा देने का कार्य सदा उन लोगों ने किया है जो ईश आराधना में लगे होते हैं और व्यक्तिगत धर्म, जातिय धर्म, राष्ट्र धर्म और ईश धर्म को अच्छी तरह पहचानते हैं। मुक्ति का मार्ग खोजकर कोई मुक्त हो गया उससे बड़ा वह है जो मुक्ति का मार्ग पाकर उसे परोपकार में व्यय कर दे। देश की स्थिति ऐसी हो जाती है जब अत्याचार, अनाचार, अन्याय, दूराचार बढ़ जाते हैं तब संन्यासी को घर–घर अलख जगाकर जनता जनार्दन की नींद को हटाना, प्रकाश लाना, राष्ट्र मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करना धर्म हो जाता है। जब कोई रावण हो जाता है तो राम अच्छा नहीं लगता। वह सीताओं की शील भंग करने के लिए अपहरण करता है। यही आजकल हो रहा है। ऐसे रावणों को कैसे समाप्त किया जाए। दशहरे का रावण हर वर्ष यही प्रेरणा देता है कि ऐसे रावणों को जला दो, समाप्त कर दो यदि बने रहेंगे तो अराजकता ही फैलाएंगे। जो देश के स्वास्थ्य के लिए घातक होगी। रावण राम को गाली निकालेगा ही क्योंकि वह जानता है अपने आचरण को उसे अपने पापों का ज्ञान है। वह सजा पाना नहीं चाहता, इसलिए राम से डरता है और गालियां निकालता है। ऐसे भ्रष्ट लोगों से भयभीत होकर जब जनता घरों में घुस छिप कर बैठ जाएगी तो देश का कल्याण कठिन होगा। शूल को चाहे शूल से ही निकालना पड़े समय का धर्म यही आदेश देता है। हर एक संन्यासी इतना बड़ा साहस नहीं कर पाता सबकी अपनी–अपनी सीमा होती है पर जो स्वभाव से ही निर्भय है, नेतृत्व की शक्ति रखता है उसे तो मैदान में उतरना ही होगा। ऐसा साहसी संन्यासी जब मैदान में उतरेगा तो बाकी जनता को भी बल मिलेगा। युद्ध होगा अहिंसक या हिंसक तभी तो यह बुराईयों के शैंबाल छंटेंगे। तभी तो सिंहासन पर निर्मलता आएगी। युग–युग की कहानी यही भाषा बोलती है। अतः हम भगवान् से यही प्रार्थना करते हैं कि इस देश की नैया पार लगाने के लिए ऐसा ही नेतृत्व करने वाला जो वैरागी वीर होगा वही अनुकरणीय है।



प्रभु पूर्ण है

अनुभव से, सम्पर्क से, व्यवहार से, स्वभाव से और मनन से अपने भीतर मानव कुछ बिम्ब बनाता चला जाता है। जो धीरे-धीरे उसका चरित्र बन जाता है। परिपक्व होने पर दृढ़ता आती है। सत्य क्या है इस पर विचार करते-करते धारणाओं का अपना रूप अन्तर मन पर अंकित हो जाता है। इन सबके बीच जो मानव का अन्तर रूप उभरता है वह ही उसका स्वरूप होता है। इसी से तो कहा जाता है कि सदा अच्छा, उत्तम, ज्ञान चक्र, शास्त्र सम्मत हम सोचें, करें, जिससे हमारे बिम्ब भी सत्य शिव और सुन्दर बनें और हमारा अपना आप भी एक आभा को लेकर चले। मानव जब शिशु रूप में इस संसार में आता है तब वह बिलकुल अबोध होता है। जहां ईश्वर को अपनी कोई शक्ति बढ़ाने या घटाने की आवश्यकता नहीं होती मनुष्य को पैदा होने से मृत्यु पर्यन्त सीखना पड़ता है। ज्ञान अर्जन करना पड़ता है। आत्मोन्नति के लिए तो उसे सीखने की, आगे बढ़ाने की निरन्तर साधना करनी ही पड़ती है। मनुष्य की शक्ति, ज्ञान बढ़ भी सकता है घट भी सकते हैं। एक अबोध ब्रह्म उन्नति करते-करते परम पद को पा सकता है। प्रकृति स्वयं में जड़ है पर ईश्वरीय शक्ति के मिश्रण से इस जड़ में भी सक्रियता पैदा हो जाती है। जिससे प्रकृति का कोई खजाना न्यून नहीं होता। लाखों वर्षों से मानव इस प्रकृति के साथ खिलवाड़ करता आ रहा है और वह दाता इसके रीते खजाने भरता चला आ रहा है। जब चाहता है बाढ़, वर्षा, भूकम्प, अग्निकाण्ड, तूफान भी भेज देता है। बहुत कुछ बहा क़र ले जाता है। बहुत कुछ नया और फिर से पैदा कर देता है। कौन इस परिवर्तन को लाता है ? वही करतार ही तो, क्योंकि प्रकृति उसके वश में है। नयी चेतना पैदा होती है, नये स्वरूप में फिर से जीवन का प्रादुर्भाव होता है। जीवन सृष्टि कितनी गन्दगी इसमें डालती है। वह गन्दगी भी कुछ समय में जीवनदायिनी रूप में बदल जाती है। यह सब ईश्वर का पूर्ण स्वरूप है। यही उसकी ऐसी शक्ति है जिसका मुकाबला बड़े से बड़ा अभिमानी नहीं कर सकता। इसीलिए मानव उस शक्ति को नमन करता है। उसी से सब कुछ मांगता है, उसी से सब कुछ पाता है, उसी में विलीन भी हो जाता है। ईश्वर न प्रकट होता है न विलीन होता है। वह सदा सर्वत्र वर्तमान और सक्रिय रहता

है करोड़ों नेत्रों से इस पूरी संसृति को देखता है, पालता है, चलाता है। फिर भी सबसे असग निर्लेप होकर रहता है।

मनुष्य जीवन भर सीखता है सोच विचार करता है स्वाध्याय करता है। उसको जानने के प्रयत्न में अपना आप आहूत कर देता है। यदि नहीं करता तो एक दिन सब कुछ गंवा भी देता है। दृष्टि, वाणी, घ्राण शक्ति, स्मृति, श्रवण शक्ति, पाचन शक्ति सब खो देता है। कई बार तो इतना सुयोग्य व्यक्ति मूढ़ सा भी हो जाता है। जब सारी शक्तियों का क्षय हो जाता है तो जीता हुआ भी मृत्यु के समान हो जाता है। मानव में, जीव मात्र में विकास और ह्रास दोनों का खेल तमाशा लगा रहता है पर वह नारायण न कभी घटता है न कभी बढ़ता है वह पूर्ण है पूर्ण ही रहता है। पूर्ण में से पूर्ण को निकाल दो शेष भी पूर्ण ही रहता है।

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।

मानव पूर्ण होना चाहता है तो उस पूर्ण की ही शरण में जाना होगा। जब पूर्ण अपनी शरण में ले लेगा तब ही मानव का कल्याण सम्भव है।



एक ईश्वर की आराधना

कृपालु जी का कहना है जिस प्रकार ईश्वर स्वयं भू है, प्रकृति स्वयंभू है, आत्मा स्वयंभू है इसी प्रकार वेद भी स्वयंभू है। वेदों का ज्ञान स्वयंभू है, लेकिन भाषा का विकास क्रम से ऋषियों ने किया। उत्पन्न करना, विकास करना इसके लिए ईश्वर कोई न कोई आश्रय बना देते हैं। मुर्गी पहले थी या अण्डा यह फण्डा कैसे सुलझे? ज्ञान के बिना भाषा और भाषा के बिना ज्ञान कैसे होगा। वेदों की ऋचाओं के अर्थ और आदर्श समझते-समझते बुद्धि चकित रह जाती है। जो हम आज जान रहे हैं वह करोड़ों वर्ष पहले जाना जा चुका था और कार्यान्वित हो चुका था। जो आज अनुभव किया जाता है वह अतीत में अनुभव किया जा चुका था, उल्टा सीधा नहीं पूर्ण वैज्ञानिक ढंग से तैयार, मानव जाति के लिए प्रस्तुत था। लाखों वर्षों में उसमें कोई परिवर्तन नहीं आया था। मन की चंचल गति के कारण जो परिवर्तन लाए जाते हैं वह प्रकृतिक नियमों के विपरीत होने से हानिकारक होते हैं। प्रकृति अपने नियमों में बिना व्यवधान के चलती है। चलाने वाले की आज्ञा का कोई उल्लंघन नहीं करती। मनुष्य इन नियमों का जब-जब उल्लंघन करता है, रोग आते हैं, आपदाएं आती हैं, प्रकृति भी अपना क्रोध दिखाती है। वैदिक ज्ञान ईश्वर ने बनाया या स्वयं बन गया अथवा ऋषियों ने तैयार किया, इस विवाद में हम न भी पड़ें तो भी यह ज्ञान ऐसा है जो संसार के सारे ज्ञान विज्ञान का पितामह है। जिस ज्ञान के अर्थ करने में भिन्न-भिन्न मुण्डे भिन्न-भिन्न मति बेशक प्रदर्शित की हो पर सत्य को उघाड़ने वाले ऋषियों की टीकाओं ने झूठे तर्क के अनर्थों को नकार दिया। वेदों के ज्ञाता होकर भी कृपालु जी भगवान के सब नाम छोड़कर 'राधा राधा' का जाप करते हैं। जब कि वेदों में राधा की भक्ति करने का एक भी मन्त्र नहीं है। राधा भगवान कृष्ण की परम आराधिका भी, उनका जीवन परम पावन प्रेम भक्ति का जीता जागता उदाहरण है, मध्यकाल में उनकी ही जैसी कृष्ण भक्ति की उज्जवल उदाहरण महारानी मीरा बाई भी है, चैतन्य महाप्रभु भी हैं, सूरदास भी हैं। परन्तु कृपालु जी ने वेदों को आधार मानकर राधा भक्ति का आविष्कार क्यों और कैसे किया यह समझ में नहीं आता। राधा भगवान कृष्ण की बाल सखी थी। कृष्ण के रंग में रंगी हुई। राधा स्वयं भगवान नहीं थी। यह सच है कि भगवान के रंग में पूर्णतया रंग जाने वाला कबीर जी के शब्दों में –

लाली देखन मैं चली मैं भी हो गई लाल, ऐसा ही जाता है। हमारे देश में ऐसे प्रेमी भक्तों की भी कमी नहीं है। ईश्वर के प्रति इस प्रेम भक्ति का स्थान बहुत ऊंचा है जो ईश्वर को पति स्वामी के रूप में भजकर जीवन संवारता है उसके जीवन में मनमथ की काम वासना को कोई रंच मात्र भी स्थान नहीं होता। यद्यपि साधारण जन के लिए इस रहस्य को समझना संभव नहीं है। इसीलिए कई पाखण्डी साधु सन्त बनकर इस राधा भक्ति का दुरुपयोग करके नारी जाति का चारित्र हनन करने में तत्पर रहते हैं। जबकि भगवान कृष्ण स्वयं एक महान योगीश्वर थे। कोई भक्त यह नहीं चाहता कि लोग भगवान को छोड़कर उसी की आराधना भक्ति करने लग जाए, राधा भी ऐसा कभी नहीं चाहती होगी। राधा वन्दनीय है, पूजनीय है। पर आराधनीय तो भगवान् ही हैं। वही भगवान जो हर जीव, जड़, चेतन में विराजमान है। उनको पीछे छोड़कर किसी की भी आराधना क्यों की जाए। गुरु भी महान हैं पर क्या गुरु जी भगवान् की भक्ति छोड़कर शिष्य को अपनी ही भक्ति करवाने लगे यह अनुचित नहीं है। गुरु पद आदर करने योग्य है सम्माननीय है, गुरु के प्रति श्रद्धा भाव न होगा तो हम सीख भी नहीं पाएंगे कुछ। पर क्या सर्वशक्तिमान भगवान से बढ़कर भी इस पूरे ब्रह्माण्ड में कोई हो सकता है? दुनिया में बड़ी से बड़ी हस्ती भी क्या उस सर्वान्तर्यामी से बड़ी हो सकती है। भगवान् में तो यह सामर्थ्य सदा से है कि वह परम दिव्य शक्तियों को भी इस संसार में पैदा कर सकता है। पर परमात्मा जितनी सामर्थ्य किसमें हो सकती है। हमारा यह गौरव है कि ईश्वर ने हमारे देश को चुना, जिसमें एक से बढ़कर एक महाशक्तियों का अवतरण हुआ। जो भी आया उसने उस महान् प्रभु का गुणगान किया और उसी की आराधना की उसी से सारी शक्तियां सारे गुण प्राप्त किए। संसार में ऐसे दिव्य व्यक्तित्व नहीं हुए जैसे भारत में हुए। हमें अपने देश की सभी दिव्य शक्तियों को बिना भेदभाव के अपने हृदय में बसाना है। पर यह नहीं भूलना कि इन सब के ऊपर जो शक्ति है, जिससे इन सबमें शक्ति प्राप्त की उसी महान् की आराधना से हमें भी वैसा ही बनना है। जब वेद कहता है 'तस्मै जेष्ठाय नमः' तो हम किसी और को जेष्ठ नहीं कह सकते। जो लोग यह सोचते है कि परमात्मा आएगा क्या वह नहीं जानते हैं कि परमात्मा गया ही कब था और कहां गया था। जो कहां-कहां में व्याप्त हैं उसके चले जाने की बात ही कहां है। छत्त पर जाने के लिए सीढ़ी चाहिए, सीढ़ी का काम गुरु आचार्य करते हैं। हम छत्त पर जाकर सीढ़ी को ही छत्त समझ लें तो काम नहीं चलता। गुरु और सीढ़ी की समानता नहीं है। पर वह तो हमारे पथ प्रदर्शक हैं, नेता हैं, आचार्य हैं, पूजनीय हैं, सम्मानीय हैं, अनुकरणीय हैं। पर उनका सहारा लेकर हम जहां वह पहुंचे हैं वहां पहुंचना है। जो उन्होंने पाया है वह पाना है। आचार्य समर्थ गुरु को आराध्य नहीं

मान लेना। जिसकी आराधना उन्होंने की हमें भी उसकी ही आराधना करना है।

इतने पास रहते हुए भी वह भगवान् इतने लीलामय हैं कि मानव की बुद्धि को भ्रमित कर देते हैं अपनी माया से। मनुष्य परेशान हो जाता है कि उसको किस रूप में देखें, कैसे ध्यायें ? ऊपर से मन को इतना चंचल बना रखा है कि यह भी मनुष्य को झमेलों में लिपटा रखता है, भटकाता है। दिग्भ्रमित कर देता है। मानव मन के मते चलता है तो किसी सत्य को प्राप्त नहीं कर सकता। इस झमेले में फंसा रहता है कि यह ठीक कि वो ठीक और इसी तरह निकल जाती है सारी उमरिया। मूल को छोड़कर कुछ प्राप्त नहीं होता। मूल को ही प्राप्त करना है। यद्यपि सभी दिव्य आत्माओं को हमें अपने संग रखना है। न त्यागना है न नकारना है। हम अपने घरों में पैदा होने वाले हर बच्चे को राम या कृष्ण के रूप में ही देखने के अभ्यस्त है, ताकि हमारी सन्तानें तालिबान न बनें, राम कृष्ण ही बनें, सीता, राधा ही बनें। हमारी संस्कृति में मूल वाहक है यह सब और हमारी आत्मा के बहुत पास हैं। उन्हीं से वर पाकर हम उस शक्ति को पाने का संबल पा सकते हैं, जिसे पाकर हमारे पूर्वजों ने हमें मार्ग दिखाया। उनके भीतर की जागृत ईश्वरीय शक्ति को शत-शत नमन है और हमारी यही इच्छा है कि हम भी उस शक्ति को प्राप्त करें। इसलिए वेद को ही प्रमाण मानकर उसी सर्वान्तर्यामी सर्वशक्तिमान, सर्वाधार सच्चिदानन्द भगवान् को ही ध्याना चाहिए। वही सब शक्तियों के स्रोत हैं। इस सृष्टि के कारण हैं, कर्ता हैं, नियन्त्रक हैं। यही हमारी आत्मा के स्वामी हैं। सभी महापुरुषों, देवताओं, अवतारों के भी प्रभु हैं। हम स्वयं राधा बनकर उसकी आराधना करें। वह हमारे हृदय में ही हैं और वहीं हम उन्हें पा सकते हैं तथापि रास्ता कठिन है मन की चंचलता के कारण पर जिस भी किसी ने उसे पाया अपने भीतर पाया और शक्तियों का भण्डार बन गया। उसके बिना पल भर में सब शून्य हो सकता है। सभी पुण्य श्लोक आचार्य भक्त हमारी सहायता करें हम उनका मनन करें और स्वयं को उस परम शक्ति के अधीन करके सुरक्षित हो जाएं।



आत्मा के सफर

मृत्यु के समय मरते हुए प्राणी को ध्यान से देखते रहिए प्राण पखेरू कैसे उड़ जाते हैं, दिखाई नहीं देता। पर मरने वाले के शरीर के नवद्वारों में से कौन-सा द्वार खुला और प्राणी निकल गया। स्वयं हम अपने आपको जीवन भर इस शरीर से इतना जोड़े रहते हैं कि जैसे हम शरीर ही हैं। पर जाते समय अपने शरीर के मांस का एक भी टुकड़ा साथ नहीं ले जा सकते। जीव एक हवा में बगुले सा उड़ जाता है। यह तो प्राण भी नहीं, प्राण तो मानो जीव का घोड़ा था जो मालिक गया तो वह भी धड़कना बन्द हो गया। कहते हैं जीवात्मा के साथ उसका सूक्ष्म शरीर, कारण शरीर ही जाता है। फिर रज और वीर्य के मिलने से जब किसी नये शरीर की सम्भावना बनती है तो यह सूक्ष्म शरीर भी इस नये शरीर में स्थापित हो जाता है। जैसे आणविक भट्ठी में यूरेनियम की सलाखें हैवी वाटर से मिलने पर ही क्रियान्वित हो जाती है, आत्मा अपने नव निर्माण में लग जाती है। समझ में आता है जीव शरीर या शरीर का कोई अवयव नहीं, जीव प्राण भी नहीं होता। यह एक सम्मिश्रण था पांच तत्वों का, जीवात्मा के निकलने से पांचों तत्व भी अपने-अपने स्वरूप में विलीन हो गए। जीव एक हलकी-फुलकी फुनगी सा कहां उड़ गया, राम जाने। जब तक पुनः आधार नहीं मिल जाता किसी नये शरीर का यह जीव कहां होता है यह सदा अज्ञात के गर्भ में ही रहता है। इस प्रकार हम समझ सकते हैं यह आत्मा कितनी स्वतन्त्र है अथवा कितनी परतन्त्र है। जब कोई आधार नहीं तो फिर एक ही आधार है उस परम शक्ति का जिसकी कोख कभी किसी का त्याग नहीं करती, साथ नहीं छोड़ती। एक बहुत बड़े नास्तिक जीवन भर ईश्वरीय सत्ता को नकारने में लगे रहे। जब मृत्यु पास आ गई तो कहने लगे ऐसे लगता है जैसे कोई मेरे प्राण खींच रहा है। अर्थात् मनुष्य जीवन और मृत्यु के विषय में किसी तीसरी शक्ति के अधीन है वह महसूस कर सकता है। और यह अज्ञात तीसरी शक्ति ही भगवान् है। इससे आगे एक शरीर को छोड़ हम अगला कौन-सा शरीर धारण करेंगे यह भी अपने वश में नहीं है। केवल इतना जानते हैं कि मृत्यु के समय मन के पटल पर जो अंकित होगा वैसा ही अगला जन्म मिलेगा। जड़ भरत जी की कथा इस कथन को प्रमाणित करती है। ऋषि आत्मा होने से उन्हें पूर्व स्मृति थी। अतः वह बता सके और राजा के रूप में उस मृग शावक को भी पहचान सके जिसे उन्होंने आश्रम में पाला था। संसार

में ऐसे लोग हैं जो पुनर्जन्म को नहीं मानते और कहते है खाओ पीओ मौज करो, अब मौज नहीं की तो दुबारा तो आएंगे नहीं। कइयों का विचार रहता है कि कयामत तक जीवन कब्र में बन्द रहेगा जब कयामत आएगी तब भाग्य का फैसला होगा। पर भारतीय ऋषि विभर्शित वेदोक्त भाषा यह कहती है कि प्राण वायु के निकल जाने पर आत्मा शरीर से चली जाती है। पर आत्मा का कभी नाश नहीं होता। अपने कर्मोनुसार वह बार-बार नये-नये शरीर धारण करती है-

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय

नवानि गृह्णाति नरोऽपरानि

भगवान् कृष्ण समझाते हैं कि जिस प्रकार पुराने वस्त्र उतार कर हम नये वस्त्र पहन लेते हैं। इसी प्रकार जीवात्मा उस शरीर का त्याग कर देता है जो उसके निवास के योग्य नहीं होता तथा नये शरीर में जो भगवान् की कृपा से उसके लिए तैयार किया जाता है उसमें विराजमान हो जाती है। यह क्रम आदि सृष्टि से होता चला आ रहा है और अनन्त काल तक होता रहेगा। पते की बात यह है कि अगला शरीर कौन सा मिलेगा, बसेरा कहां होगा, यह हम जानते नहीं पर मानव मात्र का प्रयत्न यही रहना चाहिए कि हम अच्छे जन्म, अच्छे जीवन को पाने के लिए स्वयं को तैयार कर सकें। अपनी अन्तर शुद्धि से, शुभ कर्मों से, परोपकार से, ईश्वर प्राणिधान से और निरन्तर स्वयं का शोधन करके दिन प्रति दिन अमर पथ के पथिक बनकर हम अपने आगे आने वाले जीवन को संवार सकते हैं। पुण्य कर्मों घरों में जन्म लेकर नित ऊंचे उठने का प्रयत्न कर सकते हैं। यही मानव का परम पुरुषार्थ है यहीं पर भगवान् ने मानव को स्वतन्त्र रखा है कि वह अपना मार्ग स्वयं बनाए अपने आने वाले नये जन्मों की भूमिका तैयार कर लें। यह स्वतन्त्रता पशु, पक्षी, कीड़े, मकौड़े, जलचर, थलचर किसी को भी प्राप्त नहीं है क्योंकि सब योनियां जीव के लिए भोग योनियां हैं। केवल मात्र मानव का जीवन ही ऐसा है जिसमें हम अपने युगों-युगों तक आने वाले जीवनों के लिए स्वकर्मों में ऐसा निर्माण कर लें कि हम अपने प्रिय प्रभु की गोद में सदा सवार रह सकें। आत्माओं का यह सफर कभी समाप्त नहीं होता जब तक हम पूर्णतया मोक्ष के योग्य न हो जाएं। इसलिए हमारा सब प्रकार से प्रयत्न यही रहे कि हम सद्विचारों का ही सृजन करें। यही परम पुरुषार्थ है। यही स्वर्ग है।



वर्तमान स्थिति

तसलीमा के भीतर की इन्सानियत ने बंगला देश सरकार का और मुस्लिम समाज का कच्चा चिट्ठा अपनी पुस्तक 'लज्जा' में उंडेल के रख दिया। पुस्तक पढ़ने वाले को इस्लाम के विरुद्ध उसमें कुछ भी लिखा दिखाई नहीं दिया। पर तसलीमा को अपने देश से भागना पड़ा कि उसने इस्लाम की तोहिन की है। वह अपने देश में नहीं जा सकती, भारत में भी उसे टिकने नहीं दिया गया क्योंकि उसे टिकाने से यहां की मुस्लिम जनता न भड़क उठे, किसी मुस्लिम देश में भी उसे ठिकाना नहीं मिल सका। जहां भी जाएगी मौत की सजा पाएगी। बंगलादेश को पाकिस्तान से आजाद करवाने में भारत ने भरपूर सहायता की। पर आजाद होने के बाद बंगला देश भारत का ही शत्रु बन गया। और पाकिस्तान का दोस्त बन गया। जिसने उसे गुलामी में जकड़ा हुआ था। एक जाति जिसका ध्येय केवल दूसरों पर कहर ढाना ही हो उसके जुल्मो सितम की कहानी भी किसी को कहने का हक नहीं। यह जुल्मोसितम करने वाले अपने साथ अच्छे लोगों को भी बदनाम बना देते हैं। ऐसा नहीं कि सब मुसलमान बुरे हैं ऐसा कभी होता भी नहीं। हमने अपने जीवन में ऐसे बहुत से लोगों के साथ व्यवहार भी करके देखा है कि वह कितने सज्जन, कितने कृपालु, कितने संवेदनशील हैं। गलत और ठीक का विवेचन उनमें भी होगा ही, तभी तो कई फकीर सन्त उनमें भी हुए और कई खुदाप्रस्त परिवार भी मिले जिनसे व्यवहार करके, सम्पर्क करके मन आह्लादित हो गया। पर कहां क्या ऐसा है जिसने इस जाति को दूसरों के लिए त्रास बना दिया। धार्मिक कट्टरता के नाम पर जुल्म ढाना, क्या खुदा का आदेश हो सकता है ? खुदा बन्द करीम के लिए तो सारे जीव एक समान हैं वह जितना मुसलमान का है उतना ही हिन्दू का है उतना ही ईसाई का है उतना ही अन्य जातियों का है। जिन्होंने उस प्रभु से नाता जोड़ा, चाहे किसी भय में भी, वह तो उसका हो गया मुझे तो सारी दुनिया अपनी और दुनिया में भगवान् की वर्तमानता का बोध होता है। कोई मजहब घृणा नहीं सिखाता फिर जोर जुल्म की शिक्षा क्यों है ? एक छोटा सा बच्चा हकीकत ? क्या जुर्म था उसका? काज़ियों मुल्लाओं ने तलवार के घाट उतार दिया। यह धार्मिक होने का प्रमाण नहीं है। ऐसे-ऐसे जुल्मों की तारीफ कौन कर सकता है। युद्धों के तो नियम होते हैं पर क्रूरता का क्या नियम है। लूट-पाट का क्या औचित्य है। हम देखते हैं यह तालिबान जरा-जरा सी गलती

पर औरतों को तलवार के घाट उतारते हैं और बुरका तक नहीं हटाने देते। छोटी उम्र के बच्चों को मानव बम बना कर आतंकवाद के लिए तैयार कर देते हैं। नर संहार की ताण्डव लीला करने के लिए। क्या उनको धर्म यही सिखाता है ? कुरान शरीफ तो ऐसा कुछ नहीं सिखाता। रोज़े रखे जाते हैं मन की शुद्धि के लिए। यह नियम है रमजान के दिनों में कोई अच्छा काम करो रोज़। अच्छा काम आततायीपन नहीं है। आततायीपन आतंकवाद तो राक्षसी कर्म है। बेकसूर लोगों को क्रूर कृत्य से मौत के घाट उतार देना कोई जाति भी इसे धार्मिक कृत्य नहीं कह सकती। ऐसे ही क्रूर कर्मियों को समाप्त करने का आदेश धर्म है। धर्म कोई जाति नहीं होती। धर्म मानव कर्त्तव्यों की नियमाबलि है। अंग्रेज़ सरकार ने हिन्दू मुसलमानों को लड़वाकर अपना उल्लू सीधा करना था सो उन्होंने किया। पाकिस्तान बनवा दिया। नादिरशाही मार काट शुरू हो गई। उस समय का ताण्डव हम लोग इन नंगी आंखों से देख चुके हैं। हिन्दुस्तान अपने देश में रहने वाले मुसलमान भाईयों से मिलकर रहना चाहता है। पर आतंकवाद के आका पाकिस्तान ऐसा नहीं होने दे रहा। वह सारे हिन्दुस्तान को हड़पना चाहता है। उसकी यह नीच मंशा को कभी पूरा नहीं होने देना है क्योंकि उससे भारत एक और गुलामी का शिकार हो जाएगा। पकिस्तान काश्मीर के द्वार खटखटा रहा है बार-बार पिछले साठ वर्षों से। चाहे कुछ भी हो यह द्वार नहीं खोलना चाहिए क्योंकि पाकिस्तान के मन्सूबे अच्छे नहीं हैं। कोई दोस्त बने यह तो भारत को मन्जूर है पर कोई दोस्त बनने के ढोंग में पीठ में छुरा घोंपे। यह क्यों कर वांछनीय हो सकता है। मनसूबे नजर आ रहे हैं और दूसरे देश पाकिस्तान की पीठ इसलिए ठोंकते रहे हैं क्योंकि उन्हें एक मजबूत हिन्दुस्तान नहीं चाहिए। मजबूत हिन्दोस्तान दुनिया का सरताज बन जाए ऐसा कोई नहीं चाहता। इन विपरीत परिस्थितियों में हमें भारतीयों को निरन्तर युद्ध करना ही पड़ेगा। सीमा पार पाकिस्तान की विस्तारवाद की आदत का सहयोगी चीन भी है जो हर समय हमारी सीमाओं पर छेड़खानी करता रहता है। सुख चैन से भारत बैठा रहे ऐसा वह भी नहीं चाहता। वह अपने विस्तारवाद की बात सोचता है। हमारी लम्बी सीमाएं हमारे लिए बहुत बड़ी चुनौती हैं। पर इतने सी ही बस नहीं है। हमारे घरों में शत्रु है। सर्वत्र, जिनका खटका और भी भयानक है। कहीं नक्सलवाद, आतंकवाद। चोर चोर मौसेरे भाई। आपस में एक दूसरे की सहायता करके भारत को आतंकित करते रहने के इरादे नाकाम करने के लिए हमें आराम की नींद नहीं सोना। आज भ्रष्टाचार का रोग भी इतना भयंकर रूप धारण कर चुका है कि स्वयं सरकार में बैठे लोग भी भरोसेमन्द नहीं रहे। उनमें बहुत से चोर, ठग, स्मगलर, बेईमान, रिश्वतखोर, घुसे बैठे हैं। जनता कटघरे में खड़ी है। इन सब खतरों से त्रस्त होकर हम कहां जा सकते हैं? हमें त्रस्त

होना ही नहीं है। हमें इन सब खतरों को बुद्धि बल, एकता, सूझबूझ, प्रबल आत्म शक्ति और कठोर नीतियों से सामना करके अपने देश को बचाना है। हर देश भक्त भारतीय को जागरूक रहना है। यह आज के युग की चुनौती है। शत्रु के रूप और वेष अनेक हैं। पहचान की बुद्धि हममें होनी चाहिए। तसलीमा ने बंगलादेश का जो मुखौटा दिखाया वह मुखौटा हिन्दुस्तान में कहीं भी बनने नहीं देना है। इसी दृढ़ प्रतिज्ञा को लेकर हर भारतीय को चलना है। देश को बचाना है। आज यह परिस्थिति जो बन चुकी है उसे पहचान कर हमारे कदम बढ़ने चाहिए।



धारा के विरुद्ध

मानव स्वभाव ऐसा है कि चित्रपट्ट पर चल रहे किसी नाटक के पात्रों से भी स्वयं को इस तरह जोड़ लेता है कि पात्रों में कौन अच्छा है उसके प्रति सम्वेदना, कौन खराब है उसके प्रति उपेक्षा, कौन दुष्ट है उसके प्रति घृणा, कौन गुणवान है उसके प्रति श्रद्धा होने लगती है। यह तो नाटककार और नाटक खेलने वालों की योग्यता है कि आप कभी रोने लगते हैं, कभी पुलकित होने लगते हैं, कभी दुखी हो जाते हैं। मानो वह नाटक न हो, सचमुच की घटना हो। नाटक के पात्रों से जैसे हमारा बड़ा गहरा सम्बन्ध हो। हालांकि हम जानते हैं यह नाटक है सचमुच की घटना नहीं है। सचमुच की घटना हो, कही दूरदराज जगह पर हो, तो एक सेकिण्ड में भूल भाल जाएगा और हम अपने काम में व्यस्त हो जाएंगे। T.V. एपिसोड आज जो हुआ, उसके आगे क्या होगा। इन्तजार लगी रहती है। 'आगे क्या हुआ जानने की।' यह लगाव क्यों ? एक नाटक या उपन्यास पढ़ने लगते हैं। डूब जाते हैं। कई बार सारी-सासी रात पढ़ते रहते हैं जब तक कि पूरी पुस्तक समाप्त न हो जाए। जबकि इस सत्य से हम अवगत होते हैं कि यह मात्र नाटक है किसी लेखक की कल्पना है। बेशक कल्पना सत्य के आधार पर होती है। जैसी-जैसी घटनाएं होती रहती है उनका मस्तिष्क में आधार होता है। पर फिर भी सत्य नहीं होता। हमारा यह लगाव, यह उत्सुकता, यह आगे जानने की इच्छा इस बात को व्यक्त करती है कि यह जानते हुए भी कि यह संसार मिथ्या है, नश्वर है, असत्य है हम अपना मोह, अपना लगाव, अपनी लिप्सा को रोक नहीं सकते। हम प्रवाह में बह जाते हैं। इसी तरह इस संसार को कोई मिथ्या कहे, असत्य कहे, नश्वर कहे हम आंखों के आगे बिछे सम्बन्धों को, रिश्तों को नहीं नकार सकते। हमारी ममता, हमारा अपना मन उन सबसे हमें जोड़े रखता है। चाह कर भी हम अपने परिवेश से स्वयं को काट नहीं सकते। जो उदासीन, निराश होकर काटना चाहते हैं वह घरों से भाग जाते हैं। जंगलों वनों की खाक छानते हैं। किसी ऐसे गुरु की तलाश में रहते हैं जो उन्हें ठीक मार्ग बताए।

सत्य की खोज कराए जीवन का सत्य बताए। इसी खोज में निकले लोग अपनी तलाश में जैसा-जैसा अनुभव हुआ उसी तरह से उन्होंने स्वयं को दूसरों के आगे प्रस्तुत किया। इसी से भिन्न-भिन्न मत मतान्तर बनते चले गए। मीरा ने कृष्ण में पति को देखा भगवान को देख उसी पर समर्पित हो गई। सूरदास को बाल कृष्ण भा गए। उनके नयन ज्योति न होते हुए भी कृष्ण का सांवला सिलौना बाल रूप और बाल खेलें जीवन का परम सत्य बन गई। बुद्ध ने मानव कल्याण में ही ब्रह्म का दर्शन पाया उनके जीवन का ध्येय वही हो गया। इस तरह किसी भी महामानव को जीवन पलटने पर अपने निजी अनुभूतियों ने दिशा दी।

ऐसा सब होने से पहले जो माया जाल हमारे आगे बिछा होता है उससे किनारा कर सकना कठिन लगता है। हम नदी के प्रवाह के साथ बहते चले जाते हैं। परिणाम नहीं सोचते। इसीलिए नदी का प्रवाह हमें जहां धकेल देता है हम वहीं के होकर रह जाते हैं। धारा के विरुद्ध जाना हमारे वश में नहीं रहता। और जब ईश्वर की तरफ मुड़ने की बात आती है तो धारा के विरुद्ध चलने की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। यही कठिनाई हर साधक का पथ रोकती है। जो धारा के विरुद्ध चलने में सफल हो वही आत्म संयम से जीवन की धारा बदल सकता है अन्यथा नहीं।



मैं ईश्वर का, ईश्वर मेरा

मानव ईश्वर के साथ अपना सम्बन्ध दो तरह से जोड़ता है। एक कि ईश्वर मेरा है और दूसरा मैं ईश्वर का हूँ। कहने में कोई विशेष अन्तर नहीं लगता पर वास्तव में दोनों विधाओं में बहुत अन्तर है। जब हम कहते हैं ईश्वर मेरा है, तो हम ईश्वर को अपने ढंग से प्रयोग में लाने का प्रयत्न करते हैं। मानों ईश्वर न हुआ कोई मुण्डु हो गया। हम पल-पल कोई न कोई फरमाईश करते ही रहते हैं- हे ईश्वर मेरी रोटी अच्छी बन जाए। हे ईश्वर मैं बिजली खुली छोड़ आया हूं पावर हाऊस से बिजली बन्द हो जाए। हे ईश्वर पानी बरसाना मेरे खेत हरे हो जाएं। हे ईश्वर पानी मत बरसाना मेरे बर्तन पक जाएं, कपड़े सूख जाएं। यह छोटी-छोटी बातें हैं। हम बड़ी बातों में ईश्वर को कहते हैं युद्ध में दुश्मन की हार हो हमारी जीत हो। एक तरफ अल्लाह हूं अकबर दूसरी तरफ हर-हर महादेव का घोष हो रहा है। दोनों एक ही रहवर को पुकार रहे हैं एक दूसरे के विरुद्ध। चोर चोरी करने जाता है देवी माता को मत्था टेक कर जाता है मैं चोरी करने में सफल हो जाऊं किसी को पता न लगे। यहां तक कि डाकू, स्मगलर, कातिल सब गुहार लगाते हैं मैं अपने मिशन में सफल हो जाऊं। जब हम ऐसा सोचते हैं ईश्वर मेरा है तो सारे काम उसे सौंप कर स्वयं को सारी सजाओं से बचा लेने का प्रयत्न करते हैं।

परन्तु जब हम सोचते हैं मैं ईश्वर का हूँ। तो हम उससे पल पल कुछ मांगते नहीं। उसकी व्यवस्था पर विश्वास करते हैं। मैं ईश्वर के प्रति क्या करूं। मेरे पास क्या है जो मैं उसे दे दूँ। ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए कौन से काम करूँ। उसे याद रखूं, ऐसा कोई कर्म न करूँ जिससे वह अप्रसन्न हो। वह तो मालिक सबका है उसके बच्चों की सेवा करूं। उसको अन्न खिलाऊँ, सर्दी में ठिठुर रहे हैं तो वस्त्र दूं। वह तो सबका है, सब में है जरूरतमंदों की सेवा करूं कि वह प्रसन्न हो। उसकी आज्ञा का पालन करूं। अपने विचारों में पवित्रता लाऊँ, सात्विक जीवन जीऊँ। बुराईयों से ऊपर उठूं। बड़ों की सेवा करूँ।

वास्तविकता यह है कि जब हम उससे दूर होते हैं तो उसे अपना खिलौना मानते

हैं जब हम उसके पास होते हैं हम उसके हाथ का खिलौना बन जाते हैं। उसे रिझाने में अपने को धन्य मानते हैं।

वह तो न पास है न दूर वह तो कण-कण में व्याप्त है। जब पुकार तब हाजिर। हम अभिमान करें वह तो अभिमान करके दिखाता नहीं। चाहे गालियां निकालो चाहे स्तुतिगान करो। सच तो यह है कि गाली निकालेंगे तो हमें स्वयं को लगेंगी, स्तुति करें तो हमें स्वयं को शान्ति सुख सन्तोष मिलेगा। इसी सोच से कि ईश्वर हमारा है या है ही नहीं अथवा ईश्वर सर्वत्र वर्तमान है सबका है और हम उसके हैं। मानव की पूरी सोच बदल जाती है। जीवन की पूरी संहिता ही पलट जाती है। यदि हम उसे अपना नौकर बनाते हैं तो हालत हमारी ही खस्ता होती है क्योंकि वह तो वही करेगा जो ठीक है, सत्य है हितकर है। जब हम उसके अधीन हो जाते हैं तो वह हमें सब बुराईयों से, कष्टों से, आपदाओं से बचाने वाला बन जाता है। उसको समर्पित होकर मानव को मृत्यु भी आ जाए तो भी उसका वरदान मानकर उसे स्वीकार किया जा सकता है। चित्त में बिना किसी विक्षेप के। ईश्वर को अपने अधीन करने वाला अभिमानी चैन की नींद कब सोया।



ईश्वरीय सृष्टि की जीवन्तता

हमारे देश में बहुत से त्योहार हैं। जिनमें ईश्वर के साथ-साथ हम जाने कितने पशु पक्षियों, कीड़े मकौड़ों, पेड़ पोधों की भी पूजा करते हैं। यहां तक कि हम सर्पों की भी पूजा करते हैं। जब हम कहते हैं पेड़ पौधे में भी जीवात्मा होती है तो उनके पास बोलने को जिह्वा हो न हो, महसूस करने की समर्थ अवश्य होती है। लाजवन्ती का पौधा हाथ लगते ही सकुचा जाता है। कई बार किसी महापुरुष के आते ही पेड़ों पर पत्ते, फल, फूल आने लगते हैं मानो प्रसन्नता से खिलखिला उठे हैं। पशु हो या पक्षी प्रेम की भाषा को बिना बोले समझते हैं। कुत्ता ऐसा पशु है जो मालिक के प्रेम के कारण अपने प्राण तक न्यौछावर कर देता है। गाय, घोड़ा तो घरेलू पशु हैं जो लोग रखते हैं वह जानते हैं कि यह कितने प्रेम की भाषा समझने वाले होते हैं। प्रेम के वश में तो खूंखार से खूंखार जानवर भी मेमना बन जाता है।

जोल कैम्प में वेद मन्दिर की गय्या बड़ी दर्शनी हैं। वहां रहकर ऐसा पाया कि वेद मन्त्रों का उच्चारण सुनते-सुनते जो दूध वह देती है उस दूध का स्वाद ही कुछ और है। दूध इतना बढ़िया है कि वर्णन नहीं किया जा सकता। ऋतम्बरा दीदी एक दिन अपने वक्तव्य में बता रही थी कि एक बार अमेरिका में एक अमेरिकन साधु जो प्रभुपाद जी के शिष्य थे वह उन्हें अपने आश्रम में ले गए। वहां भारतीय गांव सा माहौल था छप्परों वाले गाय घर बने थे जिनमें 12 गाय थी। सब के नाम रखे थे। वह महापुरुष एक गाय के पास गए थपथपाया और प्यार से बोले राधा, अतिथि आए हैं स्वागत नहीं करोगी। राधा ने प्रेम भरे नेत्रों से देखा और उसके स्तनों से दूध की धारा बहने लगे। नीचे बालटी रख दी। जब भर गई तो उठा ली गई। 25 बिल्लियां कतार में बैठी थीं। बालटी उनके आगे रख दी पर कोई बिल्ली अपनी जगह से नहीं हटी इस तरह सब गायों का दूध निकाला गया। सबको वितरित किया गया। तब उन्हें दिया आश्रम में और भी जानवर थे पर सबके सब नियम में बन्धे हुए।

ऋतम्भरा दीदी कह रही थी मुझे तो भूल ही गया कि मैं अमेरिका में हूँ मुझे तो भारत ही नज़र आ रहा था। सूरदास जी का साथी एक बहुत बड़ा सर्प था जो मन्दिर में उनके ही कक्ष में रहता था। इस प्रकार इन छोटे-छोटे उदाहरणों से ही यह समझ में आ सकता है कि प्रेम, स्नेह, सहानुभूति और अपनत्व की भावना जहरीले से जहरीले तथा खूंखार से खूंखार जीव जन्तुओं में भी हैं। दूसरी तरफ यदि हम इन चींटियों पर भी अपना गुस्सा दिखाएं तो वह भी बदला लेने में कम नहीं है। मुझे याद है एक बार बहुत चींटियां निकल आई तो मैंने उन्हें खत्म करने के लिए flit कर दिया। बस फिर क्या था हजारों लाखों टिड्डी दल की तरफ चींटियां पूरे घर में इतनी भर गई कहीं पांव रखने को भी जगह नहीं रही। फिर सब जगह आटा डाल-डाल कर रखा तो कितनी देर बाद चींटियां अपने आप चली गई। परोपकार की भाषा तो शेर भी समझता है। एक कहानी है कि एक अपराधी जंगल में छिपा था। वहां एक शेर के पांव में कांटा लगा था। कराह रहा था। अपराधी ने कांटा निकाल कर कपड़ा बांध दिया। और उसी शेर को भूखा रखकर अपराधी को जब उसके पिंजरे में डाल दिया गया तो शेर अपने पर उपकार करने वाले को पहचान गया। भूखा होने पर भी उसने उस अपराधी को नहीं खाया। कहने का तात्पर्य यह है कि जीव जन्तु को भी समझ होती है। उनके प्रति किए उपकार को वह भी पहचानते हैं। अतः उनकी अवहेलना करके उन्हें नकार न दें, हमारे देश में ऐसे-ऐसे त्यौहार हैं, जिनमें इन सब जीव जन्तुओं को भी मान्यता दी जाती है। अन्य त्यौहारों में, शुभाशुभ कार्यों में, पक्षियों इत्यादि को खाना चोगा देने का रिवाज है। सबको प्रतिष्ठा दी जाती है। अपना खाना खाने से पहले थोड़ा सा खाना निकाल दिया जाता है इन जीव जन्तुओं के लिए। ताकि कोई मानव को कष्ट न दें। सब अपनी-अपनी सीमा में रहें। दूसरे देशों में भी पशु, पक्षी जीव जन्तुओं से मित्र भाव से सह जीवन जीने वाले कई लोग हैं आज भी यहां इन्सान नहीं पहुंच सकता, वहां सन्देश देने के लिए कबूतरों का प्रयोग किया जाता है। जो लोग पक्षी प्रेमी हैं पक्षी उनके कन्धों पर बैठे रहते हैं। गुरु गोबिन्द सिंह जी के कन्धे पर बाज बैठा रहता था। और जो त्यौहार मनाए जाते हैं या त्यौहारों पर जो विशेष खाद्य इनके लिए निकाले जाते हैं उसके महत्व को भुलाया नहीं जा सकता। न ही हमें इन रीति रिवाजों को बुरा मानना चाहिए। सबमें भगवद् सत्ता है,

समझ है और सबसे मित्र भाव रखना मानव कल्याण के हित में है। हमारे ऋषियों ने बड़ी अच्छी तरह महसूस किया और सभी को मानव हिंत में सहायक बनाने का प्रयत्न किया। यह सब परमात्मा नहीं हैं पर परमात्मा इन सबमें है। और भावनात्मक सतह पर महसूस करने की शक्ति इनमें है। प्रतिष्ठा का महत्व यही है कि जब जीव मात्र को मानव अपना मित्र बना लेता है तो प्रकृति के यह सारे जीव जन्तु, पेड़ पौधे, पशु पक्षी मानव के दोस्त बनकर व्यवहार करने लगते हैं। किसी दुखी प्राणी को त्राण देने पर उसके हृदय से आशीर्वाद निकलता है। जब किसी जीव जन्तु को हम मारते हैं तो उसे पहले से ही मालूम हो जाता है कि आपसे उसके प्राणों को संकट है। वह प्राणी वाणी से हीन है पर उसकी अन्तरात्मा की कराह वातावरण में विष घोल देती है। और कहते हैं कि पर्यावरण के दूषित होने का यह भी एक कारण है।

कुछ त्यौहार हमारे अपने किन्हीं ऐतिहासिक लोगों की याद में मनाए जाते हैं। जैसे दशहरा, दीवाली, होली इत्यादि। यह त्यौहार इतिहास ही नहीं मानव को दिशा निर्देश भी देते हैं। नाम की महिमा को उजागर करते हैं। आपसी मेल मिलाप को बढ़ावा देते हैं। सामाजिक जीवन में एक दूसरे को एक दूसरे के पास आने का मौका देते हैं। रूठों को मनाने और भूले रिश्तों को फिर से नवीन रूप देने में सहायक होते हैं। नयी पीढ़ी को दिशा निर्देश मिलता है। सामाजिक जीवन में उत्साह बना रहता है। किसी राष्ट्र को जिन्दा और जागरूक रखने के लिए त्यौहारों का सहयोग प्राप्त करना राष्ट्र के हित में है। इसलिए त्यौहारों की महत्ता है। हां जो कई रीति रिवाज़ ऐसे हैं जो केवल मात्र पाखण्ड और झूठ पर आधारित है उनको समझना और उनका बहिष्कार करना, झूठ और पाखण्ड का खण्डन करना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। यह भी हमें अपनी दृष्टि में रखना चाहिए। और त्यौहारों का सुन्दर सौष्ठव रूप तैयार करना चाहिए।



बाहर और भीतर

महानगरों का जीवन देखकर लगता है यह दुनिया कितनी रंगीन है। आलीशान ऊंची-ऊंची इमारतें, झिलमिलाती तेज विद्युत की चमचमाती रोशनियां। ऐशो अशरत के सामान। सजे हुए जादुई बाज़ार। चौड़ी-चौड़ी सड़कों पर दौड़ती लाखों गाड़ियां, मोटरें, बसें। चमक-दमक के अनेकानेक सामान। आह हा कितने सुखी हैं इन महानगरों के लोग। आसमान पर उड़ते हवाई जहाज और जाने क्या-क्या ? कितने सुखी हैं यह शहरों के लोग। कितनी तेजी से चल रही है जिन्दगी। यह होटल, यह नाट्य शालाएं, यह सिनेमा घर सब कुछ बड़ा रोचक लगता है सचमुच कितने भाग्यशाली हैं यह सब।

क्या सचमुच जो दिखता है वह सब वैसा ही है ? यह लज़ीज़ खाने, यह इन्टर कान्टिनेन्टल होटल और बेइन्तहा भीड़। सब सही सलामत लगता है पर सचमुच क्या लोग बड़े सुखी हैं ? प्रश्न चिन्ह बहुत बड़ा है। क्योंकि जो ऊपर से दिखता है इसके भीतर बैठकर देखो। किसी भी घर में घुस जाइए, चित्र की दूसरी ओर का सत्य भी दीखने लगेगा। असन्तुष्ट, अतृप्त, सते हुए, अभावग्रस्त, तनाव से भरपूर, लोभ लालच में डूबे हुए, ईर्ष्या द्वेष से सने हुए, वहमों से ओतप्रोत लोग ही दीखेंगे। जीवन में ऐश्वर्य के सामान शारीरिक सुख भले ही देते हैं पर मनुष्य के भीतर का शैतान उसे सुखी होने नहीं देता। जब भारत में तलाक नहीं था शोषण तब भी था। सिसकते स्वर तब भी सुनाई देते थे। पर अब जब कि नारी ने अपने आप को खड़ा कर लिया है, वह चीत्कारें अब भी हैं केवल रूप बदल गया है। परिवार दिन प्रति दिन टूट रहे हैं। पुरुष और नारी के बीच के सम्बन्ध बिखर रहे हैं। कहीं बहुएँ जलाई जाती हैं कहीं सासें सताई जाती है कहीं पत्नी दुखी है कहीं पति अवसादग्रस्त है। कहीं बच्चे अपने ही माता पिताओं के विरुद्ध हैं, कही माता पिता ही अपराधी हैं। परिवारों का इकट्ठे रहना ही दूभर हो रहा है। नयी रोशनी चमक-दमक में युवा पीढ़ी के अपने रंग-ढंग हैं। शिक्षा या उपदेश या हित की बात कोई सुनना नहीं चाहता। तनाव में आज का बच्चा, युवा और बूढ़ा सभी है। व्यसनों में फंस जाते हैं जो उन्हें रास्ते पर लाना और भी दूभर है। जीवन इतना बिखर गया है कि कोई एक दूसरे का सहारा तलाश करें तो शायद ही मिले। चोर उच्चकों को भी तलाश रहती है कि देखें कहां घर में इक्का दुक्का लोग हैं। मौका पाते ही अपना कारनामा करने पहुँच जाते हैं। कोई

जाग गया तो कत्ल तक हो जाते हैं। अपराध वृत्ति दिन प्रति दिन उन्नति पर है।

आज पिता पुत्र, मां बच्चे या पति पत्नी तक के सम्बन्धों में इतनी कड़वाहट आ चुकी है कि कहीं भी कोई भी, कैसी भी दुर्घटना हो सकती है। दिन प्रतिदिन एक दूसरे के प्रति घटती वेदना ने सम्बन्धों को खोखला कर दिया है। पैसे का महत्व बढ़ गया है। दिखावे का जमाना आ गया है। कई जगह तो बूढ़े ही अपने परिवारों से अलग होना पसन्द करते हैं कि रोज़-रोज़ की किचकिच से त्राण पाएं। कई अपने बुजुर्गों को वृद्ध आश्रम की भेंट चढ़ा आते हैं। अपने घरों में माता पिताओं की यह दशा देखकर बच्चों के संस्कार दूषित हो रहे हैं।

ऐसे में कौन किसको क्या सिखाए ? यह आलीशान बंगले ऊपर से आलीशान होते हुए भी भीतर से खोखले हो जाते हैं। परिणाम घरों तक सीमित नहीं रहते। देश का हर बच्चा देश का प्रहरी होता है पर ऐसे वातावरण में कितने प्रहरी तैयार हो रहे हैं इसका अनुमान लगाया जा सकता है। इस चरमराते हुए सामाजिक ढांचे के कारण राष्ट्र की हानि होती रहे। देश की राजनीति दूषित होती है। होते-होते आज का यह जनता राज कितना भयंकर रूप ले चुका है इसका अहसास करना ही पड़ेगा। शीर्ष पर वह लोग आ चुके हैं जो जनता के हित की बात तो भूल ही चुके हैं। उन्हें अपनी निजी रंगीन दुनिया नजर आती है जिसके लिए वह ओछे हथकण्डों का प्रयोग करने से नहीं चूकते। बड़े-बड़े स्कैंडल स्कैम रोज़ उजागर होते हैं। पर अपराध को स्वीकार करके शार्मिन्दा होने की बजाए यह लोग जो उनके अपराध को इंगित करता है उसी की जान के शत्रु हो जाते हैं। चुनाव लड़ना अब केवल उन लोगों के बस में है जिनके पास पैसा है, दबदबा है, दूसरों को मूर्ख बनाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करने की कला है। अच्छे सुयोग्य लोग आगे नहीं आते उन्हें राजनीति की दलदल में फंसना कठिन लगता है। शरारती तत्वों के हावी होने से देश की नैया डावांडोल हो रही है। मार्ग सूझ नहीं रहा।

व्यक्ति-व्यक्ति के आचरण में कमजोरियों ने पूरे देश को जर्जित कर दिया है। ऐसे में जो लोग इन बेईमानों से टक्कर लेने को आते हैं यह किसी आचार संहिता को सामने रखे बिना, उन्हें हताहत करने को तत्पर हैं। यह दुर्दशा एक महान क्रान्ति के बिना संभल नहीं सकती। जनता कितनी कष्ट में है यह तो हमने हाल ही में होने वाले आन्दोलनों में देख लिया। क्या हाल किया रामदेव जी के आन्दोलन का और अन्ना हजारे जी के आन्दोलन का। जनता क्या चाहती है इसका स्पष्ट प्रमाण मिलने पर भी सरकार टस से मस नहीं हुई। अपने चाल चलन को सुधारने की बनिस्वत अहिंसक सत्याग्रह को कुचलकर सत्याग्रहियों को ही कटघरे में खड़ा करने का हर सम्भव उपाय किया गया। ऊपर से खूबसूरत और बड़ा न्यायकारी दिखने वाला

ढांचा भीतर से कितना खोखला, कितना भद्दा कितना बेईमान, कितना गद्दार है– अच्छी तरह दुनिया के सामने आ गया। तर्क से बुराई को जिताया गया। कानून की दुहाई से पथ भ्रष्ट किया गया पर वह दिन दूर नहीं जब यह औढ़े हुए मुखौटे पद दलित होंगे। भारत फिर से होश में आएगा। तथा देश की राजनीति फिर से सत्य पथ पर आरूढ़ होगी। जागृति की आवश्यकता है निरन्तर। जब-जब तन्द्रा में सोया मानव तब-तब आहत हुई मानवता। ऊपर की चमक-दमक से हटकर भीतर की वेदना की पहचान आवश्यक है। और आवश्यक है अपनी संस्कृति के गर्भ से उस संहिता का विमोचन जो मानव मन को मार्ग दिखाकर भीतर के वातावरण को शुद्ध बुद्ध प्रबुद्ध कर सके। तब झोंपड़ा भी गुलजार होगा जब सच्चे अर्थों में मानवता जीवित हो उठेगी।



विश्वास

बिनू विश्वास भक्ति नहीं, भक्ति बिन द्रवहिं न राम
सम कृपा बिन पार्वती सनेहूँ सुख नहीं आम

कहते हैं विश्वास से पत्थर भी पिघल जाते हैं। सबसे बड़ा है आत्मविश्वास। आत्मविश्वास खो दिया तो शेष क्या बचा ? आत्म विश्वासी मौत से भी विचलित नहीं होता। बिना विश्वास के मानव को कुछ प्राप्त नहीं होता। अनपढ़ धन्ना ने पत्थर से भगवान् को प्रकट किया। पत्थर से नहीं अन्दर के विश्वास ने उसे ईशमय बना दिया। विश्वास के बल पर सूरदास के अन्धे नेत्र बाल कृष्ण को अपने में स्पष्ट देखते रहे। तुलसीदास राममय बन गए, मीरा कृष्णमयी हो गई, चैतन्य महाभाव में समा गए, रामतीर्थ सचमुच के तीर्थ बन गए। संसार के ऐश्वर्य को तिलांजलि देकर किसी न किसी रूप में ईशमय होकर यह सब लोग अमर हो गए। शिव कल्याणकारी हुए, पार्वती सती बनी विश्वास के बल पर। और जब देश का विश्वास डगमगा गया तब दयानन्द ने ईश्वर के सर्वश्रेष्ठ, अनादि अनन्त, निराकार का सम्पादन करके भटकती विश्वास की नैया को किनारे लाने का भरसक प्रयत्न करके ईश्वर क्या है उसका सच्चा स्वरूप वेदों से निकाल कर जनता को प्रदान किया। अपने विश्वास के कारण दयानन्द अविचलित होकर अविश्वासियों के प्रहार सहते रहे पर सत्य का प्रकाश करने से नहीं चूके। विश्वास के बल पर प्राणी अपने को अग्नि में झोंक सकता है मौत को गले लगा सकता है। विश्वास असम्भव को सम्भव बना देता है। प्रबल प्रेम के पाले पड़कर प्रभु को नियम बदलते देखा। और आज विश्वास के बल पर अपनी मन की बात विमल विमर्श के माध्यम से कह सकी। यदि न कहती तो मृत्यु के समय मुझे यह कष्ट होता कि कुछ था जो धरोहर के रूप में दूसरों को दे सकती थी, नहीं दिया, अच्छा नहीं किया। मेरा यह प्रयास कईयों को असुविधा प्रदान करता रहा पर मनुष्य के पास बड़ा सीमित समय होता है और उसी सीमित समय में वह

जो कुछ कर सकता है अवश्य करना चाहिए। बशर्ते कि हमारी नीयत जन कल्याण की, उन्नत मार्ग पर चलने की हो। विश्वास ने हकीकत को बलि देने की प्रेरणा दी। विश्वास ने भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरु, चन्द्र शेखर आजाद, विस्मिल, अश्फाक, उल्लाह अनेकानेक शहीदों को फांसी पर झूल जाने को उद्दत किया। विश्वास के बल पर सेनाएं देश की रक्षा में तैनात होकर प्राणों की बलि देती हैं। विश्वास ने गांधी, जवाहर, सुभाष बनाए, काला पानी की सजा भोगने वाले वीर सावरकर और उनके साथी विश्वास की सन्तान थे। जिनका गौरव गान और अहसान पीढ़ियों तक भुलाया नहीं जा सकता। आज के झूठे, राजनीतिबाज भले ही अपने शहीदों को देश भगतों को गलत साबित करने का प्रयत्न करें पर विश्वास पर टिकी आस्थाएं और बलिदान व्यर्थ नहीं होते, भुलाए नहीं जा सकते। विश्वास हारता नहीं, सदा संघर्ष करता है और जीवित रहता है।

विश्वास की जय हो।



कर्म का निर्धारण

गीता में भगवान कृष्ण ने अर्जुन को विशाद में ग्रस्त देखा कि युद्ध में सामने खड़े पितामह, भाई बन्धु, रिश्तेदार उससे भिड़ने को प्रस्तुत हैं तो विचार आया कि यह सब तो अपने हैं, इन्हें मारकर राज्य मिल भी जाए तो उसे सुखपूर्वक क्या भोग सकूंगा ? गाण्डीव छोड़ दिया और हाथ जोड़ कर संन्यासियों की भाषा बोलने लगा। भगवान कृष्ण ने उसकी भाषा को क्लीव (हिजड़ों) की भाषा कहा और कहा कि कायरों की तरह युद्ध से मुख मत मोड़। धर्म की स्थापना और अधर्म के विरोध में तुम्हें युद्ध करना है। आत्मा की अमरता कर्मयोग की परिभाषा से अवगत करा कर अर्जुन के गिरते मनोबल को पुनर्जीवित करके युद्ध के लिए तैयार किया।

आज हमारे जीवन में भगवान् कृष्ण का यह उपदेश क्या कहता है ? क्या घर-घर में महाभारत की प्रेरणा देता है। भगवान् का अपना और पाण्डवों का जीवन निरन्तर कठिनाइयों और संग्रामों में गुजर चुका था। पाण्डव अपने चचेरे भाईयों को सदा अपनाते आ रहे थे जब कि वह लोग पाण्डवों को मार डालने का प्रयत्न हर समय करते रहे। फिर भी पाण्डव उन्हें क्षमा करते रहे, वन-वन घूमते रहे फिर भी जब कभी भी कौरवों पर विपदा आई पाण्डव उनकी रक्षा को दौड़ते रहे। इसी तरह कृष्ण अपने मौसेरे भाई शिशुपाल को हर बार क्षमा करते रहे। कंस के जुल्म भी सहते रहे। पर जब सीमा न रही, सद् व्यवहार का अर्थ सामने वाले की समझ में आया ही नहीं तो कृष्ण ने उसको उसका असली चेहरा दिखा दिया। अधिकार की, सद् व्यवहार की लड़ाई कभी समाप्त नहीं होती। अधिकार की लड़ाई तो हम सब करते हैं पर कर्त्तव्य कहां पर क्या है यह याद नहीं रखते। वेदों ने कर्त्तव्य अकर्त्तव्य के विषय में जो कहा उसे नहीं टटोलते। हम कहां गलत हैं इस तरफ हमारा ध्यान नहीं जाता। हम उपदेशक तो अच्छे हैं पर यह उपदेश हम औरों को देते हैं जब अपनी बारी आती है तो वह उपदेश कहीं नहीं होते। आज केवल मात्र अधिकार की लड़ाई का बोल बाला है। अपनी योग्यता का ध्यान नहीं आता और यह युद्ध हर घर में हर शहर के हर कोने में हो रहा है। केवल अधिकार की लड़ाई ही जीवन में पूर्णता नहीं आने देती। न ही घर-घर में हो रहे महाभारत का कहीं अन्त दृष्टिगोचर होता है। इस एक तरफा लड़ाई में गीता की उदाहरण तो हम देते हैं पर यह कभी नहीं सोच पाते कि हमारा आचरण क्या कृष्ण जैसा है। क्या अर्जुन जैसा है? हमने

समाज को, राष्ट्र को क्या दिया। इस सामने पड़े संसार का हम क्या कल्याण कर पाए? कृष्ण तो शिशुपाल की 100 गलितयां माफ कर सकते हैं। हम एक छोटी सी अवहेलना भी झेल नहीं पाते। हमारे पास जो है उसमें से जरा सा भी किसी को दे नहीं पाते। कोई कितने कष्ट में हैं देखते हुए भी कितने लोग हैं जो सहायता के लिए आगे बढ़ते हैं। हममें इतना सब्र भी नहीं है कि सामने वाले को उसकी गलती का अहसास और उद्‌बोधन उसके अपने विचार से हो सके। हमें कोई कृष्ण प्रेरणा देने नहीं आता हमें हमारी द्वेष की अग्नि जलाती है तो हम मित्र को भी शत्रु मान लेते हैं। अच्छाई और बुराई का सूक्ष्म फर्क समझ में नहीं आता। तो हम बड़ी-बड़ी नहीं छोटी-छोटी बातों पर भी अपना आपा खो देते हैं। टी.वी. में तुमने कौन-सा नाटक देखना है, मैंने कौन सा देखना है महाभारत यहीं से शुरू हो जाता है। दूसरे की अरुचि, आवश्यकता और महत्त्व का कोई स्थान नहीं। एक दूसरे के प्रति प्रतिशोध का भाव बात-बात में बना रहता है। जिसमें हम उन लोगों को जो हमारे बड़े प्यारे मित्र हो सकते हैं, शत्रु बना लेते हैं। गीता की शिक्षा हम सब जगह फिट कर लेते हैं। गीता का कर्म योग नहीं केवल इतना कि राज्य पाठ के लिए कृष्ण ने अर्जुन को युद्ध के लिए तैयार कर लिया। इस महाभारत के पीछे की विचार की गहनता न तो हमारी समझ में आती है, न ही समझने की आवश्यकता महसूस की जाती है। पर आज की राजनीति को देखकर इस समस्या की गहनता स्पष्ट हो जाती है। लोकराज है पर चन्द लोग जो वोट लेकर ऊपर पहुंच जाते हैं वह स्वयं को हर गलत कार्य करने के लिए स्वयं को स्वतन्त्र मानकर मनमानी द्वारा देश का जो अहित कर रहे हैं उसके लिए अर्जुन रूप प्रजा की चेतावनी है कृष्ण की कि इस दूषित व्यवहार का आज ही निराकरण करो, अन्यथा देश रसातल को चला जाएगा। अपने निजी छोटे-छोटे स्वार्थों के लिए बात-बात पर झगड़ना इसका अर्थ नहीं है। उससे घरों में भी समय मनीषियों में भी और राष्ट्र में भी अराजकता फैलती है यही पर हमें मनीषीयों की आवश्यकता है कि हम अपने कदम फूंक-फूंक कर रखें ताकि हमारा हर कर्म सर्व का कल्याण और स्वस्ति का हो। वेद वाक्यों को तथा कृष्ण भगवान के कथन को अपनी इच्छा से मोड़ तोड़ कर अपने लिए फिट कर लेना फिर बात-बात पर अनर्थकारी कर्म करने लगना, वांछनीय नहीं हो सकता। कर्म का प्रतिपादन सोच समझ कर, श्रेयस क्या है वही करना अभीष्ट है। अन्यथा गीता और वेदों के नाम पर अपना कर्म थोंपना भारी भूल होगी। यहीं पर हमें मनीषी लोगों का मन्तव्य ले लेना चाहिए। तथा कर्म को प्रतिपादन करने से पहले अच्छी तरह सोच-विचार लेना चाहिए। हमारा विचार अच्छा होगा तो दूसरा भी गलती करते-करते मार्ग पर आ सकता है ऐसा ही प्रयत्न होना चाहिए।



संग कैसा क्यों ?

'मानुष जस संगत करे तैसे पावे ढंग'

सुभद्रा पुत्र अभिमन्यु अभी गर्भस्थ थे तभी माता पिता की वार्ता में चक्रव्यूह में घुस कर युद्ध करने की कला को सीख गए। वैदिक शिक्षा में मनुष्य जन्म के सोलह संस्कारों में प्रथम संस्कार गर्भाधान से पूर्व ही कर लिया जाता है। गर्भाधान के अन्तर्गत तथा बाद में भी संस्कारों की शृंखला चलती है। क्योंकि आत्मा न बच्चा है, न बूढ़ा। वह सर्वदा एक रस है बच्चा बूढ़ा तो शरीर होता है। संस्कार सुसंस्कृत करते हैं। संस्कार जीवित रहें, उसके लिए हम जीवन भर कैसा संग प्राप्त करें कि हमारे उत्तम संस्कार ही हमारे जीवन की धुरी बन जाएं, जिससे हमारे जीवन का चक्र निरन्तर उत्तम और प्रथम बना रहे। सत्संग का नाम दिया गया उस संग को जहां हमारा मन मस्तिष्क प्रक्षालित होकर पावन निर्मल बनता है। आत्मा का अपना स्वरूप तो शुद्ध पवित्र है जो भी बुराईया आती हैं वह कुसंग से आती है। संग माता-पिता से ही प्रारम्भ हो जाते हैं। जैसे माता-पिता होते हैं, वैसे ही बच्चे भी बनते चले जाते हैं। मनुस्मृति में मनुष्य में चार प्रकार की जातियों का वर्णन है पर यह साफ कहा गया कि यह जातियां जन्मगत नहीं कर्मगत होती हैं। पर लोहार का बेटा लोहार, किसान का बेटा किसान क्यों हो जाता है, संस्कारों के कारण। जैसा काम माता-पिता को करते हुए बच्चे देखते हैं वह ही उनके संस्कारों में आ जाते हैं। और फिर परम्परा सी बन्ध जाती है। कोई व्यक्ति आतंकवादी होगा तो आवश्यक है कि उसके आस-पास ऐसे ही विचारों के लोग होंगे तो उसे उन्हीं विचारों में सत्य नजर आता रहेगा। रत्ना डाकू ने कभी नहीं सोचा होगा की उसके डाकू जीवन से अच्छा जीवन हो सकता है, पर नारद जी का संग मिला तो उसकी आंखें खुल गई, बोध हो गया। डाकू पना छूट गया। यह सत्संग का प्रभाव है। अच्छाई है और बुराई का अन्तर समझ में आया। कोई पूर्व संस्कार उदय हो गए और डाकू वाल्मिकी ऋषि में रूपांतरित हो गया। इसी परम्परा में अंगुलिमान भगवान् बुद्ध का श्रमण बन गया। मुंशीराम स्वामी दयानन्द के सम्पर्क में श्रद्धानन्द बन गए आज भी ऐसे बहुत लोग हैं जिनका जीवन सत्संग से पुण्यमय बन गया। प्रबल संस्कार निर्बल संस्कारों का नाश कर सकते हैं। इसीलिए वंशगत संस्कारों में भी अन्तर आ जाता है। रविदास नीच कुल में पैदा होकर

महान भगवत भगत बन गए, जिससे उनके सम्पर्क में आने वाले कई लोगों का जीवन धन्य हो गया। बकरों का गला काटने वालों को बकरे की करुण ध्वनि सुनाई नहीं देती, वह जीवन भर बकरे काटते हैं, क्रूर हो जाते हैं। पर महावीर स्वामी जैसे भी थे जिन्हें पांव के नीचे एक च्यूंटी को मारने का भी मन नहीं होता। वह दूसरों को जीवन देने की बात सोचते हैं लेने की नहीं। एक डरपोक व्यक्ति सबके आगे गिड़गिड़ाता ही रहता है, दयनीय बना रहता है। पर एक शूरवीर मौत से भी जा भिड़ता है। वीर के संपर्क में वीर बनेंगे और कायर के सम्पर्क में कायर पैदा होंगे। एक विद्वान का संग हमें भी योग्य बना देगा और मूर्ख की संगति में मूर्खता ही आएगी।

हम जीवन का लाभ प्राप्त करें, विद्वानों का संग ही करना पड़ेगा। जो विचारशील, सत्य का ज्ञाता, आचरण का धनी होगा उसमें आत्म विश्वास होगा। आत्मविश्वास का बल मनुष्य को शक्तिशाली बनाता है ऐसे व्यक्ति का सम्पर्क दूसरों को पावन करने में समर्थ होता है। स्वयं नहीं गिरता, स्वयं को सम्भालना सीख जाता है क्योंकि उसका भीतर का शिक्षक जागरूक होता है। वह परम प्रभु को हमेशा अपने अंग-संग रखता है। जो ईश्वरीय शक्ति को अंग-संग रखता है उसमें चरित्र की दृढ़ता होती है। बदलते वह हैं जो चरित्र के निर्बल होते हैं। संग उसी का करें जिसका चरित्र निर्मल पवित्र और ज्ञान युक्त हो, दृढ़ हो। फिर ऐसा संवल पाकर कोई क्यों गिरेगा। ऐसा व्यक्तित्व महान होगा, उससे टकरा कर बुराईयां चकनाचूर हो जाएंगी। उसके घाट पर सिंह भी अपनी क्रूरता छोड़ देगा, सर्प भी अपना दंश समेट लेगा, कपटी भी छल से घृणा करने लगेगा, कामी भी संयमी होने के प्रयत्न में लग जाएगा, अज्ञानी मूर्ख भी ज्ञान प्रकाश में ज्योतित होने लगेगा। तपस्वी के समक्ष सारी दुर्बलताएं अपना अस्तित्व त्याग देंगी। वह स्थान भी पवित्र हो जाएगा। तीर्थ बन जाएगा, जहाँ ऐसे ऋषि का निवास होगा। हम कैसा बनना चाहते हैं ? बनना चाहते भी हैं अथवा नहीं। ज्ञान गंगा, शुद्ध आचरण, पावन चरित्र, विचार युद्धतर का सम्पर्क ऐसे स्नान मिलने से कौन अशुद्ध पापी रह सकता है। हमें कैसा बनना है कुछ तो हमारी आन्तरिक इच्छा। कुछ ईश्वर कृपा और कुछ पावन वातावरण ही बदल देगा। कौन नहीं चाहता कि वह इस संसार में प्रथम हो पूजनीय हो, कीर्ति मान हो सर्वप्रिय हो, ज्ञानवान् हो, कर्मशील हो, सत्यानुगामी हो। चाहते सभी हैं पर संग उन्हें अच्छा न मिले तो जीवन उलटी दिशा में घूम जाता है। अतः हम कैसा संग करें क्यों करें, कैसे करें यह हमें सोचना है। यह पक्का है कि जैसी संगत करेंगे, वैसे हम बनेंगे।



व्यवहार और कर्त्तव्य

एक कथा है कि एक दो चार दिन पहले पैदा हुआ मेमना नदी पर पानी पीने गया। एक भेड़िये ने उसे देखा। उसके पास आकर बोला –अरे मेमने, तुम्हें शर्म नहीं आती तुमने नदी का पानी झूठा कर दिया। मेमना बोला – जनाब पानी आपकी तरफ से मेरी तरफ आ रहा है। मैं आपका पानी झूठा नहीं कर सकता। भेड़िया गर्ज कर बोला– तुमने पिछले साल मुझे गालियां निकाली थीं ठहर तुम्हें खाता हूँ। मेमना फिर बोला–जनाब मैं पिछले साल पैदा ही नहीं हुआ था। गाली कैसे निकाल सकता हूँ। भेड़िया फिर गरजा –अच्छा तो गालियां तेरी मां ने निकाली होगी और फिर झड़प्पा मार कर मेमने को खा गया।

टी.वी पर ब्रह्म कुमारी जी शिवानी जी को हम प्रायः सुनते हैं। उनके विचार हमें अच्छे लगते हैं पर कुछ लोग जो भेड़िए होते हैं वह दूसरों को मेमना समझकर ऐसा व्यवहार करते हैं। ऐसे में विचार के क्षेत्र में उनका सूक्ष्म विश्लेषण कि हम व्यवहार में पहले अपने दोष को दरुस्त करें और अपनी हर कमजोरी को अपने से ही दूर करें फिट नहीं बैठता। आज भारत के बहुत से लोग पाकिस्तानी जेलों में सड़ रहे हैं। उन पर झूठे दोष लगा–लगा कर उन्हें मुसलमान बनाकर भी उनसे पशुवत व्यवहार किया जाता है। ऐसे में उन कैदियों को क्या सन्देश दे सकते हैं। अथवा अपने ही देश में अपनी ही सरकार, अपनी गल्तियों को सुनकर सहन नहीं करती तथा बाल की खाल उतार कर जिस प्रकार अन्ना हजारे या रामदेव जैसे लोगों से सरकार व्यवहार कर रही है शिवानी जी उनके लिए क्या कहेंगी। क्या खून ठण्डा करके जुल्मों को सह लिया जाए और स्वयं को ही दोषी करार दे दिया जाए। शिवानी जी का कहना वहां तक ठीक है जहां सभ्य समाज में सभ्य ढंग से एक दूसरे से पेश आया जाता है। पर जब स्थिति विषम होती है और बिना कारण नीचा दिखाने के लिए इतने बड़े पैमाने पर जुल्मो सितम किया जाता है। वहां किस ढंग से समस्या को सुलझाया जाए ? आतंकवादी जब मानव बम बन कर आ जाते हैं और तबाही मचाते हैं तब क्या कियां जाए ? क्या दुष्टों को चुन–चुन कर ढूंढ़ कर मार डाला जाए या अपने दोष परखे जाएं।

जब हम दोस्त हैं, रिश्तेदार हैं, एक दूसरे के भला चाहने वाले हैं गलत फहमी में पड़कर दूसरे को गलत समझकर फजूल में झगड़े पैदा करते हैं, अपना मानसिक विश्लेषण करना और ऐसे ढंग से दूसरे के मन के भ्रम को समाप्त कर देना कि कोई भ्रम आपस में न रहे। शिवानी जी की बात सही बैठती है। वहां भी कई बार तर्क का सहारा लेना पड़ जाता है। पर बड़े पैमाने पर ऐसी समस्याएं सुलझाने से काम नहीं चलता। न ही मेमने बनकर भेड़ियों को छूट दी जा सकती है कि भेड़िया जी जब आए अपना पेट भर कर और देश को तबाह करके चले जाए या हमारी धरती पर ही अधिकार जमा ले। ऐसा तो हजारों वर्ष से देखते आ रहे हैं, लुटेरों को देश लूटते देखते हुए। आज कोई उठता है कहता है सीमा से सेनाओं को हटा लो। उनका कहना मानेंगे तो शत्रु हमारे घरों में घुस आएंगे और तबाही मचाने को स्वतन्त्र हो जाएंगे। शिवानी जी ऐसी स्थिति में देश भक्तों को क्या करना चाहिए। इस विषय में भी कुछ कहिए। वैदिक धर्म कहता है राष्ट्र की रक्षा करना हमारा प्रथम कर्त्तव्य है राष्ट्र की रक्षा के लिए की गई हिंसा भी अहिंसा होती है क्योंकि दुष्टों को समाप्त करना मानव धर्म है। हमारे आदर्श राम और कृष्ण जहां प्रेम और सद्भाव का पाठ पढ़ाया वहां बड़े-बड़े युद्धों में स्वयं भी आगे होकर युद्ध किए। हमारे देश में बहुत से देश प्रेमियों ने अपने प्राण गंवाए। क्रान्तिकारी होकर भी और अहिंसक होकर भी। यदि उन लोगों ने देश के लिए ऐसा ना किया होता तो हम आज भी किसी न किसी की गुलामी कर रहे होते। और आज भी यदि हम जागरूक न रहे केवल साधुगिरी ही करते रहे तो हम उसी दुर्दशा में वापिस पहुँच सकते हैं। आज व्यवस्था परिवर्तन की बात जब करते हैं तो जानते हैं इतने बड़े परिवर्तन सहज में नहीं हो सकते। जाने कितने शीश मिटेंगे, कितने देश भक्त बलिदान होंगे तब युद्ध नीतियों से त्राण मिलेगा। भेड़ियों को सिंह बनकर मिटाएंगे तभी देश निरापद होगा। तभी किसान आत्महत्या करना बन्द करेंगे, तभी जनता न्याय पाएगी तभी दुष्ट दुष्टता छोड़ेगा। तभी देश का धन लूटने वाले सीखचों में बन्द होंगे। आज हमें संन्यासी भी वो चाहिए जो सारे मोह त्याग कर क़ेसरिया पहनकर, देश के संन्यासी बन जाएंगे। बचपन में हम गाते थे-

भीख मांगने से वा दर दर
आजादी मिलती ही घर घर घर
लानत ऐसी आज़ादी की
आजादी तीरों से सींचो
खींचो कमान खींचो

केसरिया वाना पहन लिया
तो फिर प्राणों का मोह कहां
जब बने देश के संन्यासी
तो नारी बच्चों का मोह कहां

आज संन्यासी हिमालय की गुफाओं में गुम होने के नहीं संन्यासी वही है जो अपना छोटा परिवार छोड़कर देश को अपना परिवार बना लेता है। और घर-घर अलख जगाता है–उठो देशवासियों उठो। संभालो देश को, अन्यथा चील कौओं की तरह चारों तरफ से शत्रु हमारे देश पर घात लगाए बैठे हैं। उठो कमान सम्भालो और भीतर तथा बाहर के शत्रुओं का दलन करो। मां की पुकार यही है। मोह की नींद त्याग कर होश में आओ। कृष्ण का गीता गान जिस धर्म और अधर्म को समझाना चाहता है उसे सुनो।

हां नित्य प्रति के अपने व्यवहार में शिवानी जी आपकी बात परस्पर प्रेम स्वभाव को बढ़ाने वाली है और पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक एकता के लिए हमारा विचार आपके विचार से साम्यता रखता है। देश की आन्तरिक शक्ति के लिए यह आवश्यक है।



लालच की भावना

मनुष्य में लालच की भावना जब बलवती हो जाती है तो वह चोरी करता है। सेंत लगाकर चोरी करने वालों की बात छोड़िए वह तो प्रोफेशनल चोर हुए। घरों के अन्दर लोग घर के लोगों की ही चोरी कर लेते हैं। छोटी-छोटी चीज़ें चुरा लेते हैं, छुपाते फिरते हैं, झूठ बोलते हैं और समझते हैं कि सामने वाले को बेवकूफ बना लिया। सामने वाला या तो आपकी चोरी पकड़ कर आपको ढीठ करें, लड़ाई करें या चुप रहे। आप समझते हैं आपने सामने वाले को बेवकूफ बना लिया पर वास्तव में आपने अपनी छवि को धूमिल कर दिया। इस ओर आपका ध्यान ही नहीं जाता। सामने वाला आपको कुछ नहीं कहता क्योंकि आप बड़े शातिर हैं उल्टा उसी को झूठा साबित कर दोगे पर वह आप पर फिर विश्वास नहीं करेगा तथा दूसरों को बताने से भी नहीं चूकेगा। आपकी आदत और आपके झूठ को सब को बता सकता है। आप सब की नज़रों में चोर हो जाएंगे। घर का इन्सान भले ही आपकी बदनामी न भी करें। पर आप अब चोरी की चीज़ को खुले आम इस्तेमाल नहीं कर सकते। एक और बात है जब आप चोरी कर लेते हैं तो कई बार दूसरी जगह आपका दुगुना तिगना नुकसान हो जाता है। आपको अक्ल भले ही न आए पर चोरी के कारण परमात्मा किसी न किसी ढंग से सजा तो आपको देगा ही। आप बड़े चालाक हैं, किसी को मालूम नहीं होने देते पर आपके मन में अपराध भावना तो बन ही जाएगी। आपकी बुद्धि पर गहरा पर्दा पड़ा है। आपको अपने अंदर की आवाज़ सुनाई नहीं देती तो भी आपको शान्ति नहीं मिलेगी, खटका लगा ही रहेगा। आप अपनी नज़रों में भी गिर जाएंगे। अपने को ईमानदार सिद्ध करने में लगे रहेंगे। ऐसा प्रायः औरतें अधिक करती हैं। आदत से मजबूर होती हैं। पर ईश्वर की दृष्टि में कुछ भी छुपा नहीं रहता। उसकी आंख सब कुछ देख लेती हैं और हमारी नीचता की सजा देना भी उसे आता है। बड़े-बड़े अपराध जिनका सुराग न मिल रहा हो, वह भी उजागर हो जाते हैं। और एक और बात हम जो करते हैं परमात्मा उसे हजार गुणा करके हमें वापिस देता है जैसे एक गेहूँ का दाना बौने से हजारों दाने बन जाते हैं। इसी तरह अच्छे या बुरे हमारे कर्म भी सहस्र गुणा हो जाते हैं। और जब उसकी मार पड़ेगी तो हम कितना व्याकुल हो जाएंगे ?



हमारा सरोकार

सोचें ज़रा ईश्वर को हमारे से क्या काम है। उसने अपने सारे कार्य करने के लिए बड़ी-बड़ी शक्तियां बना रखी हैं। जिनसे सारे काम स्वतः होते चले जाते हैं। सब उसके नियमों में बन्धे बंधाए निरन्तर अपने-अपने कार्य सुचारू रूप से कर रहे हैं। देखो तो सूर्य, चांद, तारे, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, आकाश, सत्व, रज, तम, काल सब नियम से चल रहे हैं। जब कभी वह जरूरी समझता है आन्धी, तूफान, भूकम्प, बाढ़ स्वयं ही आ जाते हैं। स्वयं ही मौसम बदल जाते हैं। वह देता है तो मनुष्य उससे और पदार्थ बनाता है। उसने नदिया बनाई, मनुष्य ने नदियों के पानी का उपयोग किया और नियन्त्रित भी किया। मनुष्य ने जो कुछ बनाया उसे घमण्ड आ गया कि उसने बनाया । वह ईश्वर से कम नहीं है और करते-करते मैं ही ईश्वर हूँ ऐसा सोच बैठा। जिससे बाकी दुनिया को अपने वश में करने के लिए मनुष्य ने युद्धों और युद्ध करने के उपकरण बना लिए। पर युगों से ऐसा देखने में आ रहा है कि जब-जब मनुष्य में यह अभिमान बढ़ा तब-तब ईश्वर ने उसे अपने बल का जलवा दिखा दिया। मनुष्य को अपनी निरीहता का आभास हो गया ईश्वर की कृपा बिना वह कुछ नहीं है। उसका सरोकार मनुष्य को हमेशा रहेगा। ईश्वर को हमसे कुछ नहीं चाहिए पर हमें ईश्वर से सब कुछ चाहिए। वह यदि अपना कोष खींच लें तो मनुष्य एक फुनगे से भी गया बीता हो जाता है। ईश्वर अपनी सारी सृष्टि के लोगों से एक ही चीज़ तलाशता है और वह है 'प्रेम', ईश्वर के प्रति प्रेम। बुरे से बुरे और पापी से पापी व्यक्ति को वह कुदरत की किसी नेमत से वंचित नहीं रखता। खुले खज़ाने लुटाता फिरता है। कहीं ताला नहीं लगाता। कुछ नहीं छुपाता। बस कुछ छुपाता है तो अपना आप। वह स्वयं एक ऐसा रहस्य है जो किसी का त्याग नहीं करता, किसी से दूर नहीं रहता। पर किसी को दिखाई नहीं देता। सब जानते हैं वह चींटी से लेकर हाथी तक सबके अन्दर है, बाहर है, कण, कण में है पर दीखता नहीं। न नाराज़ होता है न खुश होता है न बंधा हुआ है न स्वतन्त्र है। स्वतन्त्र नहीं क्योंकि वह सभी से जुड़ा है इतना अधिक कि अलग होता ही नहीं। क्यों ऐसा क्यों है ? पहली बात कि वह इतनां विशाल है कि यह पूरा ब्रह्माण्ड उसके भीतर है। उसकी परिधि से बाहर कुछ भी नहीं है। सूक्ष्म इतना है कि आँख उसे देख नहीं सकती, हाथ उसे छू नहीं सकते, कान उसे सुन नहीं सकते। पर वह सबको देखता है, सुनता है, छूता

है, सबकी साँस में बसता है। फिर छुपा क्यों है ? यही समझ में नहीं आता। समझ में नहीं आता तो हम समझाते हैं वह है ही नहीं। वास्तविकता यह है कि वह ही वह है और जो कुछ है वह क्षणिक है। आज है कल नहीं, अभी दीख रहा था अभी तिरोहित हो गया। आकाश में बादल चलते हैं तो कई आकार बनाते हैं कभी कुछ, कभी कुछ। बादल छंट गए सब तिरोहित हो गया ऐसा ही यह सारा ब्रह्माण्ड है। पल-पल बदलता हुआ। कभी दिखता, कभी न दिखता हुआ। अर्थात् सभी कुछ नाशवान है, निसार है, असत्य है। पर बाकी बचता है तो केवल वही जो न मरता है न पैदा होता है न बीमार, न राजी, न जीर्ण होता है न उसका कभी कहीं अभाव होता है।

वह क्या है जो वह अपनी रची इस सम्पूर्ण कायनात से वह चाहता है। बस वही एक प्रेम की भावना। जिन्होंने उसे प्यार किया वह उसके लिए सुलभ हो गया। मनुष्य सोचता है; उससे प्यार कैसे करना ? वह भी वही सिखाता है। जब प्राणी आश्चर्य वत् इस सारी कायनात को देखता है फिर अपने को देखता है तो प्रश्न उठता है मैं क्या हूँ, कहां हूँ, कैसे हूँ, क्यों हूँ ? तो इसके उत्तर की तलाश से ही उसकी तलाश शुरू हो जाती है। स्वयं को तलाशते-तलाशते मानव अन्तर्मुखी होता है कहीं हृदय गुहा में बैठा वह परम प्रिय हृदय ग्रावी को महसूस करता है। हालांकि दूरी का अस्तित्व नहीं है पर यह सफर ही बड़ा लम्बा है इसी को तय करना कठिन है। वेद विद्या यहां हमारा मार्ग दर्शन करती है-

> वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमा *दित्य वर्णं तमसः परस्तात्।*
> *तमेव विदित्वा मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यते ऽयनाय*
>
> *मैं जिस महान आदित्य के समान देदीत्यमान अज्ञानान्धकार से सर्वथा परे विराजमान हुए पूर्ण परमेश्वर को जानता हूं, वास्तव में उसी को जानकर मनुष्य संसार सागर से तर जाता है। जन्म मरण के चक्र से छूट जाता है। सच पूछो तो जन्म मरण से छूटकर उस महान् परम सुख को पाने का और कोई मार्ग नहीं है।*

और कोई मार्ग नहीं है तो यही मार्ग अपना कर हम उस ज्योति स्वरूप को, स्वामी को, अपने को, प्यारे को पा सकते हैं। शेष हम देखते हैं जो इस राह का पथिक हो जाता है वह उसी की कृपा से उस को जान जाता है। स्वतः प्यार करने

लगता है। जो उसे प्यार करता है वह किसी से घृणा कर ही नहीं सकता क्योंकि वह प्रभु प्रेम का भण्डार है, उसे प्यार करने वाला सारे विश्व का प्यारा, हित चिन्तक, कल्याणकारी बन जाता है। उसी का रूप बन जाता है। भगवान् को जीव मात्र से यही सरोकार है। हमें उससे सब कुछ चाहिए और उसको हमसे निःछल, निस्वार्थ, प्रेम की अपेक्षा है यदि हम दें तो हम मालामाल हो जाते हैं उसके खजाने हमारे हो जाते हैं । उसकी शक्ति हमारी हो जाती है। हम नहीं हो जाते हैं। परन्तु काश– हम ऐसा कर पाएं। जिस दिन हम ऐसा कर पाएंगे वही जीवन का सर्वश्रेष्ठ क्षण होगा उस महान के चरणों में यही विनय है कि वह हमें अपने आगोश में ले ले। हमारी गागर में सागर भर दे। हमारे सरोकार सारे पावन हो जाएं। हम उसके हो जाएं।



ब्रह्म निरूपण

निःसन्देह भगवान सर्वशक्तिमान, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का एक मात्र स्वामी, अनादि, अनन्त, निराकार और सृष्टि का जनक पालक तथा संहारक है। पर यह विश्व का प्रपंच इतना उलझा पुलझा और समझ से परे है कि मनुष्य ने इसे खोज करते-करते कितने शास्त्र, दर्शन, ब्राह्मण इत्यादि ग्रन्थ रच डाले और अभी तक रचता चला जा रहा है। कितने ऋषि मुनि महापुरुष, अवतारी पुरुष हो गए और होते चले जा रहे हैं कि आज भी इस धरा को ऐसे पुण्यश्लोक महापुरुषों का अवतरण होते देखकर साधारण व्यक्ति की बुद्धि चकरा जाती है। इन सारे चक्रों को भेद कर जब हम वेदों की शरण में जाते हैं तो वहां सृष्टि के आदि में तीन चीजें अनादि दिखाई देती हैं। परमात्मा, आत्मा और प्रकृति। आत्माएं परमात्मा के विधान से शरीर धारण करती हैं और प्रकृति उपादान कारण बनकर उस शरीर को बनाने की सामग्री उपस्थित करती है। वेद कहते हैं सृष्टि से पहले असत नहीं था ? अर्थात् यह सारे ब्रह्माण्ड का मूर्त रूप धारण करना किसी असत से नहीं सत से ही हुआ है। फिर कहा कि सत भी नहीं था। तो क्या था ? असत से तो कुछ उत्पन्न नहीं हो सकता। अनादि काल से प्रलय और सृष्टि का क्रम चला आ रहा है। हम प्रतिक्षण प्रकृति के क्षरण और निर्माण का क्रम चलते हुए देखते हैं। एक सूक्ष्म सा बीज विशाल पेड़ बन जाता है और फिर बड़े-बड़े भारी पर्वत पेड़ों सहित धूल धूसरित हो जाते हैं। कभी विशाल-काय साकार नजर आता है कभी शून्य सा निराकार। यह शून्य सा निराकार ही फिर साकार होकर दिखाई देने लगता है। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही तो है उस कर्त्तार का सारा रूप। अन्तर्दृष्टि से समझाने की बात यही है कि साकार जो उसने बनाया, स्वयं उसमें समाया और स्वयं ही उसे लुप्त भी कर देता है। उसके हर कार्य में क्रम है, नियम है, अनुशासन है। इतना सुदृढ़ है उसका सारा विधान कि कहीं भी, कभी भी कोई चूक नहीं होती। कब क्या होगा, कौन सा परिवर्तन आएगा यह खगोल विद्या यह ज्योतिष शास्त्र के ज्ञाता सब गणना करके भी बता देते हैं। अपवाद में जो होता है वह मनुष्य की बुद्धि को चक्र में डाल देता है। यह सारा कुछ कौन करता है।

वही तो शक्ति है जिसे निराकार ईश्वर के रूप में जाना जाता है। जो सब कुछ का कर्त्ता होकर भी सदैव अदृश्य रहता है, वही तो सत है वही सब उत्पत्ति का मूल कारण है। उपाधन रूप प्रकृति भी उसी की बनाई उसी के नियमों पर चलती है। उसी के अधीन है। केवल रूप बदल-बदल कर उसकी सकारता को समुपस्थित करके जीव मात्र को आश्चर्य चकित कर देती है। जीव मात्र भी उसी की ही रचना है। यही पांच तत्व, यही अस्ठधा प्रकृति, यही तीन गुण, यही सब सामग्री कितने विविध और विभिन्न रूपों में उसकी संकारता को उपस्थित करती है, आश्चर्य है। ध्यान से सोचें तो हमारा यह शरीर जो यन्त्रवत सारा कुछ कर रहा है, किसने बनाया? किसी ने अपने हाथ से नहीं बनाया ? उसके बनाए विधान से ही बना। वही इसका पालन पोषण को इतना कुछ पैदा करता है, वही सिखाता है क्या ये क्या करना। वही धीरे-धीरे क्षीण करते-करते आखिर में मिट्टी के लोथों में परिवर्तित कर देता है। जिसे बेकार समझ कर या तो अग्नि की भेंट चढ़ा दिया जाता है अथवा धरती के अन्दर सुला दिया जाता है। जला हुआ राख में बदल जाता है और धरती के अन्दर रखा मिट्टी में परिवर्तित हो जाता है। जब तक वह इसमें स्थापित था। इस शरीर में आत्मा भी रहता था। बड़ा प्यारा था ? अपनों ने जब आत्मा उड़ गई उसने भी मुंह मोड़ लिया मनुष्य शिव से शव हो गया। पर वह परमेश्वर तो ऐसा है, जब हम नहीं होते अर्थात् शरीर रूप में नहीं होते, तब भी वह होता है। जब हम शरीर में होते हैं तब भी वह होता है। उसका कभी अभाव नहीं होता, कहीं भी, कभी भी वह यथा का तथा वर्तमान होता है। जैसे समुद्र भरा हुआ है, उसके एक भाग से नमक बनता है। उसी से मोती बनता है, उसी से समुद्र में जीव जन्तु होते हैं, रत्न बनते हैं, खाद्य पदार्थ बनते हैं, बर्फ बनती है, खनिज बनते हैं और ठोस धरती भी बनती है। पेड़ पौधे भी बनते हैं। यह सागर कितने विभिन्न रंगों में स्वयं को उपस्थित कर देता है। मूल में सागर है यह एक ठोस उदाहरण है उस सूक्ष्म को साकार होने के क्रम को समझने के लिए। हर वस्तु के मूल में वही है। उसी ने सब विभिन्न पदार्थ रचे हैं। वही खिलौनों की तरह सब सृष्टि को गढ़ता और नाच नचवाता है। सूत्रधार है पर न कोई दोष लेता है न श्रेय। उसके बनाए मनुष्य में उसी की बनाई बुद्धि का ऐसा पदार्थ है कि हर बात का श्रेय भगवान उसी को दे देता है। मनुष्य में अहम की भावना है जो हर श्रेय को स्वीकार करके यह कहता है यह मैंने किया। इसलिए

उसका फल भी भोगता है। फल यहां सुख है वह खुशी से स्वीकार कर लेता है। यहां दु:ख है वह उस कर्त्ता को दोष देता है। पर वह प्रभु है बिल्कुल निर्लेप, इसलिए हंसता है कर्म तो तूने किया और फल का दोष मेरा हो गया। अपने अच्छे बुरे का तूने स्वयं पैदा किया अब भोगो। दूसरी तरफ जिसने कण-कण में उसे देखा, समझा अनुभव किया वही पूजनीक हो गया। उसके रंग में रंगा गया जिसने इन्कार किया, उसने कहा-कहा है वह ? वह तो है ही नहीं और मीमांसक ने कहा हां वह है भी और नहीं भी। यह पूरा ब्रह्माण्ड है तो इसके रचने वाला भी है तुम तो तुम्हें बनाने वाला भी है। मां ने पैदा किया, पर मां ने क्या बनाया तुम्हें तेरा एक-एक अंग प्रत्यंग मां ने नहीं गढ़ा। वह तो गढ़ने वाला कोई और है। दिखाई नहीं देता इसलिए कहते ही नहीं है। तुम्हारे कहने से उसे क्या फर्क पड़ता है वह तो तब भी अपना कार्य निरन्तर कर रहा है। यदि वह नहीं है तो जो कर्म तुमने किये फल पाया उसका दोष उसको क्यों देते हो। जब अन्दर ही अन्दर असहाय सा महसूस करते हो तब किसे पुकारते हो ? तब मरहम बन कर कौन आता है जो आता है न तुम्हारे भीतर वही तो वो है जिसे नकार रहे हो। इतना रहस्यमय है वह कि युग बीत गए उसे खोजते खोजते वह फिर रहस्य ही बना रहा और भविष्य में भी बना रहेगा और इसी रहस्यमय से निसृत होती रहेगी यह सृष्टि, निरन्तर कभी साकार कभी निराकार। कभी चंचल कभी प्रसुप्त और प्राणी मात्र निहारता रहेगा उसका अद्भुत, अनुपम स्वरूप, सदा चकित सदा सम्मोहित, जो उसे प्यार करेगा वह उसका प्यारा सखा होगा, जो इन्कार करेगा वह उसका सब कुछ करते हुए भी उपराम रहेगा। पर चिरन्तन सत्य वही है, वही रहेगा।



सत्संगति

मनुष्य सन्त महापुरुषों के द्वार पर क्यों जाता है ? कारण बहुत से हैं। पुत्रेषणा, धनेषणा .. का मेषणा, यशेषणा या ज्ञानेषणा कोई भी इच्छा हो सकती है। भीड़ में कोई कुछ कोई कुछ कामना लेकर आता है। भगवान कृष्ण ने गीता में कहा कि उनके चार प्रकार के भक्त हैं–

परन्तु सबसे प्रिय वही है जो ईश्वरीय ज्ञान की इच्छा से आते हैं। किसी बादशाह के दरबार में जाकर कोई दो रोटियां मांगता है तो क्या ? जो जिस इच्छा से जाता है उसे वही मिलता है। क्योंकि हम इच्छा करने में, कर्म करने में पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हैं, कोई बंधन नहीं, परन्तु जो कुछ कर लेते हैं उसका फल प्राप्त करने में हम स्वतन्त्र नहीं हैं। जिस बीज का पेड़ बोते हैं फल उसी के होते हैं। फिर अच्छे–अच्छे फल जब हमें मिलते हैं तो उनके प्रति हमारी अधिकार की वृत्ति हमें मजबूर करती है कि हम उसमें से सारी की सारी स्वयं अपने लिए रखें। पर यदि ऐसी भावना रखते हैं तो फिर वहां प्रभु की इच्छा या न्याय करिता कुछ और रंग दिखा देती है, फलों में कीट आ जाते हैं, पशु, दूध कम देने लगते हैं, खेतों में अनाज कम पैदा होता है, वर्षा सूखा बाढ़ अपना रंग दिखाते हैं और मनुष्य ताकता रह जाता है, नियति को दोष देता हुआ। ईश्वर को कोसता हुआ। कभी सोचें कि ऐसा क्यों हुआ तो समझ में आता है कि जो छिन गया, चोरी हो गया क्योंकि ईश्वर की कृपा को हम मिल बांट कर नहीं खाया अकेला खाना भी तो पाप है। इसी पाप के फलस्वरूप मिला हुआ छिन जाता है किसी भी रूप में। कई लोग बड़े कंजूस होते हैं, नीच आदतों के मालिक होते हैं पर उनके पास बड़ा ऐश्वर्य होता है। देखकर लगता है कि आचार विचार की बातें झूठ हैं। अपने जोर से लूट खसोटे ही ठीक है। यह तुरन्त सोचकर अपना आचरण बदल लेते हैं। पर ध्यान से सोचें तो अन्याय से एकत्र किया धन कुछ समय तक ही ठीक चलता दिखाई देता है। अन्त में परिणाम कुछ उल्टे ही निकलते दिखाई देते हैं। ऐसा धन मनुष्यों में द्वेष पैदा कर देता है, बड़े सगे भी शत्रु हो जाते हैं। हम रोज़ ही तो देखते हैं ऐसी–ऐसी घटनाएं घटते हुए जो त्रस्त करके रोंगटे खड़े कर देती हैं। अब ऐसे फल देने वाला यह बताने तो नहीं आता कि यह तुम्हारे फलां कर्म का फल है पर कर्मों की खेती के फल मिले बिना रहते

नहीं। दुष्ट दुष्टता नहीं छोड़ता पर उसके प्रतिकूल ऐसी शक्तियां भगवान् पैदा कर देते हैं जो उसके किए का परिणाम उसे दिखा देता है, हम सन्तों के पास सद् इच्छा से जाएं, सद् बुद्धि के लिए जाएं सद् ज्ञान के लिए जाएं तो जाना सफल होगा। सप्त कृपा, भगवत कृपा और अपना निरन्तर प्रयत्न मनुष्य को दिन प्रतिदिन उर्ध्वगति देता है। विशेष कर मिले की खुशी नहीं, न मिले का गम नहीं यह भाव मनुष्य को अन्तर में आनन्दित बनाए रखता है। आत्मोन्नति की साधना ही ऐसी कामना है जिसे सर्वोपरि रखकर हमें प्रयत्न करना चाहिए तथा सन्तों से भी इसी भिक्षा की इच्छा करनी चाहिए जिसे देने में सन्त भी अति प्रसन्नता प्राप्त करेंगे। भगवान् भी कृपावान होंगे और अपनी आत्मा भी आनन्द से भरी रहेगी। जीवन में यह सतर्कता भी बड़ी आवश्यक होती है कि जीवन को हम ले जाना तो चाहते हैं सन्मार्ग की तरफ पर पहुँच जाते हैं किसी पाखण्डी सन्त के द्वार पर। सन्त भी परख के दायरे में आते हैं। पाखण्डी हमें सन्मार्ग पर नहीं विनाश के मार्ग पर धकेल सकता है। उसके अपने स्वार्थ, लालच दूसरों को झांसा लगा कर गिराने का होता है। हम पहचान सकें कौन सन्त के पास जाए, कहाँ से मार्ग पाएं। यदि किसी महान् सन्त का जीवन में संग मिले, नेतृत्व मिले तो जीवन धन्य हो जाता है। हम गायत्री मां से यही तो प्रार्थना करते हैं कि वह हमें सच्चा सीधा मार्ग दिखाए, हमें ठीक नेतृत्व मिले, हमारी बुद्धि सत्कर्मों में प्रेरित हो। और जब ऐसा होता है तो जीवन धन्य हो जाता है। अर्थात् सद्कर्मों के करने से दुष्कर्म स्वयंमेव छूट जाते हैं। दुष्कर्मों का छूट जाना मनुष्य को सद्पथ का पथिक बना देता है।



कतम बन्दारु

क उश्रवत्कतमो यज्ञियानां वन्दारू देव। कतमो जुषाते।
कस्येमां देवीम मृतेषु श्रेष्ठां हृदि श्रेषाम सुष्टुति सुहव्याम्।

4/43/1

को मृलानि कतम आगमिष्ठो देवानामु कतमः शम्भविष्ठः
रथं कमाहुर्द्रवद श्वमांशु यं सूर्य्स्यं दुहिता वृणीतफ॥

4/43/2

1. हे विद्वत् जन कौन यज्ञ और यज्ञ की सिद्धि करने वाले विद्वानों, उनके वन्दना करने वाले स्वभावों को सुनता और देखता है। कौन विद्यायुक्त नारी को अमृत को सेनने और सुनने योग्य है।

2. हे विद्वानो! हम लोग किस सुख कारक निरन्तर आने वाले सुख कल्याण कारक पदार्थ तथा अग्नि और जल के द्वारा चलने वाले वाहन को उत्तम प्रकार जाने। दोनों मन्त्रों में पूछे प्रश्नों के उत्तर–प्रातः बेला के सूर्य की तरह जो अध्यापक को उपदेशक को सुनता और सेवता है वह वायु के सदृश विद्या का सेवन करें और पतिव्रता सुयोग्य विद्वान पत्नि की तरह (जैसे वह अपने पति को धारण करती है) उस सुने हुए सद् उपदेश को अपने भीतर धारण कर लें कि वह गुण वह विद्वता हमारे व्यक्तित्व का ही हिस्सा हो जाए। प्रथम बात तो यह है कि जो व्यक्ति जिस विद्या में पारंगत हो वह उसे अपने तक न रखे, प्रत्युत उसको दूसरों को प्रदान करें खुले हाथों, लुटा–लुटा कर जो व्यक्ति जन कल्याण के लिए अपनी विद्वता, अपनी विद्या को दूसरों को सहर्ष प्रदान करता है वह आदर के योग्य है। जिस विद्या को भी मनुष्य भीतर तक जान लेता है वह उसका यज्ञ है और यज्ञ करता का सम्मान ही नहीं ऐसे विद्या विशारद के लिए जो भी तन–मन धन से सेवा हो सके वह प्रदान की जानी चाहिए। इससे अगले मन्त्रों को पढ़ने से ज्ञात होता है कि विद्वानों का दायरा इतना विशाल है कि कोई विद्वान ज्ञान का अंग छूटता नहीं है। शिल्प शब्द के अर्थ को ही लें तो सूई से लेकर बड़े से बड़े जहाज तक का निर्माण शिल्प में आ जाता

है। भगवान ने प्रकृति माता की गोद में हर प्रकार के शिल्प की साजो सामान रखा है। मनुष्य को बुद्धि का वरदान दिया है। किससे क्या बनाएं, बुद्धि विचार करें और फिर निर्माण आरम्भ हो जाए इसी प्रतिक्रिया में हर नयी खोज एक अद्‌भुत हर्ष और आश्चर्य लेकर आती है, निर्माण होता है फिर वही निर्माण जीवन का अभिन्न अंग बन जाता है आवश्यकता बन जाती है। जब तक नहीं था तब तक उसके बिना भी जीवन चलता था। कला के क्षेत्र को लीजिए। कलाओं के कितने रूप हैं। वाद्य, गायन, नृत्य, मूर्ति, निर्माण चित्रकला इत्यादि और फिर एक-एक कला के कितने अद्‌भुत विभिन्न प्रकार हैं। साधक जीवन भर साधना करके भी यह महसूस करता है कि उसकी साधना अभी अधूरी है। अभी बहुत कुछ जानना सीखना शेष है। अध्यात्म के क्षेत्र में भी साधक आगे-आगे बढ़ता जाता है। पर देखता है क्षितिज अभी भी प्राप्त नहीं हुआ। और शक्तिशाली आगे-पाने या होने की सम्भावना सामने दीखती है। इसी प्रकार बाकी कर्म क्षेत्रों का भी हाल है। यह सभी अपने-अपने ढंग के यज्ञ हैं। यज्ञ और यज्ञ करता दोनों ही पूजनीय हैं। हमारे से पहले जितने महापुरुष इस संसार में हुए। जिन्होंने संसार के कल्याण के कार्य किए, पूजा के योग्य हैं उनके कर्म और उनका ज्ञान हमारे लिए विस्तृत ज्ञान का भण्डार खोल के रखा है अतः 'कतम वन्दारू' इसका उत्तर यही है कि साधना के क्षेत्र में पारंगत विद्वान वन्दनीय हैं, वन्दनीय ही नहीं, उन्हें हम अपने जीवन में समाविष्ट कर लेने की आवश्यकता है। उनकी वन्दना, प्रशंसा, पूजा, आदर करके हम अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं। यदि उनके गुणों को अपने में समाविष्ट कर लेते हैं तो हमारा कर्त्तव्य बनता है कि हम अपनी विद्या को आगे प्रसारित करें इसे मृत न होने दें। संसार की यह सेवा हमें हर कीमत पर करनी चाहिए यह हमारा पवित्र कर्त्तव्य है। यह वेद की आज्ञा है। ऋषियों का वरदान है। ईश्वर का विधान है। यदि हम कंजूसी करके अपना जाना हुआ आगे दूसरों को न दें तो हम पाप के भागी हैं। ज्ञान का दान धन के दान से भी श्रेष्ठ है। हम भगवान से यह प्रार्थना करते हैं कि वह हमें सर्वगुण सम्पन्न बनाए और इतनी वक्तृता शक्ति भी दे कि हम उसकी दी हुई विद्या को वायु की तरह फैला दें, जिससे जो भी उसे प्राप्त करें उसी का कल्याण हो।

भगवान की अपार कृपा है कि उसने हमें बुद्धि दी है। जिसकी सहायता से हम विद्वानों का कथन समझ सकते हैं। यदि हम उस बुद्धि का सदोपयोग नहीं करेंगे तो देने वाला वापिस ले सकता है। जब वह वापिस ले लेता है तो विद्वान से विद्वान व्यक्ति भी मस्तिष्क हीन होकर बेकार हो जाता है। इसीलिए वेद यह आज्ञा देता है कि जीवन को यज्ञमय बनाओ उसके लिए दान को वितरित करो। ताकि आप कभी

निर्धन असहाय न हों। हम अमर पुत्र बनें और अपने कृत्य से इस संसार को और सुन्दर बनाएं। योग्यता का जहाँ तक सवाल है यदि एक कक्षा में दस विद्यार्थियों को एक ही विषय पर निबन्ध लिखने को दिया जाए तो दसों विद्यार्थियों के निबन्ध अलग-अलग होंगे। यदि एक निबन्ध एक जैसा सबको दिया जाए तो सब रटा रटाया एक जैसा बोल देंगे। इसी तरह बहुत से विद्वानों ने ईश्वर को अपने-अपने ढंग से वर्णन किया। अपने-अपने अनुभव से उसे जाना। मेरा जाना हुआ ईश्वर दूसरे को समझ नहीं आता पर उसका अपना जाना ईश्वर उसका अपना है वह उसे उसी ढंग से पहचानने और कहने में आनन्द प्रतीत करता है। जैसे मेरी खाई रोटी में मेरी भूख मिटी दूसरे की नहीं। जिसने जैसा जाना उसे कह लेने दीजिए उसी में से उसके आगे निकलने का मार्ग मिलेगा।



ईश्वर की कृतियां

इस पूरी संस्कृति की और ध्यान दीजिए, सोचिए लगता है भगवान भास्कर से ही इसका प्रादुर्भाव हुआ होगा। यह नित्य प्रति बदलता हुआ ब्रह्माण्ड और प्रति पल छेड़खानी करती आदित्य रश्मियां क्या गज़ब ढाती रहती हैं। करोड़ों मील दूर से सफर करती यह किरणें किसी एक कण को भी प्रभावित किए बिना नहीं छोड़ती। हर छेड़ाखानी से नित्य नवीन कुछ अद्‌भुत होता रहता है। क्षण-क्षण उस अद्‌भुत हुए में भी घनघोर परिवर्तन होता रहता है। भगवान् ने यह सूर्य की भी क्या बनाया है कि जिससे तत्व, पदार्थ स्वयंमेव प्रकट होते रहते हैं मानो सभी पदार्थ यह अपने से धरती की गोद में उंड़ेलता चला जाता है। धरती माता कभी वंचित नहीं होती। धरती की गोद सदा भरी रहती है। करोड़ों मील दूर से करोड़ों वर्षों से ऐसा ही होता चला आ रहा है। ईश्वर ने सारे ब्रह्माण्ड की रचना के लिए सूर्य के रूप में एक ऐसी रचना की जिसकी उपस्थिति से पृथ्वी पर रचनाएं होती ही रहती हैं, इसी से स्व पिण्ड, जड़, चेतन, वायु, जल, अग्नि, काल, दिन, रात, जन्म, मृत्यु, शब्द, दृश्य, अदृश्य, प्रकाश, अन्धकार बनते चले जाते हैं। फिर उससे भी आगे पाप पुण्य, नर, मादा पेड़ वनस्पति, खनिज और भी जाने क्या-क्या इस धरा की गोद में भर जाता है। चौरासी लाख योनियां और यदि मानें तो भूत प्रेत पिशाच देवता कितना कुछ रचित होता रहता है। कितने मन चित्त, अहंकार, बुद्धि फिर काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर रोग, द्वेष, रोग, भोग रोग विज्ञान सब प्रकट हो जाते हैं। फिर वेद शास्त्रों का भण्डार, नित्य प्रति जागने वाले नये-नये धर्म, ईश्वर की विचित्र रचनाएं, कल्पनाएं विश्व मंच पर उपस्थित हो जाती हैं। इतना सब कुछ है कि गिनाएं नहीं गिनता यह ऐसा भण्डार है जिसमें कोई न्यूनता नहीं आती। धरती की कोश से सब निसृत होता ही रहता है। स्वयं मानव का सृजन भी तो एक करिश्मा है। अपने आप को देख कर ही बुद्धि दंग रह जाती है कि भगवान ने कितना कमाल कर दिया यह सब बनाकर । बड़े-बड़े बलशाली बुद्धिशाली भी उस असीम के सामने बौने पड़ जाते हैं। फिर अणु

मात्र सा यह जीवन कितना छोटा, कितना हल्का पर इसी से अद्‌भुत शक्तियों का भण्डार, इसी मानव बुद्धि द्वारा इतनी वृहद् निर्माण शक्ति कि स्वयं इन्सान अपने ही कृत्य पर आश्चर्यचकित ? और फिर चक्र से जीवन का पल भर में मिट जाना, स्वन्यवत हो जाना। कैसा आश्चर्य है। सब मिटता तो नव प्रभात के साथ जीवन फिर जाग उठता है। नव सौन्दर्य में नया सूर्य मुस्कराता है। पर नहीं यह सब नहीं फिर पुरातन अजर अमर अनश्वर और उसी में यह सारी परिवर्तनशील सृष्टि, कैसा अद्‌भुत चक्र है यह! खगोल विद्या के विशारदों में आसमान पर चमकते सितारों की भी, खोज बीन कर रखी है। कौन सा सितारा कितने समय में कहाँ पहुंचेगा, ग्रहण कब लगेगा, तिथि कब बदलेगी इतना ठीक-ठीक हिसाब लगा रखा है कि ठीक-ठीक सबकी चाल का पता चल जाता है। यह विद्या भी मनुष्य को किसने सिखाई ? मनुष्य महान् है सभी विधाओं को सीख जाता है। फिर ऐसा लगता है कि सारे खगोल को चलाने में मनुष्य का भी हाथ है। वास्तव में प्रभु के नियम ऐसे हैं कि यह करोड़ों-करोड़ों सितारे, ग्रह, नक्षत्र, यह धरती, सूर्य, चन्द्र सब एक ही शक्ति के इशारे पर घूम रहे हैं, यात्रा कर रहे हैं। उसके नियमों में कोई व्यवधान नहीं है अतः अर्थ शास्त्र की विद्या से खगोल विद्या पर भी मनुष्य पारगंत होने की कोशिश करता है। हे प्रभु जी! यह सब चला रहा है, तेरा पार कौन पा सकता है, पर मनुष्य तेरे साथ चलते-चलते तेरी बहुत सी रहस्यात्मकता को जानता रहता है। क्योंकि मनुष्य तेरी सबसे उत्तम कृति है।



उपदेशक संहिता

वेदों में विशेषकर आचार्यों, विद्वानों, उपदेशकों और अध्यापन कार्य में लगे लोगों के लिए यह आदेश है कि हम सब उनका आदर, सत्कार, अभ्यर्थना और उनका अनुकरण करें पर उसके साथ ही साथ इन सब महापुरुषों को बारम्बार यह आदेश दिया गया है कि उनका अपना आचरण कैसा हो। उपदेशक उपदेश देकर चले जाते हैं लोग भूल जाते हैं। परन्तु उनके आचरण को नहीं भूलते व्यक्तित्व में तेजस्विता, ओजस्विता, अच्छी आदतें, सहन शक्ति, वाक् शक्ति होनी चाहिए वो सुघड़ हो गया उसका उठना, बैठना, खाना, पीना, पढ़ना लिखना सभी बातों पर जनता का ध्यान होता है। जिस उपदेशक की कथनी करणी में अन्तर हो उनकी कथनी का प्रभाव गहरा नहीं हो सकता। हजारों आंखें उनके आचरण पर होंगी। दूसरा जो उपदेशकों में सबसे बड़ी कमजोरी होती है वह अपने भाषण में दूसरे विद्वानों को अपने से नीचे दिखाने का जो प्रयत्न करते हैं वह निन्दनीय है। जनता के पास दृष्टि भी है और मनन शक्ति भी है। यह निर्णय जनता पर ही छोड़ देना चाहिए कि कौन सी बात का अनुकरण वह करे । जिस महापुरुष की साधना जितनी अधिक होगी उसका कथन उतना ही प्रभावशाली होगा और लोगों के हृदय पर वह उतना ही गहरा रंग देगा। जिसका जितना अधिक तपश्चर्या पूर्ण जीवन होगा वह उतना ही आदर्श (role model) होगा। इस प्रकार विद्वानों का आदर सत्कार जनता के हृदय में और बढ़ जाएगा। जो उपदेशक ऐसा न कर पाएगा वह समझ ले कि उसकी अपनी साधना अभी अधूरी है। स्वामी दयानन्द पहली बार जब हरिद्वार में अपने विचारों को जनता के आगे रखने निकले तो उन्होंने स्वयं ही यह महसूस किया कि लोग उनकी बात को सुनना नहीं चाह रहे। वह वापिस तपस्या साधना के लिए चले गए जब उन्होंने अपने आप को परिपक्व कर लिया तो जनता अपने आप उन्हें सुनने को उमड़ पड़ी। बेशक स्वार्थी लोगों ने उनका विरोध किया, उन्हें मारने पर उतारू होते रहे पर उनके आत्मबल के आगे उन लोगों को भी घुटने टेकने पड़े। बहुतों के जीवन समूचे

परिवर्तित हो गए। आज उनके विचारों पर स्वतः कई परिवर्तन आ गए। दयानन्द एक सर्वोच्च विचारक, तपस्वी, उपदेशक विद्वानों में माने जाते हैं। सत्यार्थ प्रकाश उनकी निर्भीक सत्यवाणी का प्रतीक है और उसमें झूठ का कोई स्थान नहीं है।

आज के उपदेशक यह सब मन में धार कर चलें कि उन्हें हजारों आंखें देख रही हैं इसलिए वाणी से जो उपदेश निकले वह सत्य के आधार पर हो पर उनका अपना आचरण भी उसी आधार पर हो।

ऐसे उपदेशक विद्वान महानुभाव सदा आदरणीय पूजनीय वन्दनीय होंगे। शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापक बच्चों के आचरण बनाने वाले होते हैं। यदि अध्यापक शुभाचरण वाले सुयोग्य नहीं होंगे तो वह सुयोग्य चरित्रवान् विंद्यार्थी भी समाज को नहीं दे सकेंगे। ऐसे अध्यापक शिक्षालयों को दूषित कर देंगे। वह वन्दनीय नहीं होंगे। यह निश्चित है।



शिव संकल्पमस्तु

आत्मशक्ति के अभाव में शरीर के अन्य अंगों की तरह मन भी मृण्मय है। शरीर जब धू धू करके जलता है तो मन भी खाक हो जाता है। कितनी भी बढ़िया मशीनरी हो विद्युत धारा के बिना निष्क्रिय ही होती है परन्तु जैसे ही विद्युत शक्ति संचालित हो पूरी मशीनरी शोर करती हुई अपना कार्य करने लगती है। आत्मा के अलोक को प्राप्त कर पूरा शरीर मन सहित हरकत में आ जाता है। मन सारे शरीर का केन्द्र है मन सारथी बनकर सबको अपने-अपने काम में लगा देता है। यद्यपि जीवात्मा ही प्रधान है तथापि स्वयं गौण रहकर जीवात्मा मन को विशेष अधिकारों सहित आगे कर देता है। हर मानव मन को जानने लगता है मन ही मीत हो जाता है। वेदों ने जहां मनुष्य को इतना ज्ञान का प्रकाश दिया वहां मन के विषय में भी बहुत ही सुन्दर कहा। जागते या सोते हुए यह मन दूर-दूर तक गति रखता है पल में कहीं, पल में कहीं और पहुंच जाता है। इसे ज्योतियों में परम ज्योति कहा। मन के प्रवृत्त होने से सर्व कार्य सुलभ होते हैं। मन से ही मनीषियों योगियों की जीवन यज्ञ में संलग्नता होती है। धीरतापूर्वक पूर्वकाल की तरह आज भी मन यथावत अपनी भूमिका निभाता है। मानव जीवन में विशेषकर मन की भूमिका बहुत प्रधान है इसी से बार-बार वेद यह प्रबोध देता है कि हम इस मन के शुभ संकल्प वाला होने के लिए प्रार्थना करें। क्योंकि अतिशीघ्र इसके बिगड़ने का भय बन रहता है। इसे लापरवाही से खुला छोड़ देना खतरे से खाली नहीं है।

इस मन के न लगने से कोई कार्य नहीं होता। मन बुद्धि और आत्मा के साथ ही चिपका लगता है। अलबता मन ही प्रधान रूप से सर्वप्रथम मनुष्य को मुख्य लगता है मन से ही ज्ञान प्रज्ञान का ग्रहण, धारण और स्मरण होता है, मन की ज्योति सब प्रजाओं में अमृत तुल्य है ऐसा मन का संकल्प शुभ हो तो सभी कार्य सिद्ध हो सकते हैं। मन न लगने से बुद्धि भी सुप्त बनी रहती है। मन सक्रिय हो तो मनुष्य भूत, भविष्य और वर्तमान सबको जान लेता है। मनुष्य की सातों ज्ञान इंद्रियां दो कान, आंख, 2 नासिका और एक मुँह मन के वर्तमान होने से ही यज्ञ में, कर्म में, ज्ञान में संलग्न होता है मन न लगे तो कोई कर्म सिद्ध नहीं होता। मन से ही चारों वेदों की शिक्षा को मनुष्य समझने लगता है। जैसे चक्र के सब और चक्र की नाभि में

प्रतिष्ठित होते हैं उसी तरह मनुष्य की सब इन्द्रियां मन में प्रतिष्ठित होती हैं। मन के प्रकाश से मन के चलाने से सब सक्रिय और ज्ञानवान होती है। मन के घोड़े यदि स्वस्थ हैं पवित्र हैं तो अच्छे सारथी की तरह यह मन मनुष्य से सदा सत्य और शुभ ही करवाता है। ठीक मार्ग पर चलाता है इसलिए भगवान् से यह प्रार्थना है विनय है कि वह हमारे मन के संकल्प ही कल्याणकारी बना के रखे तो हम इस संसार सागर में अच्छी तरह तैर सकेंगे। अन्यथा यह मन ही यदि बिगड़ गया तो सारा जीवन चौपट हो जाएगा। मन से ही मनुष्य गिरता है, मन से अस्वस्थ हो तो निष्क्रिय हो जाता है। मन में छल कपट हो तो वह व्यक्ति ईमानदारी से कार्य नहीं कर सकता। काम, क्रोध मन के ही अवगुण हैं जो व्यक्ति को अति निकृष्ट अवस्था में पहुंचा देते हैं। मन पापी हो तो मनुष्य बुरे से बुरा बन जाता है न उसे ईश्वर का मान रहता है न कानून का। जब दुष्कर्म का फल भोगना पड़े तब चाहे कितना पछताए। फिर कोई भला नहीं हो सकता। इसीलिए किसी ने कहा –

मन चंगा ते कठौती में गंगा

मन के रूप हज़ार हैं। यद्यपि आत्मा का द्वारपाल मन है पर इस द्वार पाल के बिगड़ने से आत्मा का कल्याण कदाचित सम्भव नहीं। अतः मन की साधना किसी भी साधक के लिए प्रथम और अन्तिम प्रयत्न है निरन्तर इस मन मुकुट को सीधा करते-करते कई जन्म मनुष्य खो देता है। अतः मन का संकल्प शिव हो यही वरदान प्रभु से मांगते हैं।

धर्मो धर्माः रक्षति। धर्म से ही कर्त्तव्य पालन से ही मानव धर्म की रक्षा होती है। मन का प्रक्षालण कर्त्तव्य परायणता से सिद्ध होता है। जैसे-जैसे हम स्वयं को पवित्र बनाने का प्रयत्न करते हैं वैसे-वैसे मनुष्य को अपनी गलतियां कमजोरियां समझ में आने लगती हैं और हम इस योग्य अपने आप में सुदृढ़ होते जाते हैं कि उन गलितयों को फिर से न दोहराएं यही मानव मन की उन्नति का सबसे सुन्दर सोपान है। मन से ही मन को सुधारा जाता है इसी से मनुष्य ज्योति पथ की ओर आगे-आगे बढ़ता है। गीता ने स्थित प्रज्ञ की स्थिति से अवगत कराते हुए भगवान कृष्ण का कथन सिद्ध करने का प्रयास मन को साधने से सफल होता है। तब व्यक्ति अपने लिए नहीं संसार के कल्याण के लिए जीता है और ऐसा जीवन ही सार्थक जीवन है। जो व्यक्ति जितना ऊंचा सोचता है उसके मार्ग में उतनी ही कठिनाईयां आती हैं क्योंकि संसार में ऐसे व्यक्ति दुर्लभ होते हैं जिनका जीवन भगवान कृष्ण की तरह केवल संसार के कल्याण के लिए ही है इसी से हम देखते हैं जितने भी

महापुरुष हुए उन्हें बहुत अधिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। उनके जीवन की सफलता इसी में रही कि कठिनाइयों का सामना वीरता, साहस और दृढ़ता से करके उन पर विजय प्राप्त करके उन्होंने संसार के आगे उदाहरण उपस्थित किए। जो इतने अद्भुत और असम्भव लगते हैं कि उन सब विभूतियों को हम दिव्य पुरुष भगवान की दृष्टि से देखते हैं। वह महापुरुष अनुकरणीय हैं और हमें अपना जीवन उत्तमतम बनाने में आदर्श है। यह सब मन के निग्रह से ही प्राप्त होता है। जिस व्यक्ति का मन शिव संकल्प वाला हो गया वह भगवान के उतना ही समकक्ष हो गया। मन की यात्रा ठीक दिशा में चलते-चलते हम भी उन ऊंचाईयों को प्राप्त करें कि विश्व पटल पर हम सर्वोत्तम स्थान प्राप्त करें।



सङ्गच्छध्वं संवदध्वम्

वेद में संगठन सूत्र के मन्त्रों में यह सन्देश है कि हम सब लोग एक सा सोचें। हमारी सोच में राग द्वेष न होकर परस्पर प्रेम प्रीति भरी हो। हम एक दूसरे से मधुर भाषा में बोलें हमारे विचारों में विरोध वैमनस्य न हो। हम साथ-साथ चलें साथ-साथ खाएं पीएं, साथ-साथ जीना सीखें, हमारा आपस में विरोध न हो। किसी भी देश की सुख शान्ति के लिए इस संगठन सूत्र में कहीं गई बातें ईश्वर का एक आदेश है कि हम सबके विचार एक समान हों, भावना में हम एक दूसरे का भला सोचें, एक दूसरे के काम आएं, इकट्ठे रहें। ऐसा होने से परिवारों में प्रेम भाव होगा। आज समय की ऐसी हवा चली है कि एक तो परिवार सिकुड़ कर वैसे ही छोटे हो रहे हैं क्योंकि जनसंख्या अधिक होने से घरों में कम बच्चे पैदा किए जाते हैं। दूसरे जो थोड़े-थोड़े लोग होते हैं वह भी परस्पर मिलजुल कर नहीं रह सकते। विचारों में इतनी भिन्नता आ गई है कि एक-दूसरे को सहन करना कठिन हो गया है। बहुत से घरों में बूढ़े माता-पिता अकेले पड़े गए हैं। बच्चों को अब उनकी उपस्थिति सहन नहीं होती। कहीं सास ससुर असहनशील, कहीं बहुएं, बेटे। परिणाम सास ससुर भी अकेले पड़ गए और बेटा बहू भी। पारिवारिक परम्पराएं टूट गईं अपना-अपना स्वार्थ, आराम रहन सहन अलग-अलग हो गया। एक दूसरे के सुख-दुख बांटने के रिवाज मिट गए। सेवाभाव समाप्त हो गया। छोटों को बड़ों की सीख नहीं सुहाती। बड़ों को छोटों का रहन-सहन अजीब लगने लगा। यह बातें परिवारों से समाज में आकर और भी कई समस्याओं का जनक हो गई और फिर देश में समस्याएं इतनी बढ़ गईं कि सम्भलना कठिन हो रहा है। लोग जातियों, गुटों में फंस कर नित नयी लड़ाईयां पैदा करने लगे। अपराध बढ़ गए। जीवन जटिल होते चले गए। वैदिक भाषा केवल ईश्वर और भक्ति के विषय ही नहीं बोलती, बल्कि जीवन के हर क्षेत्र में हम क्या करें। इसकी पूरी चर्चा है। प्रतिदिन हम किस तरह जीएं, क्या-क्या करें, दिनचर्या क्या हो, परिवार कैसे चलाएं। जहां लोग संगठन से इकट्ठे रहना जानते हैं

वहां दूसरे विषयों की शिक्षा के साथ-साथ जीवन जीने की कला भी सीखने को मिलती है। नियम भी आते हैं। ठीक गलत का विवेक भी होता है। एक दूसरे की सहायता भी होती है। परिवार कैद खाना नहीं लगते। रोग में, विपदा में एक दूसरे की सेवा करने की भावना जागृत रहती है, हमदर्दी होती है। आय में वृद्धि होती है मिलकर काम करने से घर में बरकत होती है। वैदिक काल में गुरुकलों की शिक्षा में अमीर गरीब सबके बच्चे गुरुकुल में ही रहते थे इकट्ठे जिससे ऊंच-नीच की भावना नहीं होती। एक दूसरे से मेल मिलाप बढ़ता है और एक स्वस्थ समाज का निर्माण होता है। स्वस्थ आदतों का निर्माण होता है। यह संगठन गुण सभी बच्चे पढ़ते और आचरण करते थे। वास्तव में वेदों में जो कुछ है वह हमारे जीवन के अंग-अंग के लिए परमावश्यक है। जीवन के परे से लेकर जीवन के रोम-रोम के लिए यह शिक्षाएं हमारे लिए हैं। केवल गाने के लिए या यज्ञ करने के लिए ही नहीं बल्कि पूरी तरह से अपने भीतर धारण करने के लिए हैं। यदि हम इन शिक्षाओं को अपने में धारण कर सकें तो हम अपने जीवन को देवत्व से ओतप्रोत कर सकते हैं। और पग-पग पर जो मन में शिथिलता आ जाती है। बार-बार उसे फिर से स्वस्थ और सुस्थिर करने में हमें सहायता मिल जाती है। यदि जीवन में इन्हें धारण करने के लिए हम इनका अध्ययन करें तो हमारा जीवन धन्य हो जाए।



लेखक

मानव में यह एक गुण है कि वह अपने मन के भावों को लेखबद्ध करने को तत्पर रहता है। लेखन एक कला है। मनोभावों को हम कितने सुन्दर ढंग से व्यक्त कर सकते हैं इसमें एक से दूसरे व्यक्ति के लिखने का ढंग अपना-अपना है। भावाभिव्यक्ति आवश्यक है। इससे यह नहीं कि हम अपने भाव दूसरों तक पहुँचाते है बल्कि स्वयं अपने लिए भी यह गुण लाभकारी है। व्यर्थ बातों में समय न खोकर अच्छे विचारों का संकलन किया हो तो जब कभी अपना मन विचलित हो, क्षुब्ध हो, डांवाडोल हो तो अपना लिखा पढ़ने बैठ जाओ मन को ताकत मिलेगी। शास्त्रों का लिखा तो शिक्षा प्रद है ही, अपनी बात स्वयं को झकझोरने को कोई कम नहीं है। क्लिष्टतम विषयों को जब सरल, स्पष्ट और व्यावहारिक भाषा में उतारा जाता है तो मुश्किल विषय भी आसान लगने लगता है तथा साधारण से साधारण व्यक्ति के लिए भी बोधगम्य हो जाता है। यह ठीक है भाषा की क्लिष्टता भाषा की समृद्धि और सौन्दर्य को चार चांद लगा देती है पर आम आदमी से कही हुई बात दूर हो जाती है। ईश्वर देश या धर्म के विषय तो इतने ऐसे होने ही चाहिए कि आम आदमी उसकी तह में पहुंच सके तथा लाभ उठा सके। विचाराभिव्यक्ति से क्या लाभ यदि किसी की समझ में ही न आए। जो समझ में आता है वह व्यक्ति को भीतर तक छू जाता है तो इस विद्या में रुचि बढ़ती है। चरित्र निर्माण में सहायता मिलती है। भाषा समझने में जब कठिनाई आती है तो ही लोग धर्म परिवर्तन करते हैं। नये मत चलते हैं। मनुष्य कई दोषों को ग्रहण कर लेता है। सत्य से परे हो जाता है। समय के साथ-साथ भाषाएं परिवर्तित होती हैं इसीलिए अनेकानेक भाषाएं बनती चली जाती हैं। संस्कृत भाषा सब भाषाओं का मूल है। पर समय के साथ-साथ संस्कृत से दूसरी भाषाओं में लाने से विषय को सुगम और सुलभ बनाना भी एक कर्त्तव्य है जिससे सत्य पर ईश्वर या देश पर, कर्त्तव्य पर मनुष्य की समझ बनी रहे, आचरण में आती रहे। यद्यपि संस्कृत के वेद मन्त्र केवल ज्ञान का सागर ही नहीं आन्तरिक शक्तियों

का स्रोत हैं, पुंज है। मन्त्र सिद्धि मनुष्य को बहुत ऊंचाईयों तक ले जाती है। पर मन्त्र को समझाने की आवश्यकता है। इसीलिए विस्तृत व्याख्या से हर मन्त्र को भी सरल बनाकर जिन महापुरुषों ने परिश्रम करके रखा, उन्होंने हम पर बहुत उपकार किया है। उन्हीं के पद चिन्हों पर चलते-चलते यह हिम्मत हुई कि जो कुछ अध्ययन में अपने को ग्रहण करने को मिला उसे आगे और सीधी साधी भाषा में कह सकूँ। जो भी इस सीधी साधी भाषा में लाभान्वित होंगे, मन को सन्तोष होगा। कबीर जी कहते हैं तुम कहते कागज की लेखी, मैं कहता आखन की देखी। उनकी आंखन देखी को समझने के लिए भी हमें सरल भाषा चाहिए। कागज़ की लेखी मार्ग तैयार करती है मन को सम्बल देती है तो साधक आखन देखी तक भी पहुँचने का प्रयत्न करता है। इन्सान अपना अध्ययन, अपना अनुभव अपने विचार यदि संकलित करके लेखबद्ध करता है तो अपने मन के सन्तोष के साथ-साथ मार्ग का सृजन भी करता है, नेतृत्व भी करता है। विचाराभिव्यक्ति भी ईश्वर का वरदान है। हम इस वरदान को भी प्राप्त करें। ऐसा हर ऐसे व्यक्ति के लिए सोपान का काम करेगा। जो अपने जीवन को ऊंचा उठाना चाहता है। अन्यथा हम संसार के छोटे-छोटे झगड़ों में ही अपना जीवन का समय गंवा देंगे।



आज की पुकार

भारत अध्यात्म प्रधान देश है। इस धरती पर साधु सन्त संन्यासी तो होते ही हैं। देखा यह गया है कि चोर-चोर तो मौसैरे भाई बन जाते हैं पर मानसिक और बौद्धिक स्तर पर समुन्नत लोग आपस में विरोधाभासी बातें करते ही पाए जाते हैं। एक-दूसरे के ऊपर छींटाकशी करते हैं। दूसरे को गलत और अपने को ठीक साबित करने के प्रयत्न में लगे रहते हैं। जिससे जनता बौखला जाती है, कौन ठीक है, कौन गलत है, यह चर्चा ही चली रहती है। पहली बार रामदेव के साथ साधु संतों को एक मंच पर विराजमान देखकर आश्चर्य ही हुआ। जिस पर सबका स्वागत करते हुए रामदेव का सब सन्तों को बन्दना करते देखा। पहली वार रामदेव को ही सब सन्तों को एकता के सूत्र में बान्धते देखा। मत मतान्तर अनगिनत हैं सब अपनी-अपनी बोली बोलते हैं। अपने-अपने मत के गुरुमन्त्र हैं। मठ हैं, शिष्य हैं, अपने-अपने तौर तरीके हैं। बड़े-बड़े सन्तों को भी रामदेव की आलोचना करते भी सुना जाता है कुछ उपदेशक आए बोले मैं रामदेव से अच्छा प्राणायाम कर सकता हूँ। वह अनुलोम विलोम करते हुए हाथ की अंगुली से नाक दायें बायें दबाते हैं। मैं बिना दबाए अनुलोम विलोम कर सकता हूं। किसी को रामदेव का लोगों को प्राणायाम करवाना अच्छा नहीं लगता क्योंकि प्राणायाम का प्रयोग समाधिस्थ होने के लिए है न कि स्वस्थ बनाने के लिए। बचपन से ही प्राणायाम सीखने की इच्छा थी, सिखाने वाला कोई नहीं था। अपने आप किया तो गलत हो गया और सांस गड़बड़ा गई। बड़ी मुश्किल से ठीक हो पाई। फिर साहस नहीं हुआ दुबारा करने का। पर जब रामदेव जी को T.V. पर प्राणायाम सिखाते हुए देखा तो मैंने भी सीख लिया। प्राणायाम के लाभ मुझे भी प्राप्त हुए। विश्वास जागा और प्राणायाम लगातार प्रतिदिन करने लगे।

यह तो नियम ही हो गया कि सुबह पांच बजे से ही आस्था चैनल पर होते प्राणायाम और योगासनों का प्रोग्राम देख-देखकर हम परिवार के लोग भी करने लगे। लाभ भी सबको हुआ। पर खान-पान न सुधारने से कुछ न कुछ गड़बड़ भी हो जाती है। प्राणायाम से लाभ न हो ऐसा नहीं। मन को स्थिर करने में भी सहायता मिली। रामदेव प्राणायाम तक ही नहीं रुके। आयुर्वेद के ज्ञाता तो थे ही। आचार्य बालकृष्ण

जैसे सहयोगी भी हैं। भारतीय पद्धति से चिकित्सा के क्षेत्र में जो कार्य इन दो विभूतियों ने किया वह भारत के इतिहास का एक अद्वितीय पृष्ठ है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि एलोपेथी की अधिकांश दवाईयों के साईड एफेक्ट बहुत ही भयानक हैं। यद्यपि शल्य चिकित्सा और एमरजेन्सी में ऐलोपेथी जैसा कोई और इलाज नहीं है तथा आयुर्वेद के गुणों का भी कोई अन्त नहीं है। पतंजलि योगपीठ में बिना सरकारी सहायता के अनुसन्धान होते हैं। चिकित्सा की अतुलनीय प्रगति हो रही है। आयुर्वेद और योग प्राणायाम के मिले-जुले इलाज से लाखों लोग लाभ उठा रहे हैं। महंगे इलाजों से कईयों का छुटकारा हो गया और कई असाध्य रोग ठीक किए गए। प्रचार के माध्यम से भारतीय पद्धति का प्रचुर विकास भारत के लाभ के लिए है। निर्धनों को भारी महंगे इलाज से त्राण दिलाने के लिए है। इसमें कोई सन्देह ही नहीं जिससे प्रजा का हित हो, देश को लाभ हो उस कार्य को श्रेष्ठ ही कहा जा सकता है इसमें कोई दो राय नहीं है। इसके साथ ही देश का मानसिक और राजनैतिक स्वास्थ्य इतना बिगड़ चुका है कि स्वामी रामदेव का ध्यान जब इस तरफ गया तो गंगा मैय्या की सफाई का अभियान चला, भारत स्वाभिमान जागा, गौ रक्षा का नारा लगा और भ्रष्ट होती राजनीति पर ध्यान गया। आज यदि रामदेव जैसे महापुरुष न होते तो तीव्र गति से देश रसातल को जा ही रहा है। कोई रोक न पाता। देश के एक बहुत बड़े आन्दोलन का सूत्रपात हो गया। जागृति का शंख बज उठा। सबसे खूबसूरत बात यह है कि रामदेव किसी मत संम्प्रदाय को चिन्हित न करके सब को सम्मान देकर अपने साथ चलाते हैं। न ही योग प्राणायाम सिखाने में कोई मतभेद करते हैं। न ही देश के लोगों को जातियों में बांट-बांट कर लड़वाते हैं। वह सबको एक जैसा समझते हैं और वैसा ही व्यवहार करते हैं। जिससे सभी जातियों सम्प्रदायों के लोग उनकी बात ध्यान से सुनते हैं। जिन लोगों के स्वार्थ को उनके अभियान से धक्का लगता है वह वही लोग है जो देश में भ्रष्टाचार फैला कर देश का धन लूट-लूट कर विदेशों में पहुँचा रहे हैं। रिश्वत और काला बाजारी का धन्धा करते हैं। बड़े-बड़े डान हैं, स्मगलर हैं, उन्हीं लोगों के कारण आज गरीब और गरीब हो रहा है अमीर और अमीर हो रहा है। देश में भयंकर असन्तुलन आ चुका है। अपराधी राजा बन गए और शरीफ जेलों की सीखचों में बन्द हो गए। जो जनता के हित के लिए आगे आते हैं उनको धमकाया जाता है। चोरों को गले लगाया जाता है।

सब कुछ इन खुली आंखों के आगे हो रहा है। रामदेव जी से कहा जाता है तुम योग सिखाओ, राजनीति मत करो लेकिन जिस हृदय में राष्ट्र प्रेम की ज्वाला धधक रही हो वह खामोश कैसे बैठे। समर्थ स्वामी रामदास ने संन्यासी होकर शिवा

जैसा महान योद्धा तैयार किया तो औरंगजेब से टक्कर लेना हो सका। आज स्वामी रामदेव कई शिवा पैदा कर देगा और वह भारत देश की संस्कृति, सभ्यता, गौरव मान सम्मान, धन, जन सब की रक्षा के लिए जनता को तैयार कर देने का सामर्थ्य रखते हैं वह। और इसमें कोई दो राय नहीं कि कल के देश का सूर्य देश की जनता के लिए सत्य सुख समृद्धि लेकर आएगा जो पुकार स्वामी रामदेव दे रहे हैं उसे भारत का बच्चा-बच्चा जरूर सुनेगा और व्यवस्था परिवर्तन होगा। जो लोग आज रामदेव जी को गलत साबित करने का भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं वही कल उनकी जय-जय करेंगे। क्योंकि सत्य यही है कि देश से भ्रष्टाचार, अनाचार, बेईमानी, डाकाजनी, लोगों को वोटों के नाम पर लड़वाने की प्रवृत्ति, हकूमत में बने रहने के हथकण्डे, अज्ञानता, स्वार्थपरता, सब को दूर करके एक साफ, सुथरा वीर योद्धा चरित्रवान भारत बनाकर भारत के गौरव की स्थापना होगी। जितना बड़ा उद्देश्य, उतनी बड़ी, शक्ति उतना बड़ा साहस, आयोजन, बलिदान और सामर्थ्य होना ही चाहिए। विरोधी तो विरोध करेंगे ही, पर सत्य पथ के पथिक नहीं झुकने चाहिए, नहीं झुकने चाहिए। देश वही जिन्दा रहते हैं जिसके निवासी देश को प्रेम करते हैं। देश की आन पर मर मिटते हैं। संन्यासी होने का यह अर्थ कदापि नहीं है कि हम उदासीन होकर हिमालय की गुफाओं में गुम हो जाएं। सच्चा संन्यासी वही है जो अपना घर, माता पिता को छोड़कर सारे देश को, सारे विश्व को परिवार बना ले, सबके कल्याण का गीत भी गाए और कल्याण का मार्ग भी अपनाए। ऐसा निर्भीक योद्धा संन्यासी ही आज भारत का हित कर सकता है। केवल मंजीरे बजा बजाकर कीर्तन से काम नहीं चलेगा। भगवान् के घर में अध्यात्म विद्या के ज्ञाता तपस्वी से भी अधिक देश भक्त शहीदों का स्थान ज्यादा ऊंचा है। आज देश पुकार रहा है तो उस पुकार को बलपूर्वक उद्घोष कर रहे हैं योग ऋषि रामदेव जी महाराज। देश की पावन भूमि की देश के लोगों की रक्षा के लिए इस यज्ञ में आहुति देने को आह्वान कर रहे हैं वह। यदि देश के प्रति कुछ भी प्यार, कर्त्तव्य भाव है तो हम सबको इस यज्ञ में आहूत होने को तैयार होना होगा। जिन लोगों को रामदेव जी के उद्देश्य में या उनके कार्य करने के ढंग में सन्देह है वह बताए कि इससे श्रेष्ठ और क्या ढंग है, देश और धर्म की सेवा का। और यह भी सोचे कि जिस ढंग से, जिस कार्यप्रणाली से रामदेव आज रामदेव से बेहतर कर दिखाए। मैं विश्वास से कह सकती हूँ कि यदि कोई ऐसा करने की सामर्थ्य रखता है तो रामदेव उसके साथ हो जाएंगे और सारी जनता भी उस महापुरुष के संग चलेगी। क्योंकि देश भक्तों का एक ही स्वार्थ होता है देश का कल्याण। सेहरा किसके सिर बान्धना है यह तो समय सबको दिखा देगा। गद्दारों ने जिसे गद्दार कहा देश भक्तो ने उसे स्वतन्त्रता संग्राम कहा। झांसी की रानी को मारने

वालों ने समझा विद्रोहियों को मार कर उनकी विजय हो गई पर वास्तव में उस वीरांगना की शहादत भारत की स्वतन्त्रता का बीज बो गई। देश के शत्रु तो शत्रु हैं ही पर जो शत्रु नहीं, सज्जन हैं, उनकी विरक्ति शत्रुता से भी घातक है और उनकी स्वार्थपरता देश को रसातल में डुबा देने वाली है। हिमालय की गुफाओं में तप करते-करते जीवन समाप्त कर देने से वह संन्यासी अच्छा है जो स्वयं को साध कर जनता में उतर कर जनता के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है। ज्ञान का उजाला चारों तरफ फैला देता है। जो जितनी मात्रा में इस शुभ कार्य को करता है वह उतना ही धन्य है। जो हम लोग अपने घरों में अपने शारीरिक सुखों की खातिर जीवन बिता देते हैं हम देश की कोई सेवा नहीं करते। देश ही प्रथम है संन्यासी के लिए भी और गृहस्थी के लिए भी।



ईश्वर क्या नहीं करता

सब कहते हैं ईश्वर सर्वशक्तिमान है वह सब कुछ कर सकता है। पर क्या कुछ ऐसा भी है जो वह नहीं कर सकता ?

हां, है। ईश्वर अपने बनाए नियम नहीं तोड़ सकता, अन्याय नहीं कर सकता, पाप नहीं कर सकता, झूठ नहीं बोल सकता, चोरी नहीं कर सकता, बीमार नहीं हो सकता, गाली नहीं निकाल सकता और अभिमान नहीं कर सकता। और मनुष्य यह सब कुछ करता है इसलिए दुखी रहता है। वह अपने बनाए नियम तोड़ता है, अन्याय करता है, चोरी करता है। झूठ बोलता है। बीमार होता है, चालाकी करता है, धोखा देता है। इसलिए माया से त्रस्त हुआ सदा दुखी रहता है। जैसे ही मनुष्य ईश्वर के गुणों को धारण कर लेता है वह ईश्वर लगने लगता है। लोग उसे ईश्वर से ज्यादा चाहने लगते हैं क्योंकि सब कुछ करते हुए भी ईश्वर दिखाई नहीं देता और व्यक्ति पूरी तरह से दिखाई देता है। बात करता है, सुनता है सबकी राम कहानी सुनता है। सुझाव देता है। घबराए हुए डांवाडोल मन को धैर्य देता है। और सामने वाला सन्तुष्ट होता है उसे अपने कष्टों दर्दों की दवा समझता है। ऐसे व्यक्तियों का होना समाज सेवा के लिए, मार्ग प्रदर्शन के लिए बहुत आवश्यक है।

पर कठिनाई यह है कि यह संसार इतना घबराया हुआ है कि पहचान कठिन हो गई है। ऐसे बहुत से मिलते हैं जो होते कुछ हैं, दिखाई कुछ और देते हैं। आप समझते कुछ हैं, निकलते कुछ और हैं। ठीक को गलत और गलत को ठीक बना देते हैं। इसी में सारी गड़बड़ हो जाती है। जिससे रोज़ नयी समस्याएं खड़ी हो जाती हैं। फिर भी मन्थन करना पड़ता है। समुद्र मन्थन की कथा से इस विषय को ज्यादा अच्छी तरह से समझा जा सकता है। मानव का अपने अन्तर का मन्थन मानव को देवत्व तक पहुंचा देता है। यही मन्थन इस घनघोर जगत का भी करना पड़ता है। मानवों की भी लाखों किस्में हैं। मन्थन बड़ा कठिन है फिर भी कुछ महान् आत्माएं

जब नितर कर ऊपर आ जाती हैं तो सत्यासत्य का निर्णय आसान होने लगता है। यह संसार ऐसी फिसलनी घाटी है कि अधिकतर लोग ऊपर चढ़ने के उपक्रम में नीचे गिर जाते हैं। कोई-कोई भाग्यवान दृढ़ व्रतधारी शिखर को प्राप्त करता है। कथनी में अच्छाई बुराई का अन्तर भले ही सब कोई भली भान्ति कर ले, पर करनी बड़ी कठिन है। जो करनी में पार उतर सके ऐसा केशव कोई-कोई होता है। फिर उनमें भी कोई-कोई अपनी वाणी को इतना प्रभावशाली बना सकता है कि जिससे सत्य विद्या को दूसरों को समझा सके। साधक कई बार धोखा भी खा सकता है, सतर्क रहना पड़ता है कि हम अपनी आत्मा के सामने मार्गदर्शक की असलियत पहचान लें। क्योंकि मानव के कई चेहरे होते हैं। ईश्वर चेहरे नहीं बदलता, मानव बदल लेता है अतः ईश्वर से ही यह विनती करनी होती है कि हमारे सम्पर्क के ऐसे लोग ही हमें प्राप्त हों जो हमें सत्य मार्ग का पथिक बना सकने में समर्थ हों। हमारे सद् प्रयत्न ही ईश्वर की कृपा प्राप्त करने में हमारे सहायक हो सकते हैं। वह न्यायकारी सत्य स्वरूप, सत्प्रेरक और सदा स्वस्ति का पालक। हमारी धारणाएँ शुभ होंगी तो अवश्य सहायता करेगा। इसलिए उसी की कृपा की सदैव इच्छा सब करें।



मुक्ति निबन्ध

अहं निर्विकल्पों निराकार रुपो विभमुर्व्याप्य सर्वत्र
सर्वेइन्द्रद्यणी सदा में समत्वं न मुक्रि न बन्ध चिदानन्द
रूपा शिवो हम् शिवो हम्।

स्वामी शंकराचार्य ने आत्मा के रूप का वर्णन किया है। बार-बार ध्यान 'न मुक्ति न बन्ध' शब्दों की तरफ जा रहा था। कि मुक्ति और बन्ध के बीच की स्थिति कब कैसे समझूं जीव मात्र शरीरों के बन्धन में है। मुक्ति के लिए कई-कई जन्म लग जाते हैं मुक्ति नहीं हो पाती। जीव मरना भी नहीं चाहता क्योंकि जीवन जीना अच्छा लगता है या ज्यूं कहें कि मृत्यु के कष्ट का स्मरण करके मरने से घबरा जाता हैं पर इस जीवन को बन्धन के रूप में देखता है। बार-बार प्रार्थना करता है हे भगवान मुझे इस जन्म मरण के बन्धन से छुड़ा। जीवन के मोह में भी फंसा रहता है। जानते हुए भी कि यह मोह मिथ्या है। जीव शरीर नहीं, वस्तु नहीं, हवा नहीं, पानी नहीं। इस संसार का कोई पदार्थ नहीं पर सबके मोहपाश में बन्धा रहता है। यह साजो सामान यह रिश्ते नाते यह शुभ अशुभ जीव नहीं है फिर भी सबसे जुड़ा क्यों हुआ है। जब जुड़ा है तो बन्धन में है ही और यदि लाखों प्रयत्न करके छूट गया, मुक्त हो गया तो फिर न मुक्ति न बन्ध क्या अर्थ ? ऐसी कौन सी स्थिति है जो न मुक्त है न बन्धन है वायु गुब्बारे फानूस है सब जगह इसकी गति है। आकाश मुक्त है सर्वत्र फैला हुआ है। जल मुक्त है जहाँ चाहे बहता रहता है, अग्नि मुक्त है कहीं भी प्रकट हो जाती है। पर जीवात्मा कैसे मुक्त हो सकता है। वास्तव में ध्यान से सोचें तो वायु मुक्त है पर जब वायु को किसी जगह बान्धा जाए, जैसे किसी पात्र में या किसी गुब्बारे फानूस में या किसी शरीर में प्राणमय में तो उस दायरे में वायु का बन्धन होता है इसी तरह आकाश, जल, अग्नि को भी किसी घेरे में बान्ध कर रोका जाता है। वायु मुक्त भी है बन्ध भी, आकाश मुक्त है बन्ध भी जाता है, अग्नि मुक्त है पर बन्धन में भी आ जाती है। वास्तविकता में सोचें तो न यह मुक़्त है न बन्धन में। वायु वायु है, अग्नि अग्नि है, जल जल है, आकाश आकाश है फिर भी यह सब किसी शक्ति के अधीन हैं मुक्त भी हैं बन्धे हुए भी हैं। मुक्त नहीं भी हैं बन्धे हुए रहते भी नहीं। क्या आत्मा भी इसी प्रकार है न मुक्त न बन्ध। पृथ्वी ठोस

है निरन्तर अपने घेरे में चक्र लगाती है, निराकार नहीं है साकार है और पृथ्वी तत्व से जुड़कर वायु, आकाश, अग्नि, जल को साथ-साथ लेकर यह निराकार आत्मा जीवात्मा बनकर शरीर धारण करके साकार हो जाती है फिर मृत्यु इसे निराकार बना देती है फिर जन्म होता है नया शरीर धारण करके साकार हो जाती है। लगता है कभी मृत्यु में निराकार कर दिया और जन्म में साकार कर दिया। वास्तव में जीवात्मा का अपना स्वरूप बाकी तत्वों की तरह न मुक्त है न बन्धन में। इस स्थिति में कह सकते हैं कि जैसे जीवात्मा से सम्बन्धित कोई भी पदार्थ जीवात्मा नहीं है इसी तरह आत्मा तो बस आत्मा है उसके सभी अन्य सम्बन्ध क्षणिक हैं, असत्य हैं, क्षण भंगुर हैं बन्धन और मोक्ष भी। क्योंकि मुक्त होकर भी फिर बन्धन आ सकता है। पर आत्मा अपने आप में बन्धन भी नहीं मुक्त भी नहीं। यह सब स्थितियां हैं प्रकृति के सम्पर्क से, संसर्ग से उत्पन्न होने वाली स्थितियां। स्थितियों की पराधीनता आत्मा का स्वरूप नहीं है इसीलिए स्वामी शंकराचार्य जी का कथन समझ में आया कि जैसे आत्मा रागद्वेष, लोभ, मोह कर्म, अकर्म हाथ पांव आंख, नाक कुछ नहीं है इसी तरह आत्मा न तो मुक्त है न बन्धन में है। सब स्थितियों से ऊपर ईश्वर का अंश है और उस अंश में ही वापिस चले जाना इस आत्मा की तड़प है। सब कुछ ओढ़े हुआ है। ओढ़े हुए को उतार देना या लपेटे रहना। सब इसके अपने कर्म पर निर्भर करता है। ईश्वर सत चित्त आनन्द स्वरूप है। आत्मा ईश्वर का अंश है। तो आत्मा का स्वरूप भी सदचित आनन्द स्वरूप है। प्रकृति माया के सम्पर्क से आत्मा बन्धन में आती है। जिससे सुख दुख हानि लाभ, बन्ध, मोक्ष कई स्थितियों से गुजरती है, कभी बोध की स्थिति में कभी अज्ञानता के पाश में। पर सब कुछ ओढ़ा हुआ है। जो जैसा ओढ़ता है वैसा ही दीखने लगता है। जब तक ओढ़ने का सिलसिला चलेगा तब तक अपने स्वरूप को न समझ सकेंगे। सब कुछ पार करके ही जीवात्मा अपने सतचित्त आनन्द स्वरूप को प्राप्त कर सकेगा। अन्यथा एक कैद से छूटे तो दूसरा पिंजरा दूसरी से छूटे तो तीसरा पिंजरा। इसी का नाम संसार है। हम मुक्त नहीं हैं क्योंकि कर्मों का फल भोगने में परतन्त्र हैं। हम बद्ध भी नहीं हैं क्योंकि हम कर्म करने में स्वतन्त्र हैं। बद्ध मुक्त स्थितियां है स्वरूप नहीं।



कर्म से कर्म को काटा जाता है

यह एक शाश्वत नियम है कि जैसा कर्म हम करेंगे वैसा ही फल हमें प्राप्त होगा। बबूल का पेड़ बौने से बबूल के फल और आम का पेड़ बौने से आम के फल। कोई कर्म तुरन्त फल देता है, कोई देर से देता है, कोई संचित हो जाता है। कोई प्रारब्ध बन जाता है। कोई कर्म नष्ट नहीं होता। चोरी की तो सजा किसी न किसी ढंग से मिलेगी ही। किसी अभावग्रस्त की सहायता की तो उसके लिए भी ईश्वर के विधान से शुभ फल भी तैयार होगा ही।

हम यहां इस चर्चा के लिए चिन्तन करने का प्रयास कर रहे हैं कि यदि कोई कर्म ऐसे कर दिया जो हमारी बड़ी भारी भूल हो, पश्चात्ताप हो। हम अपने किए कर्म को सुधारना चाहते हैं तो कैसे हो। परीक्षा में एक बार फेल हो गए तो परिश्रम करके दूसरी बार सफल होने का प्रयत्न करें। कोई-कोई वस्तु बना रहे हैं, नहीं बन पा रही उसे बार-बार सुधार कर बनाने से आखिर में ठीक ढंग से बनाने में सफल हो सकते हैं। बिगड़े स्वास्थ्य को परहेज से औषधि सेवन से, उपचार से दुरूस्त किया जा सकता है। कपड़ा सिलते-सिलते अच्छे से अच्छा कपड़ा सिल सकता है। विमूढ़ कालीदास विद्वान बन सकता है। परन्तु एक व्यक्ति मुर्गी या बकरों को मार कर मांस बेचने का धन्धा करता है। बूचड़ खाना खोल लेता है। वेश्यालय चलाता है तो उसको इन्हीं कर्मों को करने में निपुणता प्राप्त होगी। और इन कामों के करने से उन्हें इन्हीं कर्मों का फल भी मिलेगा। वैसे तो इन कामों को करके वह लोग धन कमा रहे हैं। खूब पैसा बना रहे हैं। महल खड़े कर रहे हैं। सम्पन्न हो रहे हैं तो कैसे कहें कि उनको उनके कर्मों का फल मिल रहा है ? कहते हैं बहुत तप करके एक राजा बनता है। सिंहासन प्राप्त करता है। परन्तु सिंहासन पाकर अपने घमण्ड में वह प्रजा पर अत्याचार करता है। भ्रष्टाचार फैलाता है। आतंक फैलाता है तो कहते हैं यदि उसे इसी जन्म में अपने कर्मों की सजा नहीं मिलेगी तो अगले जन्म में वह सूअर, कुत्ता या सर्प ऐसी ही किसी योनि को प्राप्त करेगा। तपस्या से राजा बना तो राजा से चण्डाल बन जाएगा। यह उसके प्रारब्ध कार्य होंगे। मुर्गियां काटने वाला स्वयं कई बार मुर्गियां बनकर कटेगा। बार-बार जन्मेआ। बार-बार कटेगा। कर्म के फल से बच नहीं सकता। वह परमात्मा ऐसा तमाशबीन है कि केवल देखता रहता है बुरे कर्म करता हुआ भी, फल पाता हुआ भी। अच्छे कर्म करता हुआ भी, सुख पाता हुआ

भी। उसे न हमारा दुःख न हमारा सुख प्रभावित करता है। वह तो निर्लेप है आकाश की तरह बादल आए घटाएं छाई बरसी, तूफान बरसे और फिर सब साफ, एक भी दाग बाकी नहीं। परन्तु मनुष्य जब अपने दुष्कर्मों से असह्य कष्टों के भंवर में फंस जाता है तो अपनी दुर्दशा पर तड़पता है। वह ईश्वर को गाली गलौच भी करेगा तो और कर्मों के बन्धन बना लेगा बच तो नहीं सकता। सवाल तो बचने का है कैसे बचे ? कर्मों का फल तो टल नहीं सकता। पर बचने का उपाय भी उस विधाता ने बना रखा है यदि हम उस पर ध्यान दे सकें तो। सब प्रकार के दुख, कष्ट पीड़ा के निवारण के लिए प्रथम तो है उसी का स्मरण, चिन्तन प्रार्थना, विनय और पश्चात्ताप। हम अपनी जीवन धारा के रुख को मोड़ लें। जो जल रूपी प्रवृत्तियां गन्दे नालों में बह रही हैं उनका मुँह आत्म गंगा सागर की तरफ मोड़ लें। इस प्रथम चरण में ही मन को कुछ-कुछ शान्ति का आभास होने लगेगा। गलतियां तो मनुष्य बेहिसाब करता है पर यह नहीं सोच सकता कि मैं गलत कर रहा हूँ अपनी सोच ही सबसे ठीक लगती है। उसे पहले यह अहसास होना बड़ा जरूरी है कि वह अपनी गलती को कमजोरी को समझ सके, अहसास कर सके। अहसास होगा तो गलती सुधारने का प्रयास भी करेगा। ईश्वर के नाम मे ही इतनी शक्ति है मनुष्य का कष्टों से त्रस्त मन थोड़ी-थोड़ी ठण्डक महसूस करने लगता है। यह नाम तो निरन्तर चलता ही रहना चाहिए। सत्संग में बैठे महापुरुषों की बातें सुनें, सत्य असत्य का विवेचन करें। अच्छे कर्मों का स्मरण ही नहीं करें उनमें स्वयं को संलग्न कर दें। जिसको जैसी सहायता चाहिए हम आगे होकर उसको सहारा दें। अपने धन का सदोपयोग करें। दूसरों के कष्ट में उनका आसरा बनें, ईमानदार बनें, सत्य को अपनाएं, दूसरों से प्रेम करना सीखें, यज्ञ करें, दान करें, बड़ों को सम्मान देवें, छोटों को वात्सल्य देवें। हम जितना ही स्वयं को शुभ कर्मों की तरफ मोड़ते चले जाएंगे उतना ही हमारा मन शान्त होता चला जाएगा, दुखों की जलन मिटेगी, जो नष्ट होना भी उसकी पीड़ा को हम कम अनुभव कर पाएंगे। ईश्वर की गोद बड़ी सुखदायिनी है वह अपने प्रेम करने वालों की तरफ से बेखबर नहीं रह पाता उसे बस एक ही भूख है प्यार की। जब ईश्वर को हम प्रेम से याद करेंगे तो प्रत्युत्तर भी जरूर मिलेगा और सभी कर्मों के फलों का बोझ हलका-हलका लगेगा। हम अपने अच्छे कर्मों के अभिमान में भी फूले-फूले न रहकर सब अच्छे कर्म भी उसके आगे रख देंगे। वह तो सबको देता ही देता है। उसे लेने की आवश्यकता नहीं पर जो अपना सर्वस्व उसे दे देता है वह कर्मों का फल चलते हुए भी मन से सुखी हो जाता है। यही एक ढंग है जिससे कर्म को कर्म से काटा जा सकता है। अथवा कोई मार्ग नहीं।



मन का सफर

मन आत्मा का द्वारपाल है। कहते है 'मन चंगा' ते कठौती में गंगा कितनी बड़ी-बड़ी बातें कर लें। पर जब तब यह द्वारपाल काबू में न आए आत्म बादशाह के दरबार में घुसने का रास्ता ही नहीं मिल सकता। मन की यह कहानी है कि अव्वल तो यह किसी की नहीं सुनता अपनी ही बजाता है। बड़ी मुश्किल से सुनने लगे तो हर सेकिण्ड के बाद यह इधर-उधर भागने का प्रयत्न करता है। किसी तरह लगने लगे तो जल्दी-जल्दी उसमें से लाभ हानि तलाश करने लगता है। यदि लाभ तुरन्त न दीखे तो उचाट हो जाता है। आचार्य कहते हैं तो भी लगे रहो। शुरू-शुरू में आप प्राणायाम करें तो लगता है, कुछ भी नहीं हुआ क्यों करें प्राणायाम हवन करें तो मन्त्रों की समझ भी नहीं आती और जैसे तैसे कर भी लिया तो लगता है ही सामग्री का खर्चा है होने वाला तो कुछ नहीं। पर यदि निश्चय कर लो और लगे रहो साथ में आचार्य लोगों की बात भी मानते रहो तो धीरे-धीरे आनन्द आने लगता है। अन्दर मन के स्तर पर लाभ होने लगता है। उसका भी अहसास होने लगता है। आरम्भ में जो मंत्र समझ नहीं आते। धीरे-धीरे वह याद होने लगा है फिर अर्थ जानने का प्रयास करते रहो तो उनका मन पर थोड़ा प्रभाव होने लगता है। फिर चस्का सा लग जाता है वस बैठो मन्त्र चलने लगता है, प्राणायाम होने लगता है। पहले जो गल फांसी सा लगता है, बाद में अपने ही भीतर से बार-बार करने को जी चाहता है। बहुत से कार्य सहज होने लगता हैं। मन की स्थिति में अन्तर आता है। आप दूसरों की कही बात को बुरा मानने के स्थान पर उसमें से भी कोई अच्छा तलाशने लगते हैं। क्रोध घट जाता है, मोह का बन्धन भी कम हो जाता है। वासनाएं भी सताना छोड़ देती हैं। कई समस्याएं स्वयंमेव सुलझने लगती हैं। अच्छे महापुरुषों के संग प्राप्त होता है। मन प्रसन्न रहता है। अश्लील से घृणा होती है। विचार सुधरने लगते हैं और यह द्वारपाल जो सुनता ही नहीं था आपसे आंखें मिला कर बात करने लगता है। अच्छे स्वस्थ ढंग से कहता है यह मन चलो प्रभु के घर चले शान्ति मिलेगी। परिवर्तन बड़ा सहज और चुपचाप होता रहता है। समस्याएं आती हैं आप शान्ति से उन पर विचार करते हैं। दिखावा करने को मन नहीं करता। परिवारों में शान्ति आती है। सादगी में मन रमता है चंचलता घटती है। होते-होते यह प्राणायाम, यह जप

सन्ध्या, यह सत्संग इतनी शान्ति देने लगते हैं कि वहां से हटने को ही मन नहीं करता। मनुष्य आगे बढ़ता जाता है किसी का उत्कर्ष ईर्ष्या पैदा नहीं करता। धीरे-धीरे यह मन इतना अच्छा। प्यारा बन जाता है कि इसे अपने राजा का साथ छोड़ने का मन नहीं होता। कोई रोके भी तो जैसे पंछी जहाज को पुनि जहाज पर जाए। और यही मार्ग है मन के शिव संकल्प का, आत्मा के सफर को आसान बनाने का और ज़िन्दगी को पूर्णतया आनन्दमय बनाने का। अब व्यक्ति ऐसे मुकाम पर आ जाता है कि वह चाहता है जो मुझे मिला वह सबको बांटे। जो मैंने चखा वह सबको चखाऊं। जो मैंने देखा वह सबको दिखाऊं। आत्म विभोर करने वाला भी मन है और संसार की तरफ लुब्ध दृष्टि बनाने वाला भी मन हैं। बस आप इस मन की बागडोर सम्भाल कर चलाईए यह अपने सारे नौकर चाकरों की (इन्द्रियों को) भी आपका दास बना देगा। यह आपका महामन्त्री बनकर आपका रास्ता (ऊपर उठने का) सुगम कर देगा यह मन का मीत ईश्वर के घर तक ले जाएगा।

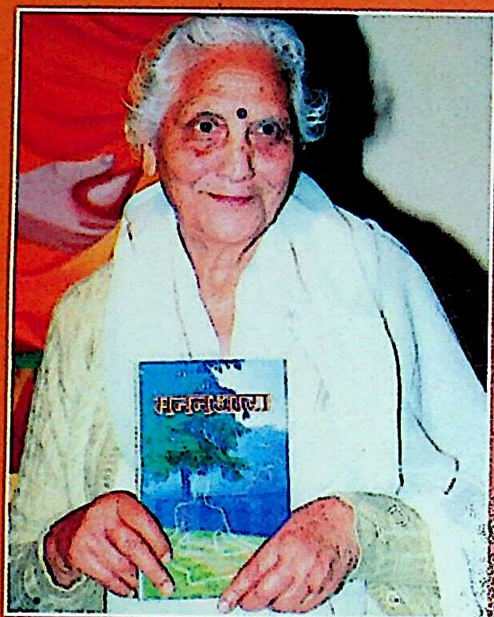


उपसंहार

लिखते समय जिस विषय पर लिख रहे होते हैं उसी पर ध्यान केन्द्रित होता है। बाद में जब इन लेखों को पढ़ती हूँ तो विविध विषयों पर होती हुई समीक्षा पर विस्तृत रूप से विचारने का मौका मिलता है। वास्तव में यह छोटे-छोटे प्रश्न हम सब लोगों के भीतर उठते हैं अधिकतर हम उत्तर की खोज में भटक जाते हैं। यदि गहरे में डूब कर उत्तर खोजें तो भीतर से ही उत्तर भी प्राप्त हो सकते हैं। क्योंकि यह जीवन एक बहुत गहरी प्रयोगशाला है। विचार न करें तो कुछ भी नहीं है पर यदि करें तो मनुष्य की ही बुद्धि रत्न गर्भा हो जाती है। इस बुद्धि के बल पर ही संसार में ज्ञान विज्ञान की इतनी उन्नति होती है और बुद्धि के बल पर ही मनुष्य विनाश का भी सृजन कर लेता है। परमाणु शक्ति की खोज करने वाले मस्तिष्क ने इस शक्ति को खोज निकाला पर उलटी मति से चलने वालों ने उसी शक्ति से विनाश कारी अस्त्रों का सृजन भी कर दिया। आज इस विनाशकारी खोज ने एक तरफ ऊर्जा से होने वाले लाभों का जाल बिछा दिया दूसरी तरफ इससे होने वाले विनाश की आशंका ने संसार को भयभीत भी कर दिया कि यदि कल को युद्ध में इस शक्ति का प्रयोग होने लगा तो यह पूरा संसार हिरोशिमा या नागासाकी की तरह दहक उठेगा। विमल विमर्श द्वारा यही प्रयत्न करने का है कि हम अपनी मानवीय शक्तियों का विकास अपने और संसार के कल्याण के लिए करें। विमर्श के बिना बुद्धि राक्षसीय हो सकती है निरन्तर मनन क्रिया द्वारा प्रक्षालण करते-करते बुद्धि को स्फटिक की भान्ति निर्मल, प्रांजल, पारदर्शी बना सकते हैं। चित्त को शुद्ध करके उन्हीं कर्मों में स्वयं को संलग्न करें जो हमें उर्ध्व पथ की तरफ ले चलें हम ईश्वर से ईश्वर को, ईश्वर की कृपा को, ईश्वर की शक्तियों को, सामर्थ्य को प्राप्त करें ताकि हमारा हर पग स्वस्ति के लिए, शक्ति के लिए, कल्याण के लिए, आगे बढ़ता चला जाए। चलते-चलते हम अमरत्व की ओर दिन प्रतिदिन बढ़ते जाएं। यही मोक्ष है, यही वेद आज्ञा है, यही ईश्वर की परम प्रेरणा है। ज्यूं-ज्यूं हम ज्योति पथ के पथिक बनते जाएंगे त्यूं-त्यूं हमें यह महसूस होगा कि हमारा स्वरूप बन्ध और मोक्ष से भी परे है और अनन्त से भरपूर है। आनन्द परमानन्द का स्रोत है।

कृष्णा गुप्ता





कृष्णा गुप्ता

मेरी पूर्व प्रकाशित पुस्तकें

1. उच्छ्वास
2. चिन्तन सुधा
3. दिव्य क्षण
4. इन्द्र धनुषं
5. मनन धारा
6. कलियां और फूल

और यह सातवां पुष्प 'विमल विमर्श'


9 788192 845906